जनवरी–मार्च, 2024

ISSN- 2455-1309

साहित्य भारती

छायावाद विशेषांक

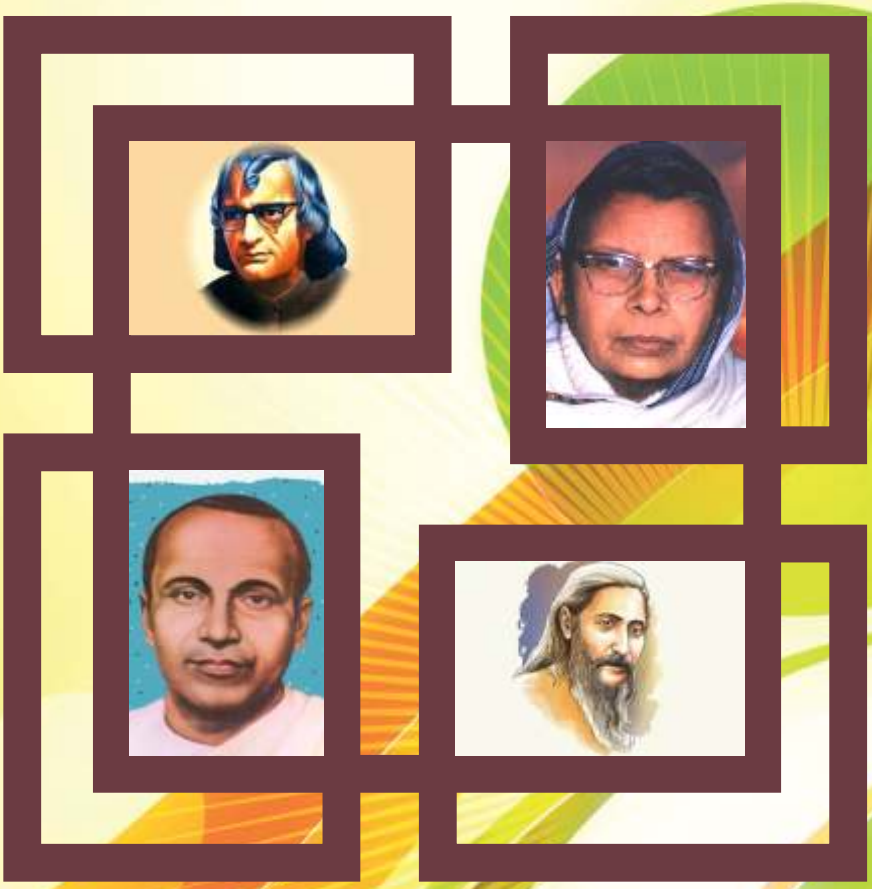

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

मेरी भूलों से मत उलझो !

-भगवती चरण वर्मा

मेरी भूलों से मत उलझो, जनम जनम का मैं अज्ञानी !
काँटों से निज राह सजाकर,
मैंने उस पर चलना सीखा,
श्वांसों में निःश्वास बसाकर
मैंने उस पर पलना सीखा,
गलना सीखा मैंने निशि-दिन
निज आँखों का पानी बनकर,
अपने घर में आग लगाकर
मैंने उसमें जलना सीखा।
मुझे नियति ने दे रक्खी है पागलपन से भरी जवानी !
मेरी भूलों से मत उलझो, जनम जनम का मैं अज्ञानी !
लगातार मैं पीता जाता, भरता जाता मेरा प्याला !
मैं क्या जानूँ क्या है अमृत ?
क्या जानूँ क्या यहाँ हलाहल ?
खारा-खारा नीर उदधि का,
मीठा-मीठा है गंगा-जल !
सुनने को तो सुन लेता हूँ,
कड़ुए-मीठे बोल जगत के,
तड़प-तड़प उठती है बिजली,
बरस-बरस पड़ते हैं बादल !
कौन पिलाने वाला, बोलो, कौन यहाँ पर पीनेवाला ?
लगातार मैं पीता जाता, भरता जाता मेरा प्याला !

साहित्य भारती

प्रबन्ध सम्पादक
vkj-ih-flag

सम्पादक
डॉ. अमिता दुबे

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

साहित्य भारती

त्रैमासिक
वर्ष : 27, अंक : 1
जनवरी–मार्च, 2024
छायावाद विशेषांक

सम्पादकीय कार्यालय
राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन
6, महात्मा गांधी मार्ग,
हजरतगंज, लखनऊ–226 001
email : sahityabharti1976@gmail.com

पत्रिका प्राप्ति–स्थान
पुस्तक विक्रय–केन्द्र
राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन
6, महात्मा गांधी मार्ग,
हजरतगंज, लखनऊ–226 001
दूरभाष : 0522–2614470

साहित्य भारती शुल्क

एक प्रति : रु0 25.00, वार्षिक शुल्क : रु0 100.00
आजीवन शुल्क : रु0 3,000.00
सदस्यता शुल्क : निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के नाम से ड्राफ्ट/एटपार चेक द्वारा

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में लेखकों के विचार उनके अपने हैं,
उनके विचारों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है।

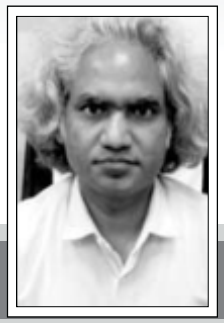

दो शब्द

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की स्थापना 30 दिसम्बर, 1976 को कतिपय महत्वपूर्ण उद्देश्यों को दृष्टिगत रखकर की गई थी। हिन्दी संस्थान राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन के नाम पर स्थापित हिन्दी भवन में स्थित है जो साहित्यकारों की सेवा के लिए सदैव तत्पर रहता है

संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य भारती त्रैमासिक पत्रिका के वर्ष 27 के प्रथम अंक अर्थात जनवरी - मार्च 2024 को 'छायावाद विशेषांक' के रूप में प्रकाशित करते हुए अत्यन्त हर्ष की अनुभूति हो रही है। इस त्रैमास में छायावाद के चार आधार स्तम्भों में से जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा व सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की जयन्ती होती है, इसलिए इन तीनों मूर्धन्य रचनाकारों के साथ-साथ सुमित्रानंदन पंत जिनकी जयन्ती मई माह में होती है, का विशेषांक के रूप में स्मरण करने का यह समुचित अवसर प्रतीत होता है।

संस्थान द्वारा आयोजित 30-31 जनवरी 2023 को छायावाद पर केन्द्रित दो दिवसीय संगोष्ठी में सम्मिलित हुए विद्वानों द्वारा अत्यन्त महत्वपूर्ण विचार अपने व्याख्यान में दिए गए थे, जिन्हें अनुरोध कर आलेख के रूप में प्राप्त किया गया और अब उन्हें विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। साथ ही साथ पाठकों की रुचि के अनुसार कहानी, कविता आदि को भी सम्मिलित किया गया है। साहित्य की समृद्ध परम्परा में अन्य भारतीय भाषाओं की महत्वपूर्ण रचनाओं का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत कर हिन्दी के पाठकों का ज्ञानवर्द्धन करना हमारा उद्देश्य है आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि साहित्य भारती का यह विशेषांक आप सबको रुचिकर प्रतीत होगा।

नव वर्ष की शुभकामनाएँ !

आर.पी.सिंह
आई.ए.एस.
निदेशक

सम्पादकीय

सन् 1850 के बाद से ही हिन्दी कविता में एक महान परिवर्तन होने लगा था। प्रथम महायुद्ध के बाद परिवर्तन का एक चक्र पूरा हो गया। हिन्दी कविता संक्रान्ति और पुनरुत्थान की मंजिलों को पार कर इस युग में विद्रोह के रास्ते पर आगे बढ़ी। यह विद्रोह देश की आर्थिक परिस्थितियों के कारण उत्पन्न हुआ और राजनीति, समाजनीति, धर्म, दर्शन, साहित्य-कला सब में वह विविध रूप धारण करके सामने आया।

छायावाद नवीन चेतना और क्रान्ति का युग था। इस युग में धर्म, समाज, राजनीति और साहित्य आदि सभी क्षेत्रों में क्रान्ति की ज्वाला बड़ी तेजी से भड़क रही थी। छायावाद हिन्दी साहित्य में एक विद्रोह का रूप धारण कर आया। साहित्य में भी विद्रोह समय-समय पर सदैव होते रहे हैं इतिहास इसका साक्षी है छायावादी चिन्तन पद्धति के उदित होते ही चिन्तन के क्षेत्र में स्वतंत्रता, भावयोग, अनेकरूपता, कल्पना और विद्रोह स्वतः उठ खड़े हुए। काव्य के क्षेत्र में एक भव्य जागृति आयी और इसी भव्य जागृति को विद्वानों ने 'छायावाद' नाम दिया यद्यपि यह नाम हँसी उड़ाने के भाव से कविता न होकर उसकी छाया है, कहकर दिया गया था, परन्तु आगे चलकर छायावादी कवियों और आलोचकों ने यही नाम स्वीकार कर लिया। इसी निरर्थक नाम में अर्थ भी आ गया और गरिमा भी आ गयी। मानव अनुभूतियों की छाया ही इस चिन्तन धारा में सर्वत्र परिलक्षित होती है।

प्रसिद्ध साहित्यकार-कवयित्री महादेवी वर्मा के शब्द छायावाद को और अधिक स्पष्ट करते प्रतीत होते हैं-

'छायावाद को छायामी को आघात पहुँचाने के लिए यह प्रयोग ऐसा ही है जैसा आकाश के रंगों को काटने के लिए दो धार वाली तलवार चलाना, जो एक ओर चलने वाले के हाथ थकाती रहती है और दूसरी और सभी प्रवृत्तियों को चोट पहुँचती है। वे रंग तो मनुष्य की अपनी दृष्टि में घुले-मिले हैं। छायावाद युग की नारी, पुरुष के सौन्दर्यबोध, स्वप्न आदर्श आदि का प्रतीक है।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका 'साहित्य भारती' का यह अंक छायावाद को केन्द्र में रखकर तैयार किया गया जिनके माध्यम से उन पृष्ठों को पलटने का अवसर हमें मिला जिनको यदा-कदा स्मरण किया जाता है।

माँ सरस्वती के प्रकट्य दिवस एवं रंगबिरंगी होली की अनन्त शुभकामनाएँ निराला जी के शब्दों में कहें तो-

सखी वसन्त आया।
भरा हर्ष वन के मन,
नवोत्कर्ष छाया।
अनन्त शुभकामनाएँ !

डॉ. अमिता दुबे
प्रधान सम्पादक
मो0- 9415551878

साहित्य भारती

अनुक्रम

आलेख

जयशंकर प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना	: डॉ0 कृष्णाजी श्रीवास्तव	01
जीवन सत्य के कवि जयशंकर प्रसाद	: डॉ0 वशिष्ठ अनूप	06
जयशंकर प्रसाद कृत विरहकाव्य आँसू	: डॉ0 वर्षा अग्रवाल	11
महादेवी वर्मा के काव्य में विरह-वेदना	: डॉ0 सत्य प्रकाश पाल	15
महादेवी वर्मा के रेखाचित्र	: स्नेह सुधा	18
निराला का कथा साहित्य	: डॉ0 अमिता दुबे	23
सुमित्रानन्दन पंत की कविता में अध्यात्म	: डॉ0 सत्येन्द्र कुमार दुबे	33
चित्र-काव्य और सुमित्रानन्दन पंत	: डॉ0 बिनय षडंगी राजाराम	38
सोहनलाल द्विवेदी का बाल साहित्य	: दिविक रमेश	47
राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी	: डॉ0 विजयानन्द	57
नागार्जुन की काव्य संवेदना	: डॉ0 अभिषेक शर्मा	61

कहानी

साढ़ेसाती	: कृष्णबिहारी	64
प्रेम-पत्र	: सुभाष चंद्र गांगुली	68
अपराजिता	: रजनी गुप्त	75
मृगमरीचिका	: सुधा जुगरान	80
अद्‌भुत नर्सरी	: सुनीता अग्रवाल	89
भरोसा	: ऋषि कुमार भट्‌टाचार्य	92

कविता

तीन रंग होली के	: प्रेमचन्द्र सैनी	95
शांतिनिकेतन के बूढ़े वृक्ष	: प्रोफेसर हेमराज मीणा	96
सोने जा रहा हूँ	: अवधेश कुमार	97
वादों का विहान, तपती धूप, जीवन का बोध होता है	: प्रदीप बहराइची	99

बादल का उपकार	: डॉ0 रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर'	100
हमारा घर	: राधेश्याम शुक्ल	101

अन्य भारतीय भाषाओं से

पालटा बाघ (ओड़िआ)	मूलः डॉ0 दाशरथि भूयाँ भावा0 डॉ0 भगवान त्रिपाठी	102
नन्हा तारा, देवी की देह, देखना पल भर में किस तरह, धुआँ, स्वप्न देखने वाले, (ओड़िआ)	मूलः अपर्णा महांति भावा0 राधू मिश्र	106

लोक साहित्य

भोजपुरी के लोकप्रिय लोकगीत	: डॉ0 अनिल कुमार विश्वकर्मा	110

विचार

नारी उत्थान और गांधी जी	: डॉ0 नन्द किशोर साह	114
प्रभु का सतत् स्मरण करें	: डॉ0 चितरंजन बिस्वास	117
संस्थान समाचार		120

रचनाकारों से

- *'साहित्य भारती' त्रैमासिक के लिए साहित्य की विभिन्न विधाओं की रचनाएँ, लेख, कहानी, कविता आदि आमंत्रित हैं।*
- *रचनाएँ स्पष्ट, हस्तलिपि में अथवा टंकित कागज के एक ओर हों, तथा रचनाकार का सम्पर्क सूत्र यथा पूरा पता, मोबाइल अथवा फोन नम्बर, ई-मेल अवश्य लिखें।*
- *अस्वीकृत रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। अतः एक प्रति अपने पास सुरक्षित रखें।*
- *साहित्य भारती में प्रकाशित रचना के मानदेय से पत्रिका की एक वर्ष की सदस्यता दी जाती है। अतः वर्ष में सामान्यतः एक ही रचना प्रकाशित की जाती है।*
- *रचना प्रकाशित होने पर लेखकीय प्रति प्रेषित की जाती है।*
- *प्रकाशित रचना की मौलिकता का सम्पूर्ण दायित्व रचनाकार का होगा।*
- *रचना के साथ अपना बैंक खाते में नाम (अंग्रेजी के बड़े अक्षरों में), निरस्त चेक/बैंक विवरण IFSC कोड सहित भी भेजने का कष्ट करें।*

- सम्पादक

जयशंकर प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना

➲ डॉ0 कृष्णाजी श्रीवास्तव

प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना एक विशेष कोटि की है। यद्यपि प्रसाद ने प्रेम, सौन्दर्य, रोमानियत और अतीत धर्मिता को अपनी लेखनी से चित्रित अवश्य किया है, परन्तु उनके साहित्य का प्रमुख स्वर राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना का स्वर है। समय की आवश्यकता को समझकर प्रसाद ने अपने साहित्य का सृजन किया। तत्कालीन परिस्थितियों में उन्होंने यह अनुभव किया था कि भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने की परम आवश्यकता है।

प्रसाद एक जागरूक साहित्यकार थे। उनके समक्ष साहित्य-संस्कार के साथ-साथ पराधीन भारतीय जनता के मानसिक परिष्कार का उद्देश्य भी था। राष्ट्रीयता की भावना को जगाने में प्रसाद जी ने अतीत-गौरव की उपयोगिता समझी थी। वस्तुतः पराधीनता की लम्बी अवधि में केवल हमारा शरीर ही बंदी नहीं रहा, बल्कि भारत राष्ट्र के जनमानस को विकृत करने का भी सुनियोजित प्रयास होता रहा था। प्रसाद ने अपने साहित्य में साम्राज्यवाद विरोधी चेतना के साथ जिन विश्वमूल्यों की स्थापना करनी चाही, उनमें स्वराज्य और स्वतन्त्रता, मनुष्य के लिए मूलभूत प्राथमिक शर्तें रहीं। उन्होंने घोषित किया है कि ईश्वर की बनाई हुई इस सृष्टि में हर मनुष्य स्वतंत्र है।

प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक निरन्तर राष्ट्र की धड़कनों के समानांतर अपनी गति और दिशा पकड़ते रहे, यह संयोग नहीं साभिप्राय है। सन् 1921 के आस-पास देश में साम्प्रदायिक दंगों का उन्माद फैला हुआ था, इन्हें रोकने के लिए महात्मा गाँधी ने 21 दिनों का उपवास किया था। दोनों जातियाँ एक दूसरे पर दोष मढ़ रही थीं, कोई भी झुकने को तैयार नहीं थी । ऐसे समय में प्रसाद ने नाटक 'जनमेजय का नागयज्ञ' लिखा। इसमें दो जातियों के संघर्ष के कारणों की पड़ताल की गयी है और समाधान खोजने का प्रयत्न भी किया गया है। कहा गया कि दो जातियों के वैमनस्य और संघर्ष के लिए किसी एक को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, भले एक आर्य हो, दूसरी नाग। नाटक के अनुसार इस शत्रुता में आर्यों की भूमिका नागों से कम नहीं है।

'जनमेजय का नागयज्ञ' पुराख्यान पर आधारित एक पौराणिक नाटक है। इसकी विषयवस्तु प्राचीन ग्रंथों के मंथन से निकली है। कथानक में आर्य जाति और नागों का संघर्ष वर्णित है। ऋषियों के प्रयत्न से शांति और संधि स्थापित होती है। नागकुमारी मणिमाला से जनमेजय का परिणय करा के लेखक ने उस साम्प्रदायिक संघर्ष को समाप्त करा दिया है। इस प्रकार प्रसाद जब समाधान की तलाश करते हैं तो उनकी चेतना में समकालिक संबंधों के

समीकरण दिखाई पड़ते हैं।

प्रसाद युग-बोध और सांस्कृतिक मूल्यों के नाटककार हैं। 'जनमेजय का नागयज्ञ' के प्रकाशन से पहले सन् 1922 में प्रकाशित 'अजातशत्रु' नाटक अपने युग के गाँधीवादी इतिहास - मिथ और भारतीय सांस्कृतिक चेतना को अपने कलेवर में समाविष्ट किये हुए है। प्रसाद ने इसके माध्यम से युद्ध की विभीषिका से जूझते षड्यंत्रों के शिकार, स्वार्थान्ध - सत्तालोलुप मानव को शान्ति, करुणा और प्रेम का जीवन-संदेश दिया है। प्रसाद पराधीन भारत के हृदय की प्रत्येक धड़कन को पहचानते थे और इसके अर्थ को ठीक ढंग से व्यक्त करने के लिए ही उन्होंने उत्कर्षमूलक ऐतिहासिक चरित्रों का सृजन किया।

सन् 1928 ई. में प्रकाशित 'स्कन्दगुप्त' प्रसाद जी के सर्वश्रेष्ठ नाटक के रूप में प्रतिष्ठित है। गुप्त साम्राज्य के पुनर्गठन की घटना ही इसका केन्द्रीय कार्य-व्यापार है । इसमें हूणों से पदाक्रान्त राष्ट्र का पुनरुद्धार करके सुख-शांति की नयी व्यवस्था करायी गयी है। 'स्कन्दगुप्त' नाटक के अंतर्गत ऐसे अनेक स्थल हैं, जिनसे नाटककार की उत्कृष्ट देश भक्ति का परिचय मिलता है

काव्यकर्त्ता मातृगुप्त देश एवं देश की प्रत्येक वस्तु के प्रति प्रेम प्रदर्शित करता हुआ कहता है- ''जन्मभूमि! जिसकी धूल में लोटकर खड़े होना सीखा, जिसमें खेल-खेल कर शिक्षा प्राप्त की।'' इसी नाटक के एक अन्य दृश्य में प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना की विशेषता धातुसेन के संवाद में इस प्रकार व्यक्त होती है- ''भारत समग्र विश्व का है, और संपूर्ण वसुंधरा इसके प्रेमपाश में आबद्ध है । अनादि काल से ज्ञान की, मानवता की ज्योति वह विकीर्ण कर रहा है। वसुंधरा का हृदय भारत किसको प्यारा नहीं है? तुम देखते नहीं कि विश्व का सबसे ऊँचा श्रृंग इसके सिरहाने और गंभीर तथा विशाल समुद्र इसके चरणों के नीचे है। एक से एक सुंदर दृश्य प्रकृति ने अपने इस घर में चित्रित कर रखे हैं। भारत के कल्याण के लिए मेरा सर्वस्व अर्पित है।''

प्रसाद प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक एवं आराधक हैं। उन्होंने 'स्कन्दगुप्त' नाटक में राष्ट्र के गौरव की श्रद्धापूर्ण चर्चा और उसका गुणगान अनेक स्थलों पर किया है। नाटक की समाप्ति के लगभग गाया जाने वाला गीत देश भक्ति को इस प्रकार व्यक्त करता है-

''हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार ।
उषा ने हँस अभिनन्दन किया और पहनाया हीरक हार ।।
किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यहीं ।
हमारी जन्म भूमि थी यहीं, कहीं से हम आये थे नहीं ।।
वहीं है रक्त, वही है देश, वही साहस है, वैसा ज्ञान।
वहीं है शांति, वही है शक्ति, वही हम दिव्य आर्य संतान।।
जिये तो सदा उसी के लिए, यही अभिमान रहे, यह हर्ष।
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा, प्यारा भारतवर्ष ।।''

उज्ज्वल और गौरवपूर्ण अतीत की तुलना में वर्तमान दीन-हीन स्थिति को देखकर प्रसाद का हृदय क्षुब्ध हो उठता है। दासता में घुट-घुट कर जीवन बिताने की अपेक्षा नष्ट हो जाना ही नाटककार की दृष्टि में श्रेयस्कर है। स्कन्दगुप्त का कथन ऐसा है, जिसमें वर्तमान स्थिति पर क्षोभ और आक्रोश व्यक्त किया गया है-

''सिंहों की बिहार स्थली में श्रृंगाल-वृन्द सड़ी लोथ नोच रहे हैं।''

जन-जागरण, सुधार एवं वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन के लिए प्रसाद का मन तड़प उठता है। नाटक 'स्कन्दगुप्त में शर्वनाग विजया से कहता है. ''विजया! चलो देश के प्रत्येक बच्चे, बूढ़े और युवक को उसकी भलाई में लगाना होगा। कल्याण का मार्ग प्रशस्त

करना होगा। हम देश की प्रत्येक गली को झाड़ू देकर इतना साफ कर दें कि उस पर चलने वाले राज मार्ग का सुख पावें।''

सन् 1933 में प्रकाशित 'ध्रुवस्वामिनी' में प्रसाद ने नारी की स्वाधीनता, शोषण मुक्ति, नारी अस्मिता एवं नारी की पहचान से जुड़ी जिस समस्या को छूआ है, जिन प्रश्नों के उत्तर की तलाश है, वह उनके युग में एक जोखिम भरा कदम था। 'ध्रुवस्वामिनी' की भूमिका में प्रसाद ने रूढ़िवादियों पर उन्हीं के शस्त्रों से आक्रमण किया और उन्हीं के स्रोतों से उसका समाधान किया। प्रसाद नारी की एकल भूमिका का विस्तार करते हुए उसे सामाजिक सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय चेतना से सम्बद्ध कर देते हैं। नारी स्वाधीनता तब तक अपनी सार्थकता नहीं पाती जब तक कि उसकी चेतना अपने व्यक्तिगत खोल से निकलकर समाज और राष्ट्र से नहीं जुड़ती। 'ध्रुवस्वामिनी' प्रसाद की नाट्य साधना का चरम उत्कर्ष है। यह नाटक विदेशी सत्ता के अत्याचार और उससे संघर्ष का चित्रण करते हुए भारतीय सभ्यता और संस्कृति को महिमामंडित करता है । साथ ही राष्ट्रीय चेतना का उद्‌बोधन और नवनिर्माण की साधना के जागरण का सन्देश प्रदान करता है। यहाँ नारी मुक्ति की राष्ट्रीय समस्या का शास्त्रसम्मत समाधान प्रस्तुत करने का स्तुत्य प्रयास किया गया है। प्रसाद के नाटकों में देवसेना, 'ध्रुवस्वामिनी' और अलका जैसे चरित्रों के रूप में नारी राष्ट्रीय संकटों के प्रति पूरी जागरूक रही है।

प्रसाद ने नारी जीवन को भारतीय संस्कृति का उत्कर्ष माना है। उन्होंने 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में क्लीव, कापुरुष रामगुप्त के दाम्पत्य बंधन से ध्रुव देवी को मुक्त कराते हुए चन्द्रगुप्त से उसके पुनर्लग्न की जो शास्त्र-सम्मत व्यवस्था की है, वह देशकाल की दृष्टि से उनकी साहसपूर्ण स्थापना है। राष्ट्र प्रेम के क्षेत्र में उनके नारी पात्र पुरुषों की अपेक्षा अधिक सक्रिय और निष्ठापूर्ण दिखाई देते हैं।

'लहर' की ऐतिहासिक कविताओं में महान सांस्कृतिक उदात्तता तो है ही, राष्ट्रीयता की तड़प भी है। ''अशोक की चिन्ता कविता में प्रसाद ने जीवन के सत्य को पहचान कर उसके अनुरूप ही ऐसे प्रयत्न करने की प्रेरणा दी है कि युद्धों का अन्त होकर विश्व शान्ति की स्थापना हो सके। शांति की छाया में सारी मानवता निर्मम, निडर होकर सुखपूर्वक रह सके। इस लक्ष्य को हम भारतीय सांस्कृतिक चेतना का ही नहीं राष्ट्रीय चेतना का भी चरम एवं समन्वयात्मक स्वर कह सकते हैं।

अशोक की चिन्ता में अशोक सोचता है-

''यह महादम्भ का दानव
पीकर अनंग का आसव-कर
चुका महाभीषण रव,
सुख में प्राणी को मानव''
तब विजय-पराजय का कुढंग।''

'चन्द्रगुप्त' नाटक की रचना के समय अंग्रेजी राज्य के विरोध और राष्ट्रीयता की भावना का उन्नयन हो चुका था। प्रसाद ने इतिहास में चन्द्र गुप्त और चाणक्य का कथानक लेकर राष्ट्रीय भावना और देश-प्रेम की प्रधानता से पूर्ण नाटक की रचना की। देश प्रेमियों का आदर तब तक उच्चता प्राप्त नहीं करता, जब तक देश-द्रोही न हो। प्रसाद ने चन्द्रगुप्त नाटक में देश-प्रेमी और देश-द्रोही दोनों प्रकार के पात्रों के साथ निरंकुश शासन को भी स्थान दिया है। 'चन्द्रगुप्त' नाटक में नन्द का शासन अंग्रेजी राज्य का प्रतिरूप है। राष्ट्रीय भावना के लिए पूरे देश को अपना समझना आवश्यक है। यदि प्रान्तीयता की भावना प्रबल होगी तो राष्ट्रीयता का विकास कैसे होगा । आचार्य चाणक्य के दो गुरुभक्त शिष्य हैं - सिंहरण और चन्द्रगुप्त ये दोनों केवल मालव तथा मागध को अपना देश समझकर मालव और मागध होने का गर्व करते हैं। इन्हें राष्ट्रीयता का सन्देश देता

हुआ चाणक्य कहता है- तुम मालव हो और यह मागध, यही तुम्हारे मान का अवसान है न? परन्तु आत्मसम्मान इतने ही से सन्तुष्ट नहीं होगा। मालव और मागध को भूलकर जब तुम आर्यावर्त्त का नाम लोगे, तभी वह मिलेगा।''

चाणक्य पूरे आर्यावर्त्त को अपना राष्ट्र समझता है और अपने शिष्यों में भी यही भावना भरता है । चाणक्य की इस शिक्षा का प्रभाव तुरंत दृष्टिगोचर होता है। अलका जब सिंहरण से कहती है कि 'मालव ! तुम्हारे देश के लिए तुम्हारा जीवन अमूल्य है तो सिंहरण उससे कहता है' मेरा देश मालव ही नहीं, गांधार भी है। यही क्या समग्र आर्यावर्त्त मेरा है।'' अलका जब सिंहरण के इस कथन पर आश्चर्य प्रकट करती है तो सिंहरण कहता है- ''गांधार आर्यावर्त्त से भिन्न नहीं है, इसीलिए उसके पतन को मैं अपना अपमान समझता हूँ।'' अलका पर सिंहरण के इस कथन का विशेष प्रभाव होता है और वह भी आर्यावर्त्त का नाम लेने लगती है। यवन सैनिक द्वारा बन्दी बनायी जाकर अपने पिता के सामने पहुँची अलका कहती है- ''आर्यावर्त्त के सभी बच्चे आम्भीक, जैसे, नहीं होंगे। वे इसकी मान-प्रतिष्ठा के लिए तिल-तिल कट जायेंगे।'' इस रूप में अलका भी सिंहरण की भाषा बोल रही है और सिंहरण चाणक्य की भाषा बोल रहा है। आर्यावर्त्त के लिए मर मिटना, देश-प्रेम और राष्ट्रीय भावना का प्रतीक है।''

आम्भीक सिकन्दर से सन्धि करने के कारण विवश था। अलका का देश-प्रेम उसे अनुचित लग रहा था । अलका के पिता विवश होकर राज्य का उत्तरदायित्व आम्भीक को सौंपकर अलका को खोजने चले गये। अलका गांधार का पतन अपनी आँखों से न देखने के लिए पहले ही गांधार छोड़कर चली आयी थी। अलका वन मार्ग में अकेली चली जा रही थी। तभी सिकन्दर का सेनापति सिल्यूकस शिकारी वेश में उसे मिला। गांधार की राजकुमारी को वहाँ देखकर सिल्यूकस को आश्चर्य हुआ। उसने अलका से पूछ लिया ''तुम कहाँ की राजकुमारी हो, सुन्दरी?'' इसे सुनकर अलका ने जो उत्तर दिया, वह उसके देश-प्रेम और राष्ट्रीयता का प्रमाण है- ''मेरा देश, मेरे पहाड़, मेरी नदियाँ और मेरे जंगल हैं। इस भूमि में एक - एक परमाणु मेरे हैं और मेरे शरीर के एक-एक क्षुद्र अंश उन्हीं परमाणुओं से बने हैं। फिर मैं कहाँ जाऊँगी यवन।''

आम्भीक अपने ऊपर से देश-द्रोह का दाग मिटाने के लिए सिल्यूकस के विरुद्ध युद्ध करता हुआ मारा जाता है। उस समय अलका अपने ओजस्वी गीतों और भाषण से गांधार की जनता में जोश भर रही होती है। उसका उत्साह देखकर आम्भीक भी अपने को नहीं रोक पाता। वह अपने को यह सुनकर ही अधमरा स्वीकार करता है। यह सुनकर अलका जो कुछ कहती है ''भाई ! अब भी तुम्हारा भ्रम नहीं गया। राज्य किसी का नहीं है। सुशासन का है, जन्म भूमि के भक्तों में आज जागरण है। देखते नहीं, प्राच्य में सूर्योदय हुआ है। स्वयं सम्राट चन्द्रगुप्त तक इस महान आर्य साम्राज्य के सेवक हैं। स्वतंत्रता के युद्ध में सैनिक और सेनापति का भेद नहीं। जिसकी खड्गप्रभा में विजय का आलोक चमकेगा, वही वरेण्य है। उसी की पूजा होगी। भाई! तक्षशिला मेरा नहीं और तुम्हारा भी नहीं, तक्षशिला आर्यावर्त्त का एक भू-भाग है। वह आर्यावर्त्त का होकर ही रहे, इसके लिए मर मिटो।'' चन्द्रगुप्त नाटक में चाणक्य देशभक्ति और राष्ट्रीय भावना दोनों का रक्षक होने के साथ-साथ राष्ट्रीयता का प्रतीक भी है। उसे चिन्ता अपनी नहीं है। वह अपने भविष्य के विषय में भी नहीं सोचता है। राजनीति के पचड़ों में पड़ना उसके ब्राह्मण धर्म के विपरीत है। उसे अपना स्थान तपस्वी दाण्डायन के आश्रम में प्रतीत होता है, पर आर्यावर्त्त की रक्षा के लिए

वह राजनीति के पचड़े में पड़ा हुआ है। उसे महामंत्री पद का लोभ नहीं। चाणक्य ने फिर भी राजनीति तब तक नहीं छोड़ी, जब तक चन्द्रगुप्त और सिल्यूकस में संधि नहीं हो गयी।

आर्यावर्त्त को एक सबल, सम्पन्न और सुरक्षित राष्ट्र देखना ही चाणक्य की अभिलाषा रही। यह इच्छा चाणक्य को एक प्रतिष्ठित राष्ट्रभक्त सिद्ध करती है। डा0 दशरथ ओझा ने उचित ही कहा है- ''प्रसाद जी जिस प्रवृत्ति और उद्देश्य को लेकर नाटक निर्माण में तल्लीन हुए थे उसका चरम उत्कर्ष चन्द्रगुप्त नाटक में प्रकट होता है। प्रसाद जी भारत के प्राचीन गौरव का गान करने वाले, राष्ट्रीयता के चटक में रंगे एक ऐसे कुशल नाटककार हैं, जिन्होंने भारतीय इतिहास के उस उन्नत हिन्दू काल की प्रमुख घटनाओं को अपने ग्रन्थों के लिए चुना है, जिस पर कोई भी देश गौरव कर सकता है।''

'तितली' उपन्यास में गाँव की गरीबी से मुक्त कराने के लिए प्रसाद ने सहकारी खेती, पंचायतराज और सामुदायिक व्यवस्था का प्रारूप प्रस्तुत किया था, जो उनकी दूरदृष्टि का परिचायक है। प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना मानवतावादी विचारधारा से प्रेरित है। वे यह मानते रहे हैं कि अनादि काल से भारत मानवता की ज्योति विकीर्ण कर रहा है। प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना की एक विशेषता यह है कि उन्होंने केवल भारतीयों द्वारा ही भारत का स्तवन नहीं कराया है, बल्कि पशु-पक्षियों तक को भारत के प्रति आकर्षित होते दिखाया है। उनका एक प्रसिद्ध गीत है- ''अरूण यह मधुमय देश हमारा। जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।''- इसे विदेशी शत्रु कन्या कार्नेलिया के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। वह भारत देश की भौतिक प्रकृति पर मुग्ध होकर भारत को अपना देश मान लेती है। इसी गीत में विश्वभर के पक्षियों को भारत-भूमि से भावनात्मक स्तर पर जोड़ दिया गया है। कवि के शब्दों में -

''लघु सुर धनु से पंख पसारे।
शीतल मलय समीर सहारे।
उड़ते खग जिस ओर मुँह किए।
समझ नीड़ निज प्यारा।''

वस्तुतः इस गीत में राष्ट्रप्रेम की पराकाष्ठा दिखाई देती है।

भारतीय गौरव से प्रभावित कार्नेलिया अपने हृदय के भावों को एक अन्य स्थल पर इस प्रकार व्यक्त करती है-

'' यह सपनों का देश,
यह त्याग और ज्ञान का पालना,
यह प्रेम की रंगभूमि ।
अन्य देश मनुष्यों की जन्मभूमि है,
भारत मनुष्यता की जन्मभूमि है। ''

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय चेतना से भरपूर एक सशक्त प्रयाण गीत है, जिसे राष्ट्र के नौजवान सपूतों को सम्बोधित करते हुए राजकुमारी अलका के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है-

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है- बढ़े चलो बढ़े चलो।''

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रसाद ने अपनी कृतियों के माध्यम से जन-जन में क्रांति की शक्ति भरने का आह्वान किया है। प्रसाद के सम्पूर्ण साहित्य में राष्ट्रीय चेतना की प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है।

551ख/19, कोरियाना सुजानपुरा
आलमबाग, लखनऊ-226005
मो0-9807760052

जीवन सत्य के कवि : जयशंकर प्रसाद

➲ प्रो0 वशिष्ठ अनूप

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रवर्तक और उसे पूर्ण उत्कर्ष प्रदान करने वाले गौरवशाली कवि हैं। इनका जन्म काशी के एक प्रतिष्ठित व्यापारी परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम देवी प्रसाद और पितामह का नाम शिवरतन था। वे दोनों लोग तम्बाकू और सुँघनी के बड़े विक्रेता थे जिसके कारण 'सुँघनी साहु' के नाम से प्रसिद्ध हो गए थे। स्वाध्याय और लगन से इन्होंने कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। बचपन में ही पिता और बड़े भाई की मृत्यु के कारण व्यापार और परिवार का सारा भार इन पर आ पड़ा। पत्नियों के निधन के कारण इन्हें तीन शादियाँ करनी पड़ीं। तीसरी पत्नी से एक मात्र पुत्र रत्नशंकर जी का जन्म हुआ। प्रसादजी का जीवन बड़े ही संघर्ष में व्यतीत हुआ। दुःख-दर्द हमेशा इनके साथ लगे रहे जिसकी अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में देखने को मिलती है।

प्रसादजी ने आरम्भ में कलाधर उपनाम से ब्रजभाषा में कविताएँ लिखीं, किन्तु बाद में ये खड़ी बोली में कविता करने लगे। प्रसाद जी के पुत्र रत्नशंकर जी के अनुसार प्रसाद जी ने पहली रचना 'कलाधर' उपनाम से सन् 1901 में ब्रजभाषा में लिखी थी। उसकी आरंभिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

हारे सुरेस रमेस धनेस गनेसहु शेष न पावत पारे
पारे हैं कोटिक पातकी पुंज 'कलाधर' ताहि
छिनो लिखि तारे...

डा0 प्रेमशंकर के अनुसार उनकी खड़ी बोली की पहली रचना है -

आशा तटिनी का कूल नहीं मिलता है
स्वच्छन्द पवन बिन कुसुम नहीं खिलता है।
कमला कर में अति चतुर भूल जाता है,
फूल-फलों पर घिरता टकराता है।...

(इंदुकला 'किरण', 1910 ई0)

प्रसाद जी ने साहित्य, संस्कृति, इतिहास और समाज के बारे में गहन चिंतन भी किया है। उन्होंने 1909 में इन्दु की प्रस्तावना में जातीय उन्नति के लिए साहित्य की उन्नति तथा भाषा और भाषा सेवकों की उन्नति को आवश्यक बताया है। उन्होंने कहा कि- ''जो कुछ मनुष्य के लिए प्रार्थनीय, उन्नति का सहायक, धर्म साधक तथा उपकारी है, वह साहित्य है... साहित्य किसी भी परतंत्रता को सहन नहीं कर सकता। संसार में जो कुछ सत्य और सुंदर है, वही साहित्य का विषय है । साहित्य केवल सत्य और सौन्दर्य की चर्चा करके सत्य को प्रतिष्ठित और सौन्दर्य को पूर्ण रूप से विकसित

करता है।'' (प्रसाद ग्रंथावली, खण्ड- 4, पृष्ठ 431) ये मूलतः प्रेम, मादकता, आनन्द और प्रेरणा के कवि हैं। इनकी प्रतिभा सर्वोमुखी थी। इन्होंने कविता के अतिरिक्त कहानी, उपन्यास, नाटक और निबन्ध भी लिखे हैं इनकी रचनाएं इस प्रकार हैं- कविता- उर्वशी, वनमिलन, प्रेमराज्य (1909), अयोध्या का उद्धार, शोकोच्छ्वास (1910), बभ्रूवाहन (1911), कानन कुसुम, प्रेम-पथिक, करुणालय (1913), महाराणा का महत्व (1914), झरना (1918), आँसू (1925), लहर (1933), कामायनी (1936)। नाटक- राजश्री, विशाख, कामना, अजातशत्रु, जनमेजय का नागयज्ञ, स्कन्दगुप्त, एक घूँट, चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी। कहानी- प्रतिध्वनि, छाया, आँधी, आकाशदीप, इन्द्रजाल। उपन्यास- कंकाल, तितली, इरावती। निबन्ध- काव्य कला तथा अन्य निबन्ध।

प्रसादजी की आरम्भिक रचनाओं पर द्विवेदी युगीन प्रवृत्तियों का प्रभाव है, किन्तु उनमें द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता के प्रति विद्रोह भी झलकता है। आरम्भ की रचनाओं में संकोच का भाव है लेकिन झरना की कविताओं में विस्तार और प्रौढ़ता के दर्शन होने लगते हैं। वस्तुतः झरना में ही छायावाद की समस्त प्रवृत्तियाँ पहली बार लक्षित होती हैं। प्रसादजी की ख्याति का आरम्भ 1925 से हुआ जब 'आँसू' का प्रकाशन हुआ। आँसू एक स्मृति-काव्य है जिसका आरम्भ मन के गहरे विषाद, अवसाद और हाहाकार से होता है और अन्त होता है विश्व कल्याण एवं लोकमंगल की भावना से। आँसू का प्रथम संस्करण मुक्तक काव्य के रूप में आया था किन्तु आठ वर्ष बाद प्रकाशित दूसरे संस्करण में कवि ने इसमें चौंसठ छन्द और जोड़ दिये तथा इसके रूप विधान में ऐसे परिवर्तन किये जिससे वह प्रबन्ध-गीति जैसा हो गया। इसमें कवि की मार्मिक वेदना की ऐसी रचनात्मक यात्रा है जिसमें अतीत की मोहक विरह-वेदना के साथ ही एक समष्टिमूलक जीवन-दर्शन भी काम करता रहता है। आँसू का पहला छन्द है-

इस करुणा कलित हृदय में,
अब विकल रागिनी बजती,
क्यों हाहाकार स्वरों में,
वेदना असीम गरजती।

इसका अन्तिम छन्द है-

सबका निचोड़ लेकर तुम, सुख से सूखे जीवन में
बरसो प्रभात हिमकन सा, आँसू इस विश्वसदन में।

आँसू के अनेक छन्द ऐसे हैं जो रहस्यवादी लगते हैं

किन्तु यह लौकिक प्रेम को उदात्त रूपों में प्रस्तुत करने वाली कृति है। कवि ने विविध प्राकृतिक उपमानों के माध्यम से प्रेम की टीस और सौन्दर्य की सुकुमारता को सघन और सुन्दर अभिव्यक्ति दी है। 'लहर' प्रसाद के कुछ प्रगीतों और चार लम्बी कविताओं का संकलन है। इसमें छायावादी शैली में अनेक प्रतीकों के माध्यम से मानव भावनाओं को व्यक्त किया गया है।

कामायनी हिन्दी का एक श्रेष्ठ महाकाव्य और प्रसादजी की कीर्ति का गौरवशाली उद्घोष है। इसकी गणना विश्व के श्रेष्ठ महाकाव्यों में होती है। इसकी रचना पन्द्रह सर्गों- चिन्ता, आशा, श्रद्धा काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य और आनन्द में हुई है। कामायनी की मूल कथा 'शतपथ ब्राह्मण' की है जिसका संवर्धन ऋग्वेद, छान्दोग्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय तथा भागवत महापुराण आदि के आधार पर किया गया है। कथानक प्रलय और उसके बाद आरम्भ होने वाली मानव- सृष्टि से

सम्बन्धित है। कामायनी के मुख्य पात्र- मनु, श्रद्धा और इड़ा हैं। ये ऐतिहासिक होते हुए क्रमशः मन, हृदय और बुद्धि के प्रतीक भी हैं। कामायनी की भूमिका में प्रसादजी ने लिखा है- ''यह आख्यान इतना प्राचीन है कि इतिहास में रूपक का भी अद्‌भुत मिश्रण हो गया है। इसलिए मनु, श्रद्धा और इड़ा इत्यादि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।'' कामायनी मनुष्य के बाह्य और आन्तरिक विकास का कथात्मक काव्य है जिसका अन्त शैव दर्शन के प्रभाव स्वरूप आनन्दवाद में होता है-

समरस थे जड़ या चेतन सुन्दर साकार बना था,
चेतनता एक विलसती आनन्द अखण्ड घना था।

कामायनी में पौराणिक कथा के सहारे मानव-जीवन के उत्थान-पतन, हार-जीत और ह्रास-विकास की ही क्रमिक कथा कही गयी है। यह मानव संस्कृति के विकास और उसके निरन्तर जटिल, उलझावपूर्ण एवं यान्त्रिक होते हुए जीवन का रोचक आख्यान है जिसमें मन, हृदय और बुद्धि तथा भोग और त्याग आदि के समन्वय पर बल दिया गया है। अति बौद्धिकता, अति भौतिकता और अति यान्त्रिकता हानिकारक होती है। इसलिए कामायनी में सभी अतियों का निषेध और समन्वय की स्थापना की गयी है। 'कर्म का भोग, भोग का कर्म यही जड़ का चेतन आनन्द' में इसी संतुलन को रेखांकित किया गया है। कामायनी में रूप-सौन्दर्य और भाव - सौन्दर्य के साथ ही प्रकृति-चित्रण के दृश्य अत्यन्त प्रभावशाली हैं। रूप विधान के अन्य तत्वों के साथ ही नाटकीयता के सशक्त प्रयोगों ने कामायनी की रचना में अपूर्व सम्मोहन भर दिया है। चिन्ता, श्रद्धा, लज्जा, काम आदि सर्गो में नाटकीय तत्व देखने लायक हैं।

'कामायनी' में प्रसाद का कवि और नाटककार, उनका दर्शन और आधुनिकता, उनकी सौंदर्य चेतना और वैचारिकता अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची हैं। मानव मनोवृत्तियों पर आधारित इसके पन्द्रह सर्ग मनुष्यता के विकास का मनोवैज्ञानिक चित्रण करते हुए रूपकात्मक प्रबन्धकाव्य का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। भावात्मक स्फीति, कल्पना के उत्कर्ष, शब्द-सम्पदा और नाटकीयता एवं फैंटेसी की सशक्त संरचना 'कामायनी' में उल्लेखनीय है 'प्रसाद संगीत' नाम से प्रकाशित पुस्तक प्रसाद के लघु गीतों, नाट्यगीतों के संकलन और उनकी संगीत-रचना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

द्विवेदी युगीन कविता की स्थूलता, वर्णनात्मकता और कोरी नैतिकता से हटकर छायावाद के प्रवर्तक प्रसाद ने स्वच्छन्दतावादी नवचेतना का संचार किया। मुख्यतः प्रसाद मानवीय मनोभावों और मानवीय चित्तवृत्तियों के कवि हैं। प्रकृति प्रेम उनकी स्थाई वृत्ति थी। मानवमन की सूक्ष्मतम भावनाओं, तथा अन्तर्जगत की ओर उनका सहज झुकाव था। उनका कवि प्राकृतिक भावोच्छ्वासों के साथ विकसित हुआ और सूक्ष्मतम चित्तवृत्तियों के साथ तादात्म्य स्थापित करता चला गया।

एक साहित्यकार के रूप में प्रसाद की विशेष निधि सौन्दर्यानुभूति और प्रेमव्यंजना है। वाह्य और आन्तरिक सौन्दर्य के समन्वय से बल्कि आन्तरिक सौंदर्य को प्रमुखता देकर ही उनकी सौंदर्य-चेतना का विकास हुआ है। संयम तथा अनुशासन प्रसाद के सौंदर्य चित्रण और यौवन के अनन्य चित्रण में दर्शनीय है- रूप, रस, गंध, स्पर्श सब सौंदर्य के अंग हैं। प्राकृतिक सौंदर्य भी उस सौंदर्य का अभिन्न और अनिवार्य अंग बन जाता है। प्रसाद की सौंदर्य-प्रियता मानवीय सौंदर्य और

प्राकृतिक सौंदर्य दोनों में लक्षित हुई है। प्रकृति, प्रसाद-काव्य में कोमल, कठोर, विराट, व्यापक है और उसके सार्थक उपयोग से प्रसाद ने भावों, विचारों, मनःस्थितियों, शृंगार, प्रणय आदि का चित्रण तो किया ही है, उसके द्वारा अनुकूल पृष्ठभूमि का निर्माण भी किया है और उसके द्वारा पूरी दृश्य-कल्पना करते हुए उसके संवेदनात्मक रूप को चित्रित किया है। प्रायः प्रकृति प्रतीक उपमान आदि बनकर भी अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है। प्रसाद की प्रेम-व्यंजना भी पवित्र उदात्त और मानवीय करुणा की ओर ले जाती है। प्रेम की अनुभूति का साथ सौंदर्य और प्रकृति दोनों देते हैं। वैसे प्रेम-व्यंजना का सुन्दरतम रूप प्रसाद में वह है जिसके पीछे अव्यक्त वेदना, टीस, कसक है । यही मौन वेदना प्रसाद की पहचान है।

स्वानुभूति, आत्माभिव्यक्ति और वेदना की विवृत्ति छायावादी काव्य की मौलिकता रही है। प्रसाद काव्य की सबसे बड़ी विशेषता उसकी यह अनुभूति मूलकता है जो उनके छोटे-छोटे गीतों में भावोत्कर्ष और लयात्मकता के साथ व्यक्त हुई है। प्रसाद ने स्वानुभूति को व्यापक अर्थ और सघनता दी है, उसे मानवीय संवदेना से जोड़ा है। प्रसाद का भावप्रवण और मानवीय हृदय वेदना को 'आत्मानुभूति' तक सीमित नहीं रहने देता, वह उसे करुणा और संवदेना तक, दुख-सुख की मिश्रित अनुभूति तक ले जाता है। यह वेदना, यह अनुभूति प्रेम को चरम उत्कर्ष की ओर ले जाती है। यही प्रसाद की देन है।

प्रसाद के व्यक्तित्व का अभिन्न अंग उनका आनन्दवाद है जिसके मूल में शैवदर्शन है। उनकी 'कामायनी' इस आनन्दवाद का प्रतिरूप है जहाँ समरसता का सिद्धान्त, प्रकृति मूलक जीवन दृष्टि, और कर्म को, इस आनन्दमय जगत, शिव शक्ति की अभिन्नता को महत्व दिया गया है, जहाँ अन्तर्मन की अभिलाषाओं पर बलात् नियंत्रण को, तपस्या को स्वीकार नहीं किया गया है और निवृत्तिमूलक दृष्टि को कायरता का द्योतक माना गया है। किन्तु साथ ही प्रसाद नियतिवादी भी हैं। उनकी यह 'नियति' मनुष्य को कर्म-संघर्ष में कूदने के लिए प्रेरित करने वाली है, निराश करने वाली नहीं। नियति को प्रसाद ने मानवीय कर्म पर नियंत्रण रखने वाली अदृश्य शक्ति के रूप में स्वीकार किया है। वस्तुतः प्रसाद का ध्यान हमेशा जीवन के चिरंतन सत्य की ओर रहा है। प्रसाद जी ने कविताओं और गीतों के साथ फारसी बहरों में बहुत सारी खूबसूरत गजलें भी लिखी हैं। आमतौर पर हिन्दी के पाठकों का ध्यान उनकी इस विशेषता पर नहीं जाता। उनके नाटकों में भी उनकी कई गजलें शामिल हैं। यहाँ कुछ शेर प्रस्तुत हैं-

सरासर भूल करते हैं उन्हें जो प्यार करते हैं,
बुराई कर रहे हैं और अस्वीकार करते हैं।
उन्हें अवकाश ही इतना कहाँ है मुझसे मिलने का,
किसी से पूछ लेते हैं, यही उपकार करते हैं।

(इंदुकला-4, खंड-4, किरण-5, संपा0 जयशंकर प्रसाद, पृ0 498)

न छेड़ना उस अतीत स्मृति से खिंचे हुए बीन-तार कोकिल,
करुण रागिनी तड़प उठेगी, सुना न ऐसी पुकारकोकिल।

(स्कंद गुप्त, लोक भारती इलाहाबाद, प्रथम अंक, पृ0 19 नर्तकियों द्वारा गायन)

देश की दुर्दशा निहारोगे,
डूबते को कभी उबारोगे।
हारते ही रहे, न है कुछ अब,
दाँव पर आप को न हारेगे।

कुछ करोगे कि बस सदा रोकर,
दीन हो दैव को पुकारोगे।

(स्कंदगुप्त, पंचम अंक, पृ0 130, देवसेना का गायन)

प्रसाद जी काव्य को वर्णमय चित्र कहते हैं। उनके लिए काव्य आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है। इस अनुभूति के सुन्दर होने पर अभिव्यक्ति सुन्दर होगी- यही उनकी मान्यता है। शब्दों की भाव तरलता, उन्हें अन्तः संस्पर्श देना प्रसाद की विशेषता है। शब्द-चयन और पदविन्यास से, शब्दों की ध्वनियों से, उसके नाद से प्रसाद जो चित्र खड़ा करते हैं उसकी अर्थच्छायाएँ और व्यंजनाएँ बहुत समय तक गूँजती रहती हैं। एक गहरा आन्तरिक उद्वेलन और सांकेतिकता का परिष्कार उनकी विलक्षण कल्पना-शक्ति को सामने लाता है। अलंकारों के इतने संश्लिष्ट प्रयोग प्रसाद एक साथ कर लेते हैं कि आश्चर्य होता है। प्रसाद में केवल रंग और उनकी छटाएँ नहीं हैं, उनमें इतनी अथाह गहराई और विशालता है, वैविध्य है कि हम उनमें विश्वकाव्य के वैशिष्टय का अनुभव भी करते हैं और संस्कृतकाव्य की उदात्तता का भी। उनका मूल्यांकन- पुर्नमूल्यांकन आज भी बना हुआ है। प्रसाद का व्यक्तित्व और काव्य जीवन और जगत के शाश्वत मूल्यों की अभिव्यंजना का काव्य है। राष्ट्रीयता, इतिहास, दर्शन, समाज सबके उत्तर हमें उनके साहित्य में मिलते है और सबसे अधिक उस मनुष्य की जिज्ञासाओं के उत्तर जो निरन्तर आधुनिक चेतना को ग्रहण करता हुआ बढ़ना चाहता है। अध्यात्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि के साथ ही एक वैज्ञानिक और तर्कशील दृष्टि भी उनके काव्य में लगातार सक्रिय रहती है।

204/11, राजेन्द्र अपार्टमेण्ट,
रोहित नगर (नरिया)
वाराणसी-221001
मो0-9415895812

आया देखो विमल बसन्त।
समय सुहाया कैसा आया सुन्दर-तर श्रीमन्त्र।।
मन-रसाल की मुकुल माल जीवन धन,
कैसी आज कोमल बनी, अहा! देखो तो अच्छा बना समाज।
मलयानिल पर बैठे आओ धीरे-धीरे नाथ।
हँसते आओ सुमन सभी खिल जायें जिसके साथ।
मन झुकना, हम स्वयं खड़े हैं माल लेकर राज।
कोकिल प्राण पंचमी स्वर-लहरी में गाता आज।।

- जयशंकर प्रसाद

जयशंकर प्रसाद कृत विरहकाव्य आँसू

➲ वर्षा अग्रवाल

हिन्दी काव्य के क्षेत्र में सन् 1915-18 ई. के आस-पास जिस काव्यधारा का प्रवर्तन हुआ, उसे छायावाद की संज्ञा से अभिहित किया गया। यह नामकरण किस आधार पर तथा किसके द्वारा किया गया यह तथ्य अभी तक अज्ञात है। संभवतः श्री मुकुटधर पांडे ने इसका प्रयोग व्यंग्यात्मक रूप में छायावादी काव्य की अस्पष्टता के लिए किया था। कालान्तर में यह नाम रूढ़ हो गया, काव्य कला तथा अन्य निबन्ध में जयशंकर प्रसाद ने लिखा है, ''कविता क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश-विदेश की सुन्दरी के बाह्य वर्णन से भिन्न वेदना के आधार पर स्वानुभूतियों की अभिव्यक्ति होने लगी तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया गया।

छायावाद हिन्दी साहित्य की वह स्वर्णिम धारा है, जिसने शैली की दृष्टि से हिन्दी कविता के भंडार को अत्यंत समृद्ध तथा गौरवान्वित किया है। हिन्दी भाषा को जो शक्ति छायावादी कवियों ने प्रदान की वह अन्य किसी धारा में कवि नहीं दे सके। द्विवेदी युग के पश्चात हिन्दी कविता ने छायावाद के नन्दन-वन में प्रवेश किया। द्विवेदी युग में स्थूल विषयों का सीधा-सादा प्रतिपादन ही कविता थी। ऐसी कविता में मानव-जीवन के अन्तर्गत प्रेम, सौन्दर्य, सुख-दुःख, रहस्य, चिन्तन आदि सूक्ष्म भावनाओं के चित्रण की न तो चेतना थी और न क्षमता ही छायावाद ने मानव हृदय के इन सूक्ष्म भावों को अपने काव्य का आधार बनाया। कवि ने अपने मानस के राग-विराग, हास-रुदन, प्रणय का द्वन्द्व की स्थूलता को सूक्ष्मता में परिर्वितत किया। उनके बहिर्मुखी रूप को अन्तर्मुखी बनाया। उसकी सामाजिकता को व्यक्तिगत रूप प्रदान किया। विषयगत रूप को विषयीगत बनाया परंतु इससे भी बड़ी क्रान्ति छायावाद युग ने कला क्षेत्र के पक्ष में की। छायावादी कवियों ने एक कुशल शिल्पी की भाँति खड़ी बोली की भाषा को नये सिरे से गढ़ा। उसे भाषा की चित्रमयता, मूर्तिमयता एवं लाक्षणिकता के अतुल ऐश्वर्य से मंडित किया। कामना के भावों एवं सुषमा के अनेक छायाचित्रों से उसे जगमगा दिया। इस प्रकार आधुनिक कविता का जो बाल्यकाल भारतेन्दु युग में उदित हुआ, उसमें सबसे प्रखर प्रकाश छायावादी काव्य के रूप में प्रकट हुआ। छायावादी युग में हिन्दी कविता अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच गई थी इस बात में कोई अतिश्योक्ति नहीं है।

छायावाद के विषय में डा0 नगेन्द्र ने स्वीकार किया है कि जिस कविता ने एक नवीन सौन्दर्य चेतना

जगाकर एक बृहत समाज की अभिरुचि का परिष्कार किया, जिसने जीवन की कुंठाओं को अनन्त रंगों वाले स्वप्नों से गुदगुदा दिया, जिसने भाषा को नवीन हाव-भाव एवं नवीन हास-अश्रु प्रदान किये, जिसने हमारी कथा को असंख्य अनमोल छायाचित्रों से जगमग कर दिया और अन्त में जिसने कामायनी का समृद्ध रूपक 'पल्लव' और 'युगान्त' की कला नीरजा के अश्रु गीले गीत 'परिमल' और अनामिका की अम्बरचुम्बी उड़ान ही इस कविता के अक्षय गौरव है। उसकी समृद्धि की समता केवल हिन्दी का भक्ति काव्य ही कर सकता है। तीव्र विरोध के अनन्तर भी छायावादी काव्य अपने पथ से विचलित नहीं हुआ। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रा नंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, माखनलाल चतुर्वेदी, महादेवी वर्मा, डा0 रामकुमार वर्मा जैसे कवियों का उसे योगदान प्राप्त हुआ और छायावादी काव्य आधुनिक हिन्दी साहित्य की सबसे सशक्त धारा बनी।

छायावाद की वैयक्तिकता का आधार कवि की अतिशय भावुकता और कल्पना है। सामाजिक रूढ़ियों के विपरीत संघर्ष करते हुए मध्यम वर्गीय छायावादी कवि को पग-पग पर पराजय और निराशा का सामना करना पड़ा। फलस्वरूप दुःख और पीड़ा ही छायावाद के हिस्से में आये। उसे मुस्कान के स्थान पर आँसुओं से गीले गान का प्रसाद मिला। इसी कारण छायावादी काव्य में निराशा, पीड़ा, आँसू, उच्छवास आदि की प्रधानता है। प्रसाद का आँसू कामायनी के मनु की चिन्ता और पंत जी का 'उत्तरा', 'गुंजन', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का 'पराजय के गीत' इस तथ्य के प्रमाण हैं ।

'आँसू' काव्य छायावादी काव्य विधा की एक प्रमुख रचना है। प्रेम, मिलन और विरह के जो मार्मिक चित्रण छायावादी काव्य के प्रमुख विषय माने जाते हैं, उनका पूर्ण परिपाक 'आँसू' में हुआ है। कवि की यह प्रौढ़ कृति है और छायावाद का प्रकाश स्तम्भ। आँसू का भावपर का सौन्दर्याकर्षण प्रणयभावना तथा विरहानुभूति से निर्मित है। अतृप्ति एवं लालसा के डोरे 'आँसू' की भावभूमि में इधर से उधर तक खींचे हुए हैं। परिरम्भ की मादक स्मृति, अतृप्ति की भावना को और उभारकर व्यक्त करती है। संयोग शृंगार की अबाध अभिव्यक्ति आँसू में प्राप्त होती है परंतु विरहानुभूति की तीव्रता में संयोग शृंगार की स्थूलता बह जाती है; और शेष रह जाती है प्रेम की पवित्र स्मृति, जिसमें विरहाकुल मन छटपटाया करता है । आँसू में प्रेम-भावना का क्रमशः विकास हुआ है और वेदना की ज्वाला में उसका परिष्करण भी होता गया है।

'आँसू में 190 आनन्द छंद है। यह छन्द हिन्दी को प्रसाद जी की ही देन है। आँसू एक ऐसा आत्मपरक विप्रलम्भ काव्य है जो एक ओर आँसू के माध्यम से कवि की कथा प्रकट करता है तथा दूसरी ओर विश्व-मानव के हृदय के साथ तादात्म्य स्थापित करता हुआ जन-जन की व्यथा का मार्मिक चित्र उपस्थित करता है। आँसू के वर्ण्य विषय को प्रमुख रूप से तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है - (1) पूर्वानुभूत सौन्दर्य और सुख (2) उसकी स्मृति (3) पूर्वसुख के अभाव में उत्पन्न पीड़ा की मार्मिक अनुभूति। डा0 विजयेन्द्र स्नातक के अनुसार आँसू का विषय प्रेमानुभूति, विरह, अतीत की मधुर स्मृति, कहा जा सकता है। कवि के अन्तर में मधुर अतीत की शत-शत स्मृतियाँ उभर-उभर कर आ रही हैं और वह व्याकुल होकर उनकी अनुभूति में लीन होना चाहता है।

आँसू में छायावाद के अनेक तत्व प्राप्त होते हैं। आँसू के अधिकांश प्रगीतों में हमें सौन्दर्य दर्शन की

प्रवृत्ति प्राप्त होती है। प्रसाद प्रेम और सौन्दर्य के चितेरे कवि हैं। कवि ने प्रकृति के प्रत्येक अंग में सौन्दर्य का दर्शन किया है। आँसू में प्रेम के दुखमय रूप की प्रधानता है, फिर भी प्रेम के सुखमय और दुःखमय दोनों रूप उपलब्ध होते हैं। कवि एक ओर प्रेम में प्रवंचित होने की बात कहता है तो दूसरी ओर अतीत के मधुमय क्षणों का स्मरण करते हुए उन्हीं में खो जाता है-

मादक की मोहमयी थी मन बहलाने की क्रीड़ा।
अब हृदय हिला देती है वह मधुर प्रेम की पीड़ा।

कहीं पर उसने यौवन की मधुर अनुभूतियों का प्रकटीकरण किया है तो कहीं वह उस प्रिय को उपालम्भ देने से भी नहीं चुका है:

लहरों में प्यास भरी है, है भँवर पात्र भी खाली
मानस का सब रस पीकर, लुढ़का दी तुमने प्याली।

'आँसू' के कवि की लालसाएँ अतृप्त हैं। उसकी अतृप्ति स्थान-स्थान पर स्पष्ट रूप से उभरती है। कहीं उसकी भावनाओं का उदात्तीकरण भी हुआ है। वह व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर होता है-

सबका निचोड़ लेकर तुम सुख से सूखे जीवन में।
बरसो प्रभात हिमकन-सा आँसू इस विश्व सदन में।

छायावादी काम में वेदना एवं करुणा की अभिव्यक्ति एक प्रमुख प्रवृत्ति के रूप में दृष्टिगोचर होती है। 'प्रसाद', 'पन्त' और महादेवी के काव्य में वेदना और करुणा को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है। हर्ष-शोक, हास-रुदन, जन्म-मरण, विरह-मिलन आदि से उत्पन्न विषमताओं से घिरे हुए मानव जीवन को देखकर कवि हृदय में वेदना एवं करुणा उमड़ पड़ी है। प्रसाद के 'आँसू' में वेदना का स्वर मुखर हो उठा है-

जो घनीभूत पीड़ा थी मस्तक में स्मृति सी छायी।
दुर्दिन में आँसू बनकर वह आज बरसने आयी।
झंझा झकोर गर्जन था, बिजली थी नीरद माला।
पाकर इस शून्य हृदय को सबने आ घेरा डाला।

छायावादी कवि समष्टि से निरपेक्ष होकर व्यष्टि में लीन रहता है। 'स्व की अभिव्यक्ति ही छायावादी कवि की प्रमुख विशेषता है। 'आँसू' में कवि ने अपनी निजी सुख-दुख की भावनाओं को व्यक्त किया है-

रो-रोकर सिसक-सिसक कर कहता हूँ करुण कहानी।
तुम सुमन नोचते सुनते, करते जानी अनजानी।

आँसू में वेदना के तीन विभिन्न सोपान स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं- दैहिक, मानसिक और निर्वैयक्तिक। दैहिक वेदना के अन्तर्गत हम उस वेदना को ले सकते हैं जो शारीरिक रूप से विच्छेद हो जाने की दशा में उत्पन्न होती है। प्रिय की याद आ जाने पर आँसू बरबस ही उसकी आँखों से गिरने लगते हैं। कवि ने इस स्थिति का वर्णन किया है कि-

अपने आँसू की अंजलि आँखों में भर क्यों पीता
नक्षत्र पतन के क्षण में उज्ज्वल होकर है जीता
वह हँसी और यह आँसू, घुलने दे मिल जाने दे
बरसात नई होने दे, कवियों को खिल जाने दे
चुन-चुन ले रे कन-कन से जगती की सजग व्यथायें
रह जायेंगी कहने की, जनरंजन भरी कथायें।

आँसू में दूसरी स्थिति मानसिक है। इस स्थिति में वेदना पूर्ण रूप से करुणा में परिर्वितत हो जाती है। इस स्थिति में वेदना कवि की ही नहीं, बल्कि सृष्टि की समग्र चेतना का एक अंश बन जाती है। प्रेम के सागर की तलहटी में बाड़वज्वाला जला करती है-

बाड़वज्वाला सोती थी इस प्रणय सिन्धु के तल में
प्यासी मछली-सी आँखें थीं विकल रूप के जल में।
यह पारावार तरह हो फेनिल हो गरल उगलता
मथ डाला किस तृष्णा से नल में बडवानल जलता।

वेदना का तीसरा सोपान निर्वैयक्तिक का है। उसमें इस अन्तिम सोपान का प्रतिपादित दर्शन आता है, जिसके बल पर वेदना भव्य और उज्ज्वल स्वरूप स्पष्ट होता है। प्रसाद के दार्शनिक व्यक्ति को समष्टिगत बनाने में इसी को काम में लाया है। इसी के कारण आँसू काव्य के आदि और अन्त पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध की भाँति दो विभिन्न अंग से प्रतीत होते हैं। काव्य में दार्शनिक ढंग से उपसंहार करना प्रसाद की काव्य-शैली की विशेषता है। वेदना के इस सोपान में ही कवि के सच्चे जीवन का जागरण होता है-

वेदना मधुर हो जावे मेरी निर्दय तन्मयता
मिल जाये आज हृदय को, पाऊँ मैं भी सहृदयता ।
मेरी अनामिका संगिनी सुन्दर कठोर को मलते
हम दोनों रहे सखा ही, जीवन-पथ चलते-चलते।
सबका निचोड़ लेकर तुम सुख ले सूखे जीवन में
बरसो प्रभात हिमकन सा आँसू इस विश्व सदन में।

इस प्रकार वेदना को अपनी रानी बतलाकर उससे समष्टि को सुख पहुँचाने का अनुरोध करता है। उसकी इसी भावना के कारण इस काव्य में दार्शनिक गरिमा, वैशिष्टय तथा स्थायित्व का समावेश हो गया है ।

छायावाद में प्रकृति को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ। प्रकृति छायावाद के प्राणों में समाई हुई है। 'आँसू' में कवि ने प्रकृति के नाना रूप प्रस्तुत किए हैं-

"हिलते द्रुमदल कल किसलय, देती गलबाही डाली।
फूलों का चुम्बन, छिड़ती, मधुपों की तान निराली।
(पृष्ठ भूमि के रूप में चित्रण)

"प्राची के अरुण मुकुट में, सुंदर प्रतिबिम्ब तुम्हारा।
उस अलस उषा में देखूँ, अपनी आँखों का तारा।"
(प्रकृति में प्रियतम की छाया का चित्रण)

"झंझा झकोर गर्जन था, बिजली थी नीरद माला।"
(प्रतीक रूप में प्रकृति चित्रण)

"शशिमुख पर घूंघट डाले, अंचल में दीप छिपाए।
जीवन की गोधूलि में, कौतुहल से तुम आए।"
(मानवीकरण के रूप में चित्रण)

प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित जी का मानना है कि उन्होंने 'आँसू' में मन की मुक्त अनुभूतियों को एक सूत्र में पिरोकर उसे एकार्थक मुक्तक अथवा भावात्मक खण्ड प्रबन्ध का रूप दे दिया। यह भी हिन्दी कविता के लिए एक विशिष्ट वरदान सिद्ध हुआ। आँसू में उनके मन की जो व्यथा-कथा मुखरित हुई है और व्यष्टि से समष्टि तक की वेदना का जो उदात्त समाधान प्रस्तुत हुआ है, वह प्रसाद जी की प्रतिभा का उत्कृष्ट पुरस्कार है।'[16]

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि आँसू एक विरह काव्य है, जिसके साक्षी हैं- उसके नख-शिख वर्णन एवं प्रिय के शरीर-व्यापारों की झाँकी। 'जिसमें परिरंभ है, मुखचंद्र का चाँदनी जल से धोना है। आध्यात्म का आवरण पहनाने की कोई आवश्यकता नहीं। प्रसाद का प्रियतम एक साधारण मानव की प्रणय-प्रतिभा है किन्तु, गम्भीर वेदना उसे रोमांटिक मात्र नहीं रहने देती। प्रसाद जी आरम्भ से आदर्शवादी रहे हैं। इसलिए आँसू के विरह-निवेदन में भी उस आदर्श की रक्षा की है जिसके, फलस्वरूप रूप विलास और वासना की अन्त में आदर्श प्रणय के रूप में प्रतिष्ठित हो जाती है। कुल मिलाकर आँसू छायावादी तत्त्वों से परिपूर्ण एक उत्कृष्ट रचना है।

50, चाहचंद जीरो रोड, प्रयागराज-211001
मो.- 9453010419

महादेवी वर्मा के काव्य में विरह-वेदना

➲ डॉ0 सत्य प्रकाश पाल

महादेवी वर्मा हिंदी की सर्वाधिक प्रतिभावान कवयित्रियों में से एक हैं। आधुनिक हिंदी की सर्वश्रेष्ठ कवयित्रियों में से एक होने के कारण इन्हें 'आधुनिक मीरा' भी कहा जाता है। महादेवी जी ने स्वतंत्रता से पहले और बाद का भारत दोनों देखा था। उन्होंने व्यापक समाज के भीतर विद्यमान हाहाकार, रूदन को देखा, परखा और करुणा से भरपूर 'अहंकार को दूर करने वाली दृष्टि देने की कोशिश की। उन्होंने मन की पीड़ा को इतने स्नेह और श्रृंगार से सजाया कि दीपशिखा में जन-जन की पीड़ा के रूप में स्थापित हुई और उन्होंने केवल पाठकों को ही नहीं समीक्षकों को भी गहराई तक प्रभावित किया। जैसा कि मीरा का विद्रोह बहुत दूर तक उनका निजी विद्रोह, अपने ऊपर लगाई गई पाबंदियों से बाहर आने के हेतु किया गया विद्रोह, जिसके तार नारी-पराधीनता तथा उसकी मुक्ति की आकांक्षा से जुड़ते हैं। मीरा ने अपने समय में चली आ रही सामाजिक संरचना पर सवाल उठाए, वे मनचाहा समाज न रच सकी हो नारी पराधीनता और पराधीनता से नारी की मुक्ति की आकांक्षा को उन्होंने उजागर किया, मुक्ति के सपने को नारी मन में जीवित रखा, उनका इस बिन्दु पर महत्त्व निर्विवाद है।

महादेवी की प्रतिक्रिया भी मीरा की तरह ही उनके काव्य में मिलती है। महादेवी की प्रतिक्रिया एक नारी की तरह घर की सीमा में ही हुई। परंतु उनकी भी आरंभिक रचनाओं में जो भावुक असंतोष और तीव्र पीड़ा मिलती है, वह अंत तक जाते-जाते बौद्धिक परितोष में शामित होने लगी। महादेवी को भीतर-भीतर अपनी परिक्षीणता का अनुभव होता रहा। ऊपर-ऊपर आनंद और संतोष की फीकी हँसी थी तथा अपने मन से वे चुपचाप यहीं कहती थीं कि-

मधुर-मधुर मेरे दीपक जल।

उन्हें अपने जलने में ही संतोष का अनुभव होने लगा। उन्होंने समझ लिया कि इसके अतिरिक्त जीवन की अब और कोई गति नहीं है। इसलिए पीछे वे इस जलने की क्रिया में और किसी भी तरह के बाहरी हस्तक्षेप को वरण करने लगी। जिधर वह जा रही है, उधर जाएँ। कोई रोके क्यों? कोई दया क्यों दिखाए? जो होना है वह हो ले-

यह मंदिर का दीप, इसे नीरव जलने दो ।

महादेवी जी की रचनाओं का गहन अध्ययन करने पर देखने को मिलता है कि उनकी कविताओं में, गीतों में, निबंधों में, लेखों में, संस्मरणों एवं कहानियों में भारतीय नारी की व्यथा, मानसिक प्रताड़ना से उपजी मर्मान्तक पीड़ा, पग-पग पर देखने को मिलती है। माँ, बहन, बेटी, जीवन संगिनी के विभिन्न नारी रूपों की

कुशल संवाहिका होते हुए भी पुरुष प्रधान समाज द्वारा उसका आत्मसम्मान बार-बार आहत होने के ज्वलंत साक्ष्य प्रबल बिम्बात्मक चित्रात्मकता से संम्पृक्त, पाषाण हृदयों को भी द्रवित करने की काव्यात्मक क्षमता से परिपूर्ण संवेदनात्मक शब्दचित्र सहज में ही मिल जाते हैं और वे कहती हैं-

मैं नीर भरी दुख की बदली
स्पंदन में चिर निस्पंद बसा,
क्रंदन में आहत विश्व हँसा
नयनों में दीपक से जलते।।

महादेवी वर्मा के लिए वेदना केवल नफरत का विषय ही नहीं है अपितु वह प्रेम का विषय भी है। अर्थात् जीवन में वेदना का भी उतना ही महत्त्व है जितना आनंद का। इसके बिना वे विस्तृत जग के आंगन को सूना मानती है। कई स्थानों पर तो वे प्रेम की पीर में करुणा और वेदना की सजलता का पुट भरकर मिलन का तिरस्कार करती भी दिखाई पड़ती हैं तथा विरह को ही प्रेम साधना का एकमात्र साध्य और साधन मानते हुए कहती हैं-

क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार?
रहने दो हे देव अरे यह,
मेरा मिटने का अधिकार?

दुःख मार्ग से आने वाले प्रियतम के पथ शूल भी उनको बहुत रूचिकर एवं परमप्रिय है-

दूर तुमसे हूँ अखंड सुहागिनी भी हूँ,
बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ।

यह कहकर वे विरह में मिलन और मिलन में ही विरह का साक्षात्कार करने लगती हैं। उनका प्रियतम तो 'प्राणों का अंतिम पाहुन' है। उसकी प्रतीक्षा में यह प्रेयसी सुख प्राप्त करती है जो उन्हीं के शब्दों में चिर काम्य है। वे वेदनापूरित बिल्कुल भी नहीं होती हैं। उन्हें तनिक सा भी कष्ट नहीं होता है। वे तो प्रतीक्षा के इस अहंकार में विरह-दीपक जलाकर परिष्कार करती हैं-

अपने इस सूनेपन की
मैं हूँ रानी मतवाली
प्राणों का दीप जलाकर
करती रहती दीवाली।

महादेवी वर्मा जी अपने अंतर्मन की टीस, पीड़ा की मार्मिक अथवा विवशता उनकी रचनाओं में देखने को मिलती है-

विस्तृत नभ का कोई कोना
मेरा न कभी अपना होना,
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली।

महादेवी जी ने छायावादी और रहस्यवादी कवितायें अवश्य लिखी पर वह मीरा की तरह यथार्थ से कभी नहीं कटी। मीरा तो श्रीकृष्ण की ऐसी प्रेम दीवानी हुई कि उन्होंने अपनी गृहस्थी ही त्याग दी, साधु-संतों के बीच एकतारा लेकर श्रीकृष्ण से वियोग और आसक्ति के भजन गाती रही, कृष्णमय ही हो गई, परंतु महादेवी जी अपने सांसारिक उत्तरदायित्वों से कभी विमुख नहीं हुई। उन्होंने लड़कियों की शिक्षा पर बहुत ध्यान दिया। महिलाओं को समाज में सही स्थान दिलाने के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहीं महादेवी वर्मा जी दृढ़ निश्चयी योद्धा की भांति जीवन संघर्ष करती रहना चाहती हैं। जीवन की इस अनोखी काया के कोहरे से भरा वातावरण में ही तो परम सत्य सचिदानन्द ज्योति के दर्शन होते हैं, और एक समय तो ऐसा भी आता है जब वे सभी विषमताओं से ऊपर उठकर उस परम सत्य के दिव्य

संदेश को जन-जन तक पहुँचा देती हैं-

विरह का युग आज दीखा, मिलनी के लघु सरीखा
दुख-सुख में कौन तीखा, मैं न जानी और न सीखा
मधुर मुझको हो गये सब मधुर प्रिय की भावना लें।

महादेवी वर्मा जी की जीवन पथ-यात्रा में पंथ ही इनका साथी है और वेदना की साधनात्मकता सजगता तथा जीवन के संकल्पों का समन्वय ही उत्साह, साहस और कर्म-प्रेरणा का आवेगमय उन्मेष बनता है। विरह रूपी कमल पुष्प के इस जीवन मूल में जल ही है और नयन पात्र भी इसी से अपूरित हैं और महादेवी वर्मा जी कहती हैं कि

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात।
वेदना में लेकर जन्म करुणा में मिला आवास।
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात ।।

अध्यात्मिक और भावात्मक प्रतीकों का बाहुल्य महादेवी वर्मा की सूक्ष्म और गहन कल्पना शक्ति का तो परिचायक है ही उनकी मनोवैज्ञानिक पकड़ को भी वह स्पष्ट करता है। लौकिक प्रतीकों से वे अलौकिक को व्यक्त कर देती हैं। अपने काव्य संग्रहों के शीर्षक भी महादेवी वर्मा ने प्रतीकात्मक ही रखे हैं। जैसे कि 'नीहार' नैराश्यपूर्ण वातावरण का प्रतीक है। 'रश्मि' आशा, उल्लास का प्रतीक है। 'नीरजा' सूर्य अर्थात् परमतत्व की ओर उन्मुख रहने वाली आत्मा का प्रतीक है। 'सांध्यगीत' साधना के विकास और आस्था का प्रतीक है। तथा 'दीपशिखा' विरह रूपी रात्रि को झेलती एवं साधना प्रारम्भ करती आत्मा का प्रतीक है। उनके 'दीपक' प्रतीक से जलन पीड़ा, वेदना का अर्थ मात्र ही स्पष्ट नहीं होता अपितु स्वयं जलाकर संसार को प्रकाशवान बना देने का अर्थ भी प्रसारित होता है और उन्होंने करुणा एवं वेदना को दूसरे ढंग से परिभाषित किया -

''मधुर-मधुर मेरे दीपक जल
युग-युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिफल
प्रियतम का पथ आलोकित कर''

महादेवी के गीतों में जीवन रूपी नदी के सुख, दुख रूपी दो किनारों के बीच निरंतर बहते हुए परम आनंद के महासागर में मिल जाने का आभास होता है। संयोग और वियोग में दुख और आनंद का जो अनूठा सत्य है वह इस संवेदनशील मानव हृदय को इस संसार के अविच्छिन्न को न छोड़ने का हठ 'शाश्वत पिपाशा' बनाए रखता है। महादेवी वर्मा ने जीवन के इसी गूढ़ तथा गहन रहस्य से वेदना के आनंद में साक्षात्कार किया तथा उसे काव्य संसार के पावन बंधनों में जकड़ दिया और कहती हैं कि

चिर मिलन-विरह- पुलिनों की
सरिता हो मेरा जीवन
प्रतिफल होता रहता हो
युग फूलों का आलिंगन।।

अंततः कहा जा सकता है कि महादेवी वर्मा जी की वेदना में निराशा के तो कहीं दर्शन होते ही नहीं, आशावादिता ही सर्वत्र दिखाई पड़ती है। यही आशावादिता ही प्रिय से मिलने की आतुरता को और अधिक बढ़ाती हैं तथा उस आतुरता से आनंद की अनुभूति कराती है। महादेवी जी अपनी वेदना और दुखद के अंतस मे भी सर्वजन के सुख का अनुभव करती है। महादेवी वर्मा जी वेदना की प्रतिमूर्ति हैं और 'आधुनिक मीरा' भी।

न्यू टीचर्स फ्लैट, ब्लाक-ए, रूम नं0 24, तृतीय तल
जोधपुर कॉलोनी, बी.एच.यू., वाराणसी-221005
मो0 8707547595

महादेवी वर्मा के रेखाचित्र

➲ स्नेह सुधा

रेखा चित्र अंग्रेजी के स्केच शब्द का पर्याय है, यह चित्र-कला का शब्द है, जैसे चित्रकार किसी ब्रश से कोई चित्र खींचता है, वैसे ही साहित्य में भी शब्दों के माध्यम से किसी व्यक्ति, वस्तु तथा स्थान का चित्र प्रस्तुत करने की कला रेखाचित्र कहलाती है। अन्तर मात्र इतना है कि चित्रकला में माध्यम रेखा है, और साहित्य में शब्द जिसके कारण उसे शब्दचित्र भी कहा जाता है।

चित्रकला और साहित्य दोनों में रेखाचित्र का माध्यम अलग है, किन्तु प्रवृत्ति, दृष्टि और शैली में समरूपता है। मौलिक अन्तर यह है कि कला चित्रात्मक है, और साहित्य गत्यात्मक। रेखाचित्र में कहानी की तरह कथावस्तु, चरित्र विकास और आरोह-अवरोह नहीं होते इसमें रचनाकार की दृष्टि, वस्तु या घटना पर ही केन्द्रित होती है। जबकि कहानी में पारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रिया ही महत्व रखती है। इसकी विशेषता उसकी सूक्ष्मता तथा पैनेपन से है क्योंकि यह जीवन से जुड़ा आंशिक चित्र है पूर्ण नहीं। वर्णनात्मक, व्यंगात्मक, दृश्यात्मक, संस्मरणात्मक और वैज्ञानिक विषयों की इसमें प्रमुखता होती है।

डॉ. भागीरथ मिश्र ने इसे परिभाषित किया है कि अपने सम्पर्क में आये किसी विलक्षण मित्र, व्यक्ति अथवा संवेदना को जगाने वाली-विशेषताओं से युक्त किसी प्रतिनिधि चरित्र को घटनाओं की पृष्ठभूमि में इस प्रकार उभार कर रखना कि उसके हृदय में एक निश्चित प्रभाव अंकित हो जाय रेखाचित्र कहलाता है।

''मैं नीर भरी दुख की बदली'' कहने वाली वेदना की कवयित्री महादेवी वर्मा ने रेखाचित्र लिखे हैं जो अलग है क्योंकि अब तक राष्ट्रीय नेता, राजनीतिज्ञ, साहित्यकार एवं महापुरुषों के ही रेखाचित्र हैं परंतु महादेवी वर्मा ने समाज के निम्न वर्ग से पात्र उठायें हैं और उन्हें अमरत्व प्रदान किया है। इनमें कोई सेवक है, कोई ग्रामीण बालक है, कोई बूढ़ा है, कोई पहाड़ी है, कोई चीनी है, कोई विधवा है, कोई परित्यक्ता, कोई शोषित है, तो कोई पीड़ित लेकिन इन पात्रों की सबसे प्रमुख विशेषता है कि वह मनुष्य है।

अतीत के चलचित्र एवं स्मृति की रेखाएं दोनों ही संग्रहों के जिनके भी रेखाचित्र प्रस्तुत किये गये है वे समाज के निम्न वर्ण के लोग है लेकिन उनमें महानता तथा मनुष्यता है।

ग्रामीण जीवन अपनी समस्त अच्छाई-बुराइयों सहित महादेवी के रेखाचित्रों में साकार हुआ है, इसी को दिखाना महादेवी का उद्देश्य है। ग्रामीण समाज कैसा परिलक्षित होता है देखिए अतीत के चलचित्र में ।

''जिनके आँसुओं ने मेरा पथ स्वच्छ किया है,

जिनकी बिखरी कथाओं ने मेरे लिए जीवन की शृंखला जोड़ी है, जिनकी ममता सुंदर सरसता शिव और मनुष्यता सत्य रही है, जो अपने उपकारों से अनजान और मेरी कृतज्ञता से अपरिचित है। उन्हें अपने धूमिल-चलचित्रों के चिर उज्जवल आधारों को।''

इन रेखाचित्रों में महादेवी ने हिंदू समाज एवं परिवार को लेकर जो चिन्तन प्रस्तुत किया है वह निश्चित ही विचारणीय हिंदू समाज में व्याप्त समस्त विषमताओं, विसंगतियों, कुप्रवृतियों एवं पाखंडों पर उन्होंने तीव्र प्रहार किया है।

समाज एवं परिवार की मुख्य आधारशिला है नारी, लेकिन वह इस समाज में सदा से उपेक्षित रही है। अतः महादेवी ने स्वाभाविक रूप से अपने छात्र जीवन में ही 'भारतीय नारी' शीर्षक नाटक लिखा था। समाज शास्त्री की भाँति उन्होंने भारतीय नारी की सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का विवेचन एवं विश्लेषण भी किया है। उन्होंने रेखाचित्रों के माध्यम से पीड़ित नारी की करुणा को वाणी प्रदान की है।

शृंखला की कड़ियाँ में प्राचीन काल से आधुनिक युग तक नारी की समस्याओं का वर्णन है। एक समाज सुधारक की भाँति विधवाओं की समस्याओं पर साहसी व निर्भीक विचार व्यक्त किये हैं। स्त्री की इच्छा का हमारे समाज में कोई मूल्य नहीं है। पुरुष कभी पति, कभी भाई, तो कभी पुत्र के रूप में उसे लताड़ता आया है। अपनी मर्जी के अनुसार उसकी नीलामी भी की जाती है।

तत्कालीन समाज में हो रहे बाल विवाह और उसके परिणाम स्वरूप हो रहें अन्याय एवं अत्याचार का दृष्टान्त है। भक्तिन जो पाँच वर्ष की उम्र में ब्याही गयी। बिबिया का विवाह पाँच वर्ष में पाँच बच्चों के पिता से कर दिया जाता है। महादेवी जी लिखती हैं कि ''कन्हई ने फिर एक बार उसका घर बसा देने का प्रयत्न किया। निकटवर्ती गाँव में रहने वाले अधेड़, विधुर एवं पाँच बच्चों के पिता को बहनोई के रूप में चुना था।''

''ठकुरी बाबा अपनी छह-सात वर्ष की पुत्री की सगाई करके निश्चित हो जाते हैं। मारवाड़ी विधवा का श्वसुर व नंद का कष्ट सहते-सहते दम घुटने लगता है, जिस घर में वह रहती उसमें न तो खिड़की है न रोशनदान न कोई नौकर न अतिथि न पशु-पक्षी, समाधि जैसे घर में लोहे की प्राचीर से घिरे मृतक समान वह किशोरी बालिका बिना किसी संगी साथी के बिना किसी आमोद-प्रमोद के मानों समाधिस्त होने की साधना में लीन थी।''

इस प्रकार महादेवी जी ने मार्मिक शब्दों में विधवाओं की स्थिति का चित्रण किया है।

बालिका माँ समाज के क्रूर व्यंग्य से बचने के लिए घोरतमस के अज्ञातवास में यंत्रणा से घटपटाती हुई पुत्री को जन्म देती है। 18 वर्ष में ही उसकी ऐसी भयावह स्थिति हो जाती है तो सवाल यह उठता है कि वह आगे का जीवन कैसे बिताये, तीन बालिकाओं की माँ एवं मात्र उन्नीस वर्ष की आयु में ही वह विधवा हो जाती है। परंतु वह किसी के सामने हार नहीं स्वीकारती अपने देवरों को वह ललकारती है ''हम कुकुरी बिलारी न होय, हमार मन पुसाई तो हम इसर के जाब नाहि न तुम्हार पंचन के छाती पे हो रहा भूँजब औ राज करब समुझे रहौ।''

भक्तिन की बड़ी लड़की किशोरी से युवती होते ही विधवा हो जाती है। तब भक्तिन के परिवारवालों के सामने एक नहीं चलती। 32 वर्ष में विधवा बनी बिट्टो 54 वर्ष के अधेड़ के साथ शादी करती है। पति या ससुराल वालों के अन्याय-अत्याचार सहने वाली, हिंदू नारी ने अपनी अस्मिता नहीं खोने दी। लेखिका भक्तिन की कोई

नहीं लगती परंतु भक्तिन अपने जीवनपर्यन्त लेखिका का साया बनकर रहती है और अपनी कर्तव्य परायणता का सबूत देती है।

बदलू अपनी पत्नी रधिया पर कितनी प्रसूतियाँ लाद चुका है उसे एक जून की रोटी भी ठीक से नहीं मिलती फिर भी रधिया कभी भी अपने पति के विरुद्ध शिकायत नहीं करती। भूखी प्यासी सुबह से शाम तक धूप में मिट्टी ढोती है और शाम को मजदूरी से आटा दाल खरीद कर दिया जले लौटती है।

परिश्रम के तप से वह अपने सेवक होने के प्रमाण प्रस्तुत करती है।

हिंदू समाज में पुत्र को कुलदीपक माना जाता है जबकि पुत्री को हीन समझा जाता है इसलिए पुत्र जन्म पर बाजा बजाये जाते हैं, मिठाइयाँ बाँटी जाती है। पुत्री का आना अशुभ समझा जाता है, अपने समय की इस प्रवृत्ति के बारे में महादेवी जी लिखती है। ''आंगन में गाने वालियाँ, द्वार पर नौबत वाले, बूढ़े से लेकर बालक तक सब पुत्र की प्रतीक्षा में बैठे रहते हैं, जैसे ही दबे स्वर से लक्ष्मी के आगमन की सूचना दी गयी, वैसे ही घर के एक कोने से दूसरे कोने तक दरिद्र निराशा व्याप्त हो गयी, बड़ी-बूढ़िया संकेत से सब को जाने के लिए कह देती हैं और बड़े-बूड़े इशारे से बाजे वाले को विदा कर देते।''

वास्तव में नारी पवित्र आत्मा की प्रतीक है। वह समाज का एक अविभाज्य अंग है परंतु हिंदू समाज में उसका जन्म शुभ नहीं माना जाता, इतना ही नहीं यदि वह पुत्र को जन्म नहीं देती तो उसे परिवार से प्रताड़ना मिलती है।

पुत्र के लिए मलाई पुत्री के लिए चने बाजरे की घुघरी।

भक्तिन के जब तीन बेटियाँ होती है तब परिवार के सभी सदस्य उसके साथ उपेक्षा भरा व्यवहार करते है। तीन-तीन बेटियों के कारण उसे दण्ड भी मिलता है। उसकी जेठानियाँ बैठकर लोकचर्चा करती और उनके काले-कलूटे लड़के धूल उड़ाते, वह मट्ठा फेटती, कूटती, पीसती और उसकी नन्ही लड़कियाँ गोबर उठाती कन्डे पाथती। जिठानियाँ अपने भात पर सफेद राब रखकर दूध डालती और अपने लड़कों को औटते हुए दूध पर से मलाई उतार कर खिलाती और वह काले गुड़चना के साथ कठौती में मट्ठा पाती और उसकी लड़कियाँ चने बाजरे की घुघरी चबाती!

क्योंकि बेटियाँ पराई घर की धरोहर है पराधीन भारत में नारी की जो स्थिति थी उसमें अब जाकर धीरे-धीरे सुधार आ रहा है।

पहले बेटी को विदा करते समय माता-पिता कहते थे कि जिस घर तुम्हारी डोली जा रही है उसी घर से तुम्हारी अर्थी भी उठनी चाहिए अर्थात अपरोक्ष रूप से वह स्पष्ट करते थे कि सुख मिले या दुख तुम्हें सब कुछ सह कर ससुराल में ही अपना जीवन बिताना है।

परंतु आज वही माता-पिता अपनी बेटी को विदा करते समय यह आश्वस्त करते हैं कि हमारे घर के दरवाजे तुम्हारे लिए सदा ही खुले हैं। निश्चय ही इतना बड़ा परिवर्तन समाज में शिक्षा के कारण ही आया है आज की नारी अबला नहीं सबला है। वह परतंत्र नहीं स्वतंत्र स्वावलम्बी एवं अपने अधिकारों के प्रति सजग है महादेवी की महिला पात्र जो कि तत्कालीन समाज का प्रतिनिधित्व करती थी वह केवल अपने कर्तव्यों को जानती थी अधिकारों को नहीं।

मेरी इन पंक्तियों में नारी मुखर है-

सती बना दो रूप कुंवर को,
यह घनश्याम नहीं कहता।

जग-जननी को कोख में मारो,
यह कोई राम नहीं कहता।।
पुत्र ही होगा कुल का दीपक,
वेद पुराण नहीं कहता।
अधिकारों को भीख में माँगो,
यह कोई न्याय नहीं कहता।।
युग परिवर्तन का आधार है नारी,
इस सत्य का आज संवरण कर।
प्रकृति सहचरी जीवन उल्का का,
सहर्ष सुखद अलंकरण कर।।
प्रगतिशिला स्वातन्त्रय नींव की,
नारी सशक्त उस अपरा को।
अंगीकार करो आजाद करो,
सदियों समाज की जड़ता से।।
आँचल भर दो अधिकारों से,
फिर कभी नहीं वह अबला हो।
अभिलेख लिखे स्वर्णाक्षर में,
चिर नमन करें आओ मिल कर।।
उस सबला की सार्थकता को।

इस प्रकार हम देखते हैं महादेवी जी ने हिंदू नारी की दशा को स्पष्ट करते हुए उसके विभिन्न रूपों पर प्रकाश डाला है हमारे समाज में सौतन के साथ बहन जैसा व्यवहार करने वाली सबिया भी है और दूसरी ओर स्त्री की क्रूरता को साबित करने वाली विमाताएँ भी हैं। जैसेः भक्तिन एवं विंदा की विमाताएँ ।

स्त्री की सामाजिक स्थिति पर इतने विस्तारपूर्वक विवेचन की वजह यह है कि अनेक संबंधों को धारण करने वाली स्त्री एक संस्था के समान है जिसकी स्थिति समझने से सामाजिक स्थिति का पता चलता है।

आकाशवाणी में दिये गये भाषण में महादेवी जी ने कहा था कि ''गृह के संरक्षक हैं नारी तथा पुरुष, इसी से उन्हें दंपति कहा गया है, किसी देश या किसी युग में मानव समाज की आंतरिक व बाह्य जीवन पद्धति को जानने के लिए इन्हीं दो घटको के परस्पर संबंध तथा अधिकारों पर दृष्टिपात अनिवार्य हो जाता है।''

महादेवी के रेखाचित्र में 'रामा' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें असाधारण गुण है, वह परिश्रमी है, सभी को प्यार से अनुशासित कर लेता है, अच्छे संस्कार डालता है बच्चों में। यह गुण सामान्य चरित्र को भी असाधारण बना देते हैं-

''रामा सबेरे ही पूजाघर साफ कर वहाँ के बर्तनों को नीबू से चमका देता है तब वह हमें उठाने जाता, बड़े पलंग पर सवेरे तक । हमारे सिर पैर की दिशा और स्थितियों में न जाने कितने उलट फेर हो चुकते हैं, किसी की गर्दन को किसी का पाव नापता रहता था किसी के हाथ पर किसी की सर्वांग तुलता रहता रामा का कठोर हाथ कोमलता के छद्मवेश में रजाई या चादर पर एक छोर से दूसरे छोर तक घूम आता था और तब वह किसी की गोद के रथ, किसी को कंधे के घोड़े पर तथा किसी को पैदल ही मुख प्रक्षालन जैसे समारोह के लिए ले जाता।''

महादेवी के रेखाचित्र 'रामा' में प्रवाह व प्रसाद का बड़ा ही संगत प्रयोग मिलता है।

महादेवी जी के घर में अचानक एक दिन कुछ ग्रामीण आ धमकते हैं वे कल्पवास के लिए आये थे। गंगातट पर ब्रहमचर्य पूर्वक रहकर धार्मिक कृत्य करना, कड़कड़ाती ठंड में आग न तापने के नियम का पालन करना, दोनों समय स्नान ध्यान करना, लकड़ी पर भोजन बनाना इत्यादि नियमों का पालन कल्पवासी करते हैं

लेखिका भी इनसे घुल मिल जाती है।

महादेवी बदरीनाथ की यात्रा पर जाती हैं तब वह अनुभव करती हैं कि यात्रा में कोई अमीर है, कोई शृंगारिन प्रसाधित महिला है, तो कोई घुटे सिर और सूखी लकड़ी टेकती हुई। दूसरी तरफ बिना टिकट रेल यात्रा करने वाले, सत्तू, चबेना, गुड़ का पाथेय लेकर जिनके घर जीवित लौटने की संभावना बहुत कम होती है। राह में कोई बीमार पड़ा तो उसे वही छोड़ कर आगे बढ़ जाते हैं वरना पाथेय और पास की धेली खत्म होने का डर रहता है क्योंकि एक का न पहुँचना उसके पाप का परिणाम है और उसके कारण अन्य न पहुँच सके तो उसका पाप भी उसके ही सर पर रहेगा।

भारत में धर्म को आधार बनाकर चुनाव भी लड़े जाते थे और दंगे भी करवाये जाते थे, पुण्य जुटाकर स्वर्ग की कामना भी की जाती है। महादेवी कहती हैं। ''धर्म खरीदने के लिए लाए हुए सस्ते अन्न में से कभी एक मुट्ठी चावल कभी चने मटर बूढ़े के सामने बिछे हुए अंगोछे पर बिखेरकर राह नापते हैं। कोई साहसी पाई डाल जाता है, कोई धोखे से नकली पैसा भी फेंककर चला जाता है इनकी भागदौड़ देखकर लगता है कि इन्हें संगम में अनेक डुबकियाँ लगाने पर भी पाप के घुलने का विश्वास नहीं उल्टे जानते है कि वह उन्ही के पीछे दौड़ता आ रहा है और रुकते ही उनकी शिखा पर आसीन हुए बिना नहीं रहेगा।

हिंदू धर्म में व्याप्त अंधविश्वासों की तरफ भी महादेवी हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। यहाँ जो काम दवा नहीं करती वह मुट्ठी भर भभूत कर देता है इसीलिए तो अपनी मालकिन की बीमारी की खबर पाकर अंधा 'अलोपी देवी' की विभूति लेकर उपस्थित होता है।

पथ के साथी, मेरा परिवार अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखायें जितने भी संकलन महादेवी जी के हैं सभी में रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रावृत्त जैसे एकाकार हो गये हैं। महादेवी जी ने सामान्य चरित्र और प्राणी का भाव प्रधान शब्द चित्र बनाया है एक चित्रकार की तरह उन्होनें अपने रेखा चित्रों से उस प्राणी के चरित्र, आन्तरिक भाव सौन्दर्य, करुणा, कुरूपता, आह्लाद और बाह्य रूप को पाठक के सामने साकार कर दिया है।

महादेवी के रेखाचित्र सत्यनिष्ठ, करुणा और सहानुभूति से बनते हैं जिसमें जीवन के विविध रूप उभरते हैं।

अतीत के चलचित्र में युगों-युगों की रंगीन यादें हैं, चिर परिचित यथार्थ है, क्षत विक्षत जीवन है और संवेदन की गतिशीलता में अतीत की वे यादें अपने युग की सीमा को लांघकर वर्तमान संदर्भों से जुड़ जाती हैं और भविष्य की ओर उन्मुख हो जाती हैं। जहाँ आकर साहित्य की कोई भी विधा जीवन के शाश्वत मूल्यों से जूझकर सनातन बन जाती है।

रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रावृत्त, संपादकीय, अभिभाषण व भूमिकायें सभी में जीवन के विभिन्न आयाम है जिसमें रेखाचित्रों में जीवन व भाव के सघन रूप दृष्टि गोचर होते हैं।

महादेवी में कही समालोचना की मौलिक सूझ-बूझ है तो कहीं प्रखर पांडित्य का प्रगाढ प्रदर्शन, कही भारतीय मान्यताओ की एकनिष्ठा है तो कहीं रेखा चित्रों की समीक्षा, कहीं ओजस्विता तो कहीं मृदुमर्मज्ञता, संक्षेप में महीयशी गिरीयषी महादेवी जी के दिव्यता की दीप्ति सर्वत्र देदीप्यमान है।

191 चक, जीरो रोड, प्रयागराज-211001
मो0-9889793404
प्रबक्ता- के0पी0जी कॉलेज, प्रयागराज।

निराला का कथा साहित्य

➲ डॉ0 अमिता दुबे

नानी-दादी की कहानियों से प्रारम्भ होकर हमारा व्यक्तित्व निरन्तर विकास को प्राप्त होता है। ये कहानियाँ परोक्ष-अपरोक्ष रूप में हमें संस्कारवान बनाती हैं सामाजिक सरोकारों से जोड़ती हैं साथ ही साथ जीवन जीने की पद्धति से भी अवगत कराती हैं हिन्दी साहित्य की 'कहानी' विधा ने अनेक उतार-चढ़ावों के बीच भी अन्य विधाओं की अपेक्षा अपनी स्थिति सुदृढ़ की है। वर्तमान में कहानी के शिल्प, भाषा, कथ्य में अनेक परिवर्तन हुए हैं पात्र-सृजन के विषय भी बदले हैं लेकिन कहानी की सम्प्रेषणीयता ही उसकी शक्ति होती है।

निराला जी जितने समर्थ कवि हैं उतने ही गद्यकार भी हैं, कहानीकार भी। निराला के तीन कहानी संग्रह हैं 'लिली', 'सखी' और 'सुकुल की वीवी'। बाद में 'सखी' कहानी संग्रह 'चतुरी चमार' शीर्षक से प्रकाशित हुआ वहीं 'देवी' कहानी संग्रह में निराला के तीन कहानी संग्रहों में से चयनित कहानियाँ हैं इसमें एक कहानी 'जानकी' पहले किसी संग्रह में संकलित नहीं है ।

निराला का पहला कहानी संग्रह 'लिली' नाम से सन् 1934 में गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ से प्रकाशित हुआ था इसकी सूचना 'सुधा' मासिक पत्रिका के 'नये फूल' शीर्षक स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी कि 'लिली' पुस्तक का प्रकाशन फरवरी, 1934 में हुआ था। 1 सितम्बर 1933 की निराला जी 'प्रियश्री श्री दुलारेलालजी के दक्षिण यशोवर्धन साहित्य-कर को 'लिली' समर्पित करते हुए उसकी भूमिका में कहते हैं

यह कथानक साहित्य में मेरा पहला प्रयास है। मुझसे पहले वाले हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानी-लेख इस कला को किस दूर उत्कर्ष तक पहुँचा चुके हैं, मैं पूरे मनोयोग से समझने का प्रयत्न करके भी नहीं समझ सकी। समझती तो शायद उनसे पर्याप्त शक्ति प्राप्त कर लेती और पतन के भय से इतना न घबराती। अतः अब मेरा विश्वास केवल 'लिली' पर है जो यथा-स्वभाव अधखिली रहकर अधिक सुगन्ध देती है।

वास्तव में 'लिली' ही क्या निराला की सभी कहानियाँ विशेष प्रकार की सुगन्ध विखेरने वाली हैं। 'लिली' में 'दस' कहानियाँ संग्रहीत हैं जिनके शीर्षक हैं 'प्रेमपूर्ण तरंग', 'क्या देखा और लिली', 'ज्योर्तिमयी', 'कमला', 'श्यामा', 'प्रेमिका परिचय', 'हिरनी', 'परिवर्तन', 'अर्थ'। सभी कहानियाँ छोटे कथानक के साथ सम्प्रेषणीयता का बड़ा फलक संजोने वाली हैं। निराला की कविताओं के सापेक्ष उनकी कहानियों की भाषा बिल्कुल भिन्न है। 'पद्मा और लिली' कहानी

जिसका अर्द्धांश कहानी संग्रह का शीर्षक बना, में निराला कहते हैं

'पद्मा के चन्द्र-मुख पर शोडश कला की शुभ्र चन्द्रिका अम्लान खिली रही है। एकान्त कुंज की कली-सी प्रणय के वासन्ती मलयस्पर्श से हिल उठती, विकास के लिए व्याकुल हो रही है।'

ब्राह्मण कुल की कन्या पद्मा क्षत्रिय युवक से प्रेम करती है विवाह के सम्बन्ध में उसकी निरीह उक्ति है

पद्मा की सजल आँखें भौंहों से सट गयीं, विवाह और प्यार एक बात है? विवाह करने से होता है, प्यार आप होता है। कोई किसी को प्यार करता है, तो वह उससे विवाह भी करता है?

'ज्योर्तिमयी' कहानी में निराला जी सामाजिक व्यवस्था पर कटाक्ष करते हुए व्यंग्योक्ति करते हैं

'वाक्ये का दरिद्रता!' युवती मुस्कुराती हुई बोली, अच्छा बताइए तो, यदि पहले ब्याही स्त्री इसी तरह स्वर्ग में अपने पूज्यपाद पति-देवता की प्रतीक्षा करती हो, और पतिदेव क्रमशः दूसरी, तीसरी, चौथी पत्नियों को मार-मारकर प्रतीक्षार्थ स्वर्ग भेजते रहें, तो खुद मरकर किसके पास पहुँचेंगे?'

निराला सामाजिक विसंगतियों पर तीव्र प्रहार करते हैं, और उस प्रहार में वे अनेक परम्पराओं को नष्ट करने में भी आस्था रखते हैं

'लिली' कहानी संग्रह की अन्य कहानियों में भी सामाजिक विद्रूपताएँ तो हैं परन्तु एक सकारात्मक समाधान के साथ निराला जी कहानी का अन्त करते हैं कभी-कभी तो सांकेतिक रूप से बिना निष्कर्ष के कहानी को समाप्त कर देते हैं।

'कमला' कहानी में परिवार के जामाता के साथ होने वाली सामान्य हास-परिहास को दिखाया गया है जिसमें निराला की भाषा बहुत सहज है

'कमला' से कुछ छोटी रिश्ते की उसकी एक बहन ने फुर्ती से हाथ जोड़कर कहा, 'लो मेरे पान तो अभी आपने खाये ही नहीं; मैं आपकी बहन लगती हूँ (खुलकर हँसी)। देखिये दीदी और आप एक हैं। दीदी की माँ आपकी माँ हैं, तो दीदी की बहन? ..... 'आपकी बहन हुई।' तीन चार सहेलियाँ हँसती हुई एक साथ कह उठीं।'

तत्समय समाज में फैली जातिगत रूढ़ियाँ और जात को कुजात किये जाने की घटना का निराला ने बहुत सुन्दर वर्णन किया है।

पं0 रामचन्द्र जी घर गये तो देखते हैं, उनके जाने से पहले गाँव भर में उनकी बहू और बेटी की मुसलमान के घर रहने वाली खबर फैल चुकी है। घर में उन्हीं के सगे भाई ने कहा कि घर में अभी आपका रहना नहीं हो सकता', क्योंकि आपके पीछे हम बे-धरम तो हो नहीं सकते, हमारे भी छोटे-छोटे बच्चे हैं, उनके भी जनेऊ और ब्याह हमें करने है, सब लोग हमें छोड़ दें, तो हम सिर्फ आपको लेकर करेंगे क्या? .... आप तब तक ढोरवाले घर में रहिए, हम भैया चारों को बुला लाते हैं।

'लिली' की सभी कहानियों में ब्राह्मण परिवारों की विवशता, कुरीतियाँ और सामाजिक रूढ़ियों के कारण क्रूरता से लिए गये निर्णयों का वर्णन निराला जी करते हैं। उनकी कहानियों में एक प्रकार से उन्नीसवीं शताब्दी के तीसवें दशक की सामाजिक व्यवस्था मुखरित हुई है।

निराला जी का दूसरा कहानी संग्रह 'सखी' नाम से अक्टूबर, सन् 1935 में 'सरस्वती पुस्तक भण्डार लखनऊ से प्रकाशित हुआ जो बाद में भूमिका

और नाम बदलकर सन् 1945 में 'चतुरी चमार' शीर्षक से सन् 1945 में किताब महल, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ जिसमें नौ कहानियाँ हैं जिनके शीर्षक हैं 'न्याय', 'स्वामी सारदानन्द महाराज और मैं', 'देवी', 'चतुरी चमार', 'राजासाहब को ठेंगा दिखाया', 'सफलता', 'भक्त और भगवान', 'सखी' ।

इस संग्रह की एक कहानी है 'कला की रूप रेखा' निराला इसे सत्य घटना पर आधारित बताते हैं। निराला की कहानियाँ समकालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने के साथ-साथ संग्रह का भी हिस्सा बनीं। उनकी कहानियों में लखनऊ का अमीनाबाद, मॉडल हाउस, भैंसाकुण्ड आदि मिलता है तो उन्नाव के गाँव भी दिखायी देते हैं वहीं इलाहाबाद का लूडरगंज, सिविल लाइंस, लीडर रोड भी हैं। निराला की कहानियों में प्रकाशक द्वारा लेखक के शोषण का भी वर्णन देखने को मिलता हैं 'सुकुल की बीवी' कहानी में वे कहते हैं

अपना नंगा बदन याद आया।
ढंग का, कोई कपड़ा न था।

कल्पना में सजने के तरह-तरह के सूट याद आये, पर वास्तव में दो मैले कुर्ते थे। बड़ा गुस्सा लगा, प्रकाशकों पर। कहा नीच हैं, लेखकों की कद्र नहीं करते। उठकर मुंशीजी के कमरे में गया, उनकी रेशमी चादर उठा लाया। कायदे से गले में डालकर देखा, फवती है या नहीं।

निराला का तीसरा कहानी संग्रह 'देवी' नाम से आया जिसका प्रकाशन काल सन् 1948 है। 'देवी' कहानी संग्रह के 'प्रिय श्री महादेवी वर्मा' को समर्पित करते हुए भूमिका में निराला कहते हैं 'देवी' संग्रह प्रस्तुत है आशा है पाठक पढ़कर प्रसन्न होंगे। हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए इसकी भाषा क्या काम करती है। पढ़ने में समझ में आ जाता है लिखते जो श्रम किया गया है उसका पारितोषिक उपेक्षित भाषा-साहित्य के लोग नहीं वितरित कर सके। अब जब देशी भाषा-साहित्य की माँग बढ़ी है, आशा है अधिकारी वर्ग स्कूल में प्रवेश देने का प्रयत्न करेंगे।'

भूमिका में 12 अगस्त, 1948 की तिथि अंकित है। इस संग्रह में 10 कहानियाँ हैं 'देवी', 'भक्त और भगवान', 'चतुरी चमार', 'हिरनी', 'सुकुल की वीवी', 'अर्थ', श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी', 'क्या देखा', 'प्रेमिका परिचय', और 'जानकी'।

इस प्रकार निराला जी ने लगभग दो दर्जन कहानियाँ लिखीं जो तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशित होती रहीं उनके साहित्यिक महत्त्व पर निराला की स्वयं की टिप्पणी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जो उन्होंने 'चतुरी चमार' की भूमिका में 'आवेदन' के रूप में प्रस्तुत की है।

'चतुरी चमार' नाम का कहानी-संग्रह पाठकों के सामने है। पहली कहानी 'चतुरी चमार' की हिन्दी-साहित्य में काफी चर्चा हो चुकी है। आलोचक अनेकानेक निबन्धों में इसकी प्रशंसा कर चुके हैं। संग्रहकार अपने संग्रहों में इसको स्थान दे चुके हैं। पाठक पढ़ने पर इनके तथा अन्य कहानियों के मूल का हिसाब स्वयं लगा लेंगे। मैंने स्थायी साहित्य के सर्जन के विचार से ये कहानियाँ लिखी हैं। पढने पर पाठकों का भ्रम सार्थक होगा, मुझको विश्वास है। भाषा, भाव और विषय के विवेचन में कहानियों के साथ मन पुष्ट होगा।' कला अपने आप उनको ऊँचा उठायेगी और मनोरंजन करेगी। उनका श्रम साहित्य-ज्ञानार्जन से सार्थक होगा ।

निराला ने इस भूमिका में एक वाक्य का प्रयोग किया है 'मैंने स्थायी साहित्य के सर्जन के विचार से ये

कहानियाँ लिखी हैं।'

उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में जब हिन्दी का खड़ी बोली रूप आकार ले रहा था पद्य की भाषा का लालित्य गद्य में अनुभव किया जा रहा था तब निराला 'स्थायी साहित्य' के सर्जन हेतु कहानियाँ लिखने की बात स्वीकार करते हैं वहीं मुक्तिबोध भी अपने एक कथन में कहते हैं कि सम्पादक कहते हैं कहानियाँ लिखो, गद्य रचनाएँ दो मेरा मन तो कविता में रमता है। लेकिन पैसा कहानी से मिलता है। आज भी बड़े-बड़े प्रकाशक यही उक्ति दोहराते देखे जा सकते हैं कविता बिकती नहीं कहानी, उपन्यास की माँग निरन्तर बनी रहती है।

अपनी कहानियों के सम्बन्ध में निराला 'सुकुल की बीबी' की भूमिका में 'निवेदन' के अन्तर्गत कहते हैं

'सुकुल की बीवी' मेरी कहानियों का तीसरा संग्रह है। इसमें तीन कहानियाँ इधर की और अन्तिम 'क्या देखा' मेरी पहली कहानी है जैसा इसकी पाद टीका में सूचित है। यह अन्तिम कहानी 'मतवाला' में सन् 1923 में निकली थी। कुछ परिवर्तन मैंने कर दिया है, हृदय-गत भाव वही है। लोगों को एक निर्णय और निश्चय की सुविधा होगी। यह कहानी पहले उत्तम पुरुष से चली है बाद को तृतीय पुरुष में बदल गयी है, यह जितना दोष है, उतना ही गुण। मेरा विचार है, कहानियों से पाठक-पाठिकाओं का मनोरंजन होगा। कथा, साहित्य और कला की प्यास कुछ बुझेगी। इति।

निराला नवीन उद्भावनाओं और नये प्रयोगों के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने साहित्य-सृजन में कभी किसी परम्परा या बन्धन को स्वीकार नहीं किया अपनी राह स्वयं बनायी और निडर होकर उस पर चले। अपनी कहानियों में एक ओर जहाँ वे उच्च वर्ग के परिवारों की विसंगतियों, विवशताओं और मर्यादा से जुड़ी रूढ़ियों को चित्रित करते हैं तो अनेक ऐसे पात्रों को भी महत्त्व देते हैं जिनका समाज में ही महत्त्व नहीं है।

निराला अपनी कहानियों के फलक को बहुत अधिक विस्तार नहीं देते। उनकी कहानियाँ एक घटना विशेष के परिप्रेक्ष्य को संदर्भित करते हुए उसका विस्तार करती है। उनकी कहानियों में पात्रों की संख्या भी बहुत अधिक नहीं होती कथोपकथन के माध्यम से कहनियाँ अपने उत्कर्ष को प्राप्त करती हैं और पाठकों को बहुत कुछ सोचने का अवसर देती हैं। 'चतुरी चमार' कहानी का अन्तिम अंश महत्त्वपूर्ण है 'चतुरी सूखकर मेरे सामने आकर खड़ा हुआ। मैंने कहा, 'चतुरी, मैं शक्ति भर तुम्हारी मद्द करूँगा।

तुम कहाँ तक मद्द करोगे, काका? चतुरी जैसे कुएँ में डूबता हुआ उमड़ा। 'तो तुम्हारा क्या इरादा है ?' उसे देखते हुए मैंने पूछा ।

'मुकदमा लड़ूंगा। पर गाँव वाले डर गये हैं, गवाही न देंगें।' दिल से बैठा हुआ चतुरी बोला।

उस परिस्थिति पर मुझे भी निराशा हुई। उसी स्वर से मैंने पूछा, 'फिर चतुरी?' चतुरी बोला, 'फिर छेदनी-पिरकिया आदि मालिक ही ले लें।'

मैंने गाँव में कुछ गवाह ठीक कर दिये। सत्तू बाँधकर, रेल छोड़कर, पैदल दस कोस उन्नाव चलकर दूसरी पेशी के बाद पैदल ही लौटकर हँसता हुआ चतुरी बोला, 'काका, जूता और पुरवाली बात अब्दुल-अर्ज में दर्ज नहीं हैं।'

यहाँ निराशा से ऊपर हटकर आत्मविश्वास के साथ चतुरी चमार का संघर्षरत हो जाना समाज को नयी दिशा और दृष्टि देना है। निराला कहानी को यहीं समाप्त करते हैं। उनकी कहानियों की यही सबसे बड़ी विशेषता है कि जहाँ कहानी समाप्त होती है वहीं से मानो नयी

शुरुआत है, 'अन्त से प्रारम्भ' करने का उनका अद्‌भुत कौशल उनकी अभिव्यक्ति का चरमोत्कर्ष है ।

मुक्तिबोध के शब्दों में कहें तो निराला अपनी कहानियों में 'अभिव्यक्ति के खतरे' उठाने को उत्सुक ही नहीं कृत संकल्प दिखायी देते हैं। उनके सफल कहानीकार रूप को नमन।

निराला के लेखन में उपन्यास का अपना महत्त्व है। यह उपन्यास लेखन दो चरणों में विभाजित किया जा सकता है पहले चरण में 'अप्सरा', 'अलका', 'प्रभावती' और 'निरूपमा' शीर्षक उपन्यास लिखे वहीं दूसरे चरण में 'कुल्ली भाट', 'विल्लेसुर बकरीहा', 'चोटी की पकड़' और 'काले कारनामें' नामक उपन्यास आते हैं। जैसा कि नाम से स्पष्ट है 'अप्सरा', 'अलका', 'प्रभावती' और 'निरूपमा' उपन्यास विशेष स्त्री पात्रों को केन्द्र में रखकर लिखे गये हैं । 'अप्सरा' उपन्यास 'सुधा' मासिक पत्रिका के छः अंकों (अगस्त 1930 से जनवरी 1931 तक) में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ पुस्तकाकार रूप में गंगापुस्तकमाला लखनऊ से सन् 1931 में प्रकाशित हुआ। निराला जी का अनोखा समर्पण दृष्टव्य है

'अप्सरा की साहित्य में सबसे पहले मन्द गति से सुन्दर-सुकुमार कवि-मित्र सुमित्रानन्दन पन्त की ओर बढ़ते हुए देखा, पन्त की ओर नहीं । मैंने देखा, पन्त जी की तरफ एक स्नेह-कटाक्ष कर सहज फिरकर उसने मुझसे कहा, इन्हीं के पास बैठकर इन्हीं से मैं अपना जीवन-रहस्य कहूँगी, फिर चली गयी।'

'अप्सरा' को निराला ने क्यों लिखा इस पर 'वक्तव्य' शीर्षक के अन्तर्गत वे स्वीकार करते हैं कि उन्होंने किसी विचार से अप्सरा नहीं लिखी, किसी उद्देश्य की पुष्टि भी इसमें नहीं। वे कहते हैं कि अप्सरा स्वयं मुझे जिस-जिस ओर ले गयी, दीपक-पतंग की तरह मैं उसके साथ रहा।

उपन्यास में प्रासंगिक काव्य, दर्शन, समाज, राजनीति की बातें निराला जी चरित्रों के साथ व्यावहारिक जीवन की समस्या की तरह आ पड़ी बताते हैं और बड़ी निश्छलता से कहते हैं

उनसे पाठकों को शिक्षा के तौर पर कुछ मिलता हो, अच्छी बात है, न मिलता हो, रहने दें, मैं अपनी तरफ से केवल अप्सरा उनकी भेंट कर रहा हूँ।'

'अप्सरा' में निराला का तेवर विल्कुल भिन्न है यहाँ वे एक प्रेम कथा को प्रस्तुत करते हुए सामाजिक विसंगतियों विशेषकर अंग्रेज अफसरों की स्थितियों के विश्लेषण के तरीके को पूरी तन्मयता से वर्णित करते हैं। अप्सरा की भाषा भी चमत्कृत करती है।

'गाड़ी ने लिलुआ-स्टेशन छोड़ दिया। चन्दन ने नेतृत्व सँभाला। तारा का हृदय रह-रहकर काँप उठता था। राजकुमार महापुरुष की तरह स्थिर हो रहा था, अपनी तमाम शक्तियों से संकुचित, चन्दन की जरूरत के वक्त तत्काल मदद करने के लिए। कनक पारिजात की तरह अर्द्ध-प्रस्फुट निष्कलंक दृष्टि से हावड़ा स्टेशन की प्रतीक्षा कर रही थी। केवल सिर चादर से ढका हुआ, श्वेत बादलों में अधखुले सूर्य की तरह।'

निराला का दूसरा उपन्यास है 'अलका'। अलका का प्रकाशन वर्ष सन् 1933 है। अक्टूबर, 1933 को सुधा में 'नये फूल' शीर्षक स्तम्भ के अन्तर्गत जो सूचना दी गयी उसके अनुसार यह सितम्बर, 1933 में छपकर बाहर आया होगा। 'अप्सरा' की तरह यह भी गंगापुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ से ही प्रकाशित हुआ था। 'अलका' के प्रारम्भ में 'घर' शीर्षक से प्रकाशित है

जिस अलका पर सावित्री की पूरी-पूरी छाया

पड़ी है, आर्य सभ्यता से उत्कर्षोज्ज्वल मित्रवर श्री नन्ददुलारे वाजपेयी एम0ए0 उसे उसी दृष्टि से देखें।'

'वेदना' के अन्तर्गत निराला 'अलका' को 'अप्सरा' का अगला पड़ाव मानते हैं अप्सरा से मिली प्रशंसा उनका आत्मविश्वास बढ़ाती है तभी वे कहते हैं'

'मुझे आशा है, हिन्दी के पाठक, साहित्यिक और आलोचक 'अलका' को अलकों के अन्धकार में न छिपाकर उसकी आँखों का प्रकाश देखेंगे कि हिन्दी के नवीन पथ से वह कितनी दूर का परिचय कर सकी है।'

यह उपन्यास छब्बीस शीर्षकों में विभक्त है। यह विस्तृत फलक का उपन्यास है जिसमें शोभा, राधा की कथा के साथ अलका की कहानी विस्तार पाती है। ग्रामीण परिवेश का चित्रण करने के साथ-साथ यहाँ शहरी वातावरण का सजीव वर्णन भी निराला जी सहजता से करते हैं

'रात के सन्नाटे में गोली की आवाज और चीख आते हुए प्रभाकर को सुन पड़ी थीं सब अंगों से सन्न हो गया मोटर एक पेड़ से भिड़ी पड़ी थी। पड़े हुए लोगों का चित्र देखकर उसे कारण तक पहुँचने में देर न हुई, यद्यपि गोलीवाली बात उसकी समझ में नहीं आयी। अलका को घटना के फैलने और लोगों के आने तक निरापद कर देने के विचार से अलका को सँभालकर कुलियों की खोली की ओर, उठाकर ले चला।'

इस उपन्यास के माध्यम से निराला ने नारी के सशक्त चरित्र का निर्माण किया है जो अनेक अवसरों पर अपने को अबला दिखाते हुए भी सबला सिद्ध करती हैं। निराला के स्त्री पात्रों के पास आत्मबल का अस्त्र है जो उन्हें टूटने-झुकने नहीं देता।

तीसरा उपन्यास 'प्रभावती' के नाम से वर्ष 1936 में सरस्वती पुस्तक भण्डार, लखनऊ से प्रकाशित हुआ इसके प्रथम संस्करण में श्री रूपनारायण पाण्डेय की लिखित भूमिका है और निवेदन में निराला कहते हैं।

'ईश्वरेच्छा से प्रभावती सहृदय पाठकों के सम्मुख समुपस्थित है। ध्वंसावशेपों पर कुछ सत्य और कुछ कल्पना का आश्रय लिया गया है, जैसा ऐतिहासिक रोमांस कुछ अधिक के लिए प्रचलित है। भाषा खड़ी बोली, खिचड़ी'- शैली होने पर भी, कुछ अधिक मार्जित है, प्राचीनता का वातावरण रखने के लिए। अपढ़ लोगों के वार्तालाप में अवधी मिली। उस समय की भाषा का प्रयोग वर्तमान साहित्य में नहीं किया जा सकता।'

इस उपन्यास का दूसरा संस्करण सन् 1945 में प्रकाशित हुआ। उपन्यास प्रभावती ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि पर आधारित है। इस उपन्यास को साहित्य जगत ने हाथों हाथ लिया, प्रशंसा प्राप्त हुई तब निराला अपेक्षा करते हैं

'हिन्दी साहित्य में इस उपन्यास की तारीफ हुई है। अभी उस रोज भी डॉक्टर रामविलास के लेख में इसके उद्धरण आये हैं। भाषा और भाव की दृष्टि से पुस्तक मध्यम या उच्च कक्षाओं में रखने के योग्य है। यदि अधिकारी ध्यान दें तो हिन्दी के साथ सहयोग और सराहनीय हो।'

यह 'सहयोग' की आकांक्षा आज भी लेखक करता है और प्रकाशक पुस्तकों के व्यवसायिक न होने की बात प्रचारित करते हैं। यद्यपि निराला को अच्छे प्रकाशक मिले जिनका उद्देश्य विशुद्ध व्यापार करना नहीं था वरन् वे हिन्दी और हिन्दी पुत्रों की सेवा करना चाहते थे। नन्द दुलारे वाजपेयी जी का नाम उनमें से प्रमुखता से लिया जा सकता है।

'प्रभावती' उपन्यास का प्रारम्भ वे लवणा नामक बरसाती नदी के वर्णन से करते हैं जो उन्नाव के

ऊसर से निकली और कुछ दूर जाकर गंगा में मिल जाती है। लवणा उत्तर पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर प्रवाहित हैं निराला की वर्णनात्मक शैली चमत्कृत करती है।

इसके प्रायः पाँच सौ मील फैले दोनों ओर के छोरों के भीतर भारतीय संस्कृति तथा उदार प्राचीन शिक्षा के अमृतोपम पय को धारण करने वाले कान्यकुब्ज सभ्यता के युगल सरोज झलक रहे हैं। दाहिने-दक्षिण ओर, शुभ्र स्वच्छतोया जाह्वी; मध्यभाग में लवणा अपने जीवन-प्रवाह को पूर्ण करती हुई; उत्तर बायीं ओर मन्दगामिनी सई।

आज इसी भाग का नाम बैसवाड़ा है।'

निराला बैसवाड़े की संस्कृति, प्रकृति, राजनीति और परिवेश का चित्रण इस उपन्यास में करते हैं। 'अप्सरा' और 'अलका' उपन्यासों से भिन्न परिवेश का चित्रण 'प्रभावती' उपन्यास में देखने को मिलता है। दुःख के आवेग में उपन्यास की नायिका प्रभावती गाती है-

'दुःख के दिन नयन नवाय रहौं,
बेमन मन को समुझाय कहौं।
को जानति, जागति पीर कौन,
सखि इहि समीर में बहति मौन,
राजा की कन्या रहति भौन
दासी बनि, गुनि गुन दुसह सहौं।'

यह भी विस्तृत उपन्यास है जिसमें सैंतीस उपशीर्षक हैं। संयोगिता और पृथ्वीराज के स्वयम्बर स्थल से पलायन के दृश्य में निराला प्रभावती के चरित्र का वर्णन अत्यन्त प्रखरता से करते हैं

'देव बराबर उस युवक को देख रहे थे। जब उसने संयोगिता को ढाल और तलवार दी थी तब उनका संशय और बढ़ा था। खड़े रह गये थे। कान्यकुब्ज के सरदार चौहानों के पीछे थे। वे उसी युवक को देखते रहे। बढ़ते चौहान के साथ संयोगिता का दाहिना पार्श्व बचाकर लड़ता-बढ़ता हुआ युवक सभा स्थल पार कर गया और बाहर पृथ्वी और संयोगिता के घोड़ों पर चढ़ने तक लड़ता दिखायी दिया।'

वह कोई और नहीं प्रभावती थी जिसे निराला ने इस उपन्यास की नायिका बनाया है।

चौथे उपन्यास के रूप में निराला का 'निरुपमा' उपन्यास है जो 1926 में भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ 'निरुपमा' के आरम्भिक दो परिच्छेद 16 जनवरी, 1934 की 'सुधा' में प्रकाशित हुए थे। अपने निवेदन में वे कहते हैं

'हिन्दी के उपन्यास-साहित्य को 'निरुपमा' मेरी चौथी भेंट है।' इस चौथी भेंट को आलोचक-समीक्षकों पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं

'आलोचक साहित्यिक जिन महानुभावों ने उठने की कसम खायी है भाषा और भावों के लच्छेदार वर्णन के सम्बन्ध में, उनके लिए मैं स्वयं उतर आया हूँ। उन्हें यदि 'निरुपमा' स्थल विशेष पर भी सौन्दर्य के बोध से निरुत्तर कर सकी तो मैं श्रम सार्थक समझूँगा। पर अगर सिंहलवासियों को प्रयाग सुलभ न हुआ, तो मुझे आश्चर्य न होगा। जिन्होंने 'अप्सरा' और 'अलका' आदि की तारीफ में मुझे उपन्यास-साहित्य का आधुनिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया है और मूल्य आँकते-आँकते अमूल्यता तक पहुँच गये हैं, उनकी मानसिक उच्चता के सामने कृतज्ञ मैं अत्यधिक संकुचित हूँ; पर 'निरुपमा' के संकुचित होने का कोई कारण नहीं। मुझे विश्वास है, वह उन्हें निरुपम सौन्दर्य और संस्कृति देकर प्रसन्न कर सकेगी।'

एक लेखक-सृजनशील रचनाकार समाज से क्या अपेक्षा करता है इसका उल्लेख भी निराला करते हैं

वे कहते हैं

'मेरे लिए हुए भिन्न दो समाजों के विषय हिन्दी के अपरिचय के कारण, यद्यपि विष ही होना चाहते थे, फिर भी यथा साध्य मैंने अमृत बनाने की कोशिश की है। दूसरे उन्नत समाज उपन्यास - लेखक की जो सहायता करते हैं, वह हिन्दी के समाज से प्राप्त नहीं। इसलिए काल्पनिक सृष्टि करनी पड़ती है, जैसे समाज का लेखक आशा करता है और जिसका होना सम्भव भी है। अनभ्यस्त और स्वभाव-संचालितों को वहाँ अस्वाभाविकता मिलती है। पर वह है स्वाभाविक।'

यह उपन्यास 'चौबीस' उप खण्डों में विभक्त है यद्यपि ये खण्ड आकार में बहुत बड़े नहीं हैं परन्तु कथा विस्तार और पात्रों के विकास और घटना क्रम को दृष्टि में रखते हुए उपयुक्त प्रतीत होते हैं।

निराला इस उपन्यास में बंगाली समाज का सुन्दर चित्रण-वर्णन करते हैं और बाँग्ला भाषा का लालित्य भी देखने को मिलता है। बाँग्ला भाषा के शब्दों का वे अर्थ भी देते हैं। जैसे एक स्थान पर उपन्यास की नायिका 'छूँचो-गोरू-गाधा'

कहती है तो निराला पाद टिप्पणी में छूँचो का अर्थ है छछुन्दर, मतलब औरतों के पीछे छछुआनेवाला। 'गोरू' अर्थात् गऊ, मूर्खता, निर्बुद्धिता आदि अर्थों पर बाँग्ला में यह गाली प्रचलित है। गाधा-गधा।

इस प्रकार यह उपन्यास दो भिन्न समाजों के बीच सामंजस्य, प्रेम और सौहार्द का अंकन करता है। मुख्य बात यह है कि निराला यह सब सन् 1936 में लिख रहे थे। वर्तमान समय में जाति, प्रदेश, भाषा की अनेक दीवारें नष्ट हुई हैं हमारी सामाजिक मान्यताएं भी उदार हुई हैं वैश्विक दृश्टि से हम और अधिक समृद्ध हुए परन्तु इस उदारता से जुड़ी समृद्धि की कल्पना निराला सन् 1936 में कर रहे थे।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि निराला के चार उपन्यास सन्-1931 से सन् 1936 के मध्य प्रकाशित हुए इसी बीच वे कविताएँ भी निरन्तर लिख रहे थे। यह निराला का उत्कृष्ट सृजनकाल माना जा सकता है।

निराला के दूसरे चरण के उपन्यास में 'कुल्ली भाट' का प्रकाशन सन् 1939 में हुआ। इसके प्रारम्भिक तीन परिच्छेद 'माधुरी' जो लखनऊ से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका थी, में मार्च, 1938 से प्रकाशित हुए। यह उपन्यास गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय लखनऊ से प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास नये तेवर का है और इसका समर्पण भी निराला की प्रवृत्ति के अनुरूप है

'इस पुस्तिका के समर्पण के योग्य कोई व्यक्ति हिन्दी साहित्य में नहीं मिला, यद्यपि कुल्ली के गुण बहुतों में हैं, पर गुण के प्रकाश से सब घबराये। इसलिए समर्पण स्थगित रखता हूँ।'

'कुल्ली भाट' जैसा चरित्र गढ़ने वाले निराला अत्यन्त स्पष्टवादी हैं वे स्वीकार करते हैं कि पं0 पटवारीदीन जी भी (कुल्ली भाट) मेरे मित्र थे। उनका परिचय इस पुस्तिका में है। उनके परिचय के साथ मेरा अपना चरित भी आया है, और कदाचित् अधिक विस्तार पा गया है। रूढ़िवादियों के लिए यह दोष है, पर साहित्यिकों के लिए विशेषता मिलने पर गुण होगा। मैं केवल गुण-ग्राहकों का भक्त हूँ।'

कुल्लीभाट निराला के लिए मुनष्य पहले थे उनके चरित्र को प्रस्तुत करने में हास-परिहास का रंग निराला भरते हैं और सफल भी होते हैं। स्वयं अपने ऊपर व्यंग्य के बाणों का संधान करते हुए वे कभी निर्मम होते हैं तो कभी हास-परिहास से परिपूर्ण हो जाते हैं कुल्ली के सम्बन्ध में एक रोचक प्रसंग दृष्टव्य है

'सुबह सूरज की किरन फूटने के साथ कुल्ली आये थे। हमने कहा, अभी सो रहे हैं। उन्होंने फिर आने के लिए कहा है। लेकिन भैया कुल्ली से मिलना-जुलना अच्छा नहीं ।'

मैंने कहा, 'जब वह खुद मिलने के लिए आवेंगे, तब मिलना ही होगा। 'लेकिन वह आदमी अच्छे नहीं' सासुजी ने गम्भीर भाव से कहा।

'तो भी आदमी हैं इसलिए... हमारा यह मतलब नहीं कि वह सींगवाले हैं। आदमियों में ही आदमी की पहचान होती है।'

उसी कुल्ली भाट की मृत्यु होने के बाद वे 'एकादशाह' करवा रहे हैं पूरे विधि-विधान से। इस प्रसंग को निराला कुछ इस प्रकार वर्णित करते हैं

यथा समय मैं आँगन में जाकर बैठा। सामने हाथ जोड़कर कुल्ली की स्त्री बैठी । लोग कोई खड़े, कोई बैठे । कोई भीतर, कोई बाहर। मैं चौक पूरने लगा। सुरबग्घी लड़कपन में बहुत खेल चुका था। वैसा ही एक चौकोर घेरा बनाया....

मन्त्र पढ़ते वक्त बार-बार अटकता था, क्योंकि पण्डिताऊ स्वर नहीं निकल रहा था। कुछ देर सोचता रहा ब्रजभाषा काल में हूँ, सूरदास का सूरसागर और तुलसीदास की रामायण पढ़ रहा हूँ। अपने आप वैसा ही मनोमण्डल बन गया। फिर क्या, अपनी संस्कृत शुरू की।'

इस प्रकार यह उपन्यास निराला के परिवेश को रेखांकित करता है जहाँ एक पात्र के रूप में वे उपस्थित हैं और पूरे प्रकरण पर समीक्षात्मक दृष्टि भी रखते हैं। वर्ष 1942 में आया द्वितीय चरण का दूसरा उपन्यास 'बिल्लेसुर बकरिहा' जिसे निराला अपने समकालीन उपन्यासकार अमृतलाल नागर को सस्नेह भेंट करते हैं और इसे 'हास्य लिये एक स्केच' बताते हैं सन् 1945 में इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित होता है जिसके 'निवेदन' में वे कहते हैं

'बिल्लेसुर बकरिहा' प्रगतिशील साहित्य का नमूना है। मित्रों ने इसका बड़ा समादर किया है। बड़ी स्तुति की है पत्रों में काफी निबन्ध आलोचनाएँ इस पर आ चुके हैं।'

निराला स्वयं कहते हैं 'कला ऐसी है जैसे तीन छोटी-बड़ी कहानियाँ एक जोड़ के साथ रख दी गयी हैं। अन्त समाप्त होकर भी लटका हुआ है।' सोलह उपखण्डों में विभक्त यह उपन्यास निराला के लेखन का सहज प्रवाह प्रस्तुत करता है। उपन्यास का अन्त करते हुए वे कहते हैं

बारात निकली। अगवानी, द्वारचार, ब्याह, भात, छोटा-बड़ा आहार, बरतौनी, चतुर्थी, कुल अनुष्ठान पूरे किये गये। वहाँ इन्हीं का इन्तजाम था। मान्य कुल मिलाकर पाँच। बाकी कहार, बाजदार, भैयाचार। चार दिन के बाद दूल्हन लेकर बिल्लेसुर घर लौटे। फिर अपने धनी होने का राज जीते-जी न खुलने दिया।'

'चोटी की पकड़' निराला का दूसरे चरण का तीसरा उपन्यास है जो सन् 1946 में किताब महल, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। इसमें निराला दूसरे रूप में दिखायी देते हैं। यह उपन्यास वे स्वामी विवेकानन्द जी की पुण्य स्मृति को समर्पित करते हैं यह उपन्यास स्वदेशी आन्दोलन की कथा के ताने-बाने में बुना गया है। यह उपन्यास निराला के अन्य उपन्यासों की अपेक्षा विस्तृत आकार वाला है। इसमें उन्तालीस उपखण्ड हैं। इस उपन्यास की भाषा अन्य उपन्यासों की भाषा से भिन्न है

'यूसुफ छनके। पिता से कुल हाल कहा। अली स्वदेशी के मामले से, राजों के कलकत्ते वाले को चमैनों से मिले, उनमें किसी का लड़का थानेदार न हुआ था, अली को इज्जत से बैठाला। सच झूठ हाल सुनाकर आन्दोलन में सरकार की मदद के लिए अली ने उनको उभाड़ा। उन्होंने साथ देने को कहा और अली के गिरोह में आ गये। खिलाफ कार्रवाई में भेद देने का इरादा पक्का कर लिया। कुल काम कर चले।'

इसके बाद आया निराला का उपन्यास 'काले कारनामे' जिसका प्रकाशन काल सन् 1950 है। इसका प्रथम संस्करण कल्याण साहित्य मन्दिर, प्रयाग से निकला था। यह उपन्यास निराला का अधूरा उपन्यास कहा जाता है। प्रथम संस्करण की भूमिका में प्रकाशक ने लिखा है 'निराला जी की अस्वस्थता के कारण यह उपन्यास काफी दिनों से अधूरा पड़ा था। इस भय से कि कहीं निराला जी की यह नवीन कृति अन्धकार में ही विलुप्त न हो जाय, हम इसे इसी रूप में पाठकों के समक्ष रख देना अपना एक पुनीत कर्तव्य समझते हैं।'

'काले कारनामें' में गाँव के तिकड़म, जमींदारों के आपसी झगड़े, पुलिस थाना आदि का चित्रण है। कथ्य शिल्प भाषा की दृष्टि से यह उपन्यास अन्य उपन्यासों की भाँति महत्त्वपूर्ण है। प्रकृति चित्रण और परिवेश के वर्णन को निराला ने इस उपन्यास में अधिक महत्त्व दिया है

'हरे-भरे बागों की कतार के किनारे से रास्ता था। वरन फूली नहीं समा रही थी। इतनी खुशबू किसी इत्र की दूकान में भी नहीं मिलती और ऐसी अच्छी। उसके नीचे से एक चौगड़ा कूदता हुआ दूसरी झाड़ी की तरफ चला गया। चिड़ियाँ बसेरे को लौट रहीं थीं। डालों पर चहक रही थीं । सूरज सामने अस्त होने को था। मनोहर के पिता घर लौटे।'

इस उपन्यास को निराला पूरा नहीं कर सके। इसी प्रकार 'चमेली' और 'इन्दुलेखा' भी उनके अधूरे उपन्यास हैं। 'चमेली' का अंश 'रूपाभ' मासिक जो कालाकांकर से प्रकाशित होती थी के फरवरी 1939 में प्रकाशित हुआ था वहीं 'इन्दुलेखा' का अंश 'ज्योत्सना मासिक जो पटना से प्रकाशित होता था के दीपावली अंक 1960 में प्रकाशित हुआ था। इस प्रकार निराला जी 'काले कारनामे', 'चमेली' और 'इन्दुलेखा' उपन्यास को पूर्ण नहीं कर सके।

कुछ अस्वस्थता और कुछ अन्य प्रकार की व्यस्तता के बीच निराला के ये तीन अधूरे उपन्यास उनकी औपन्यासिक दृष्टि का विस्तार ही माने जा सकते हैं। 'काले कारनामे' उपन्यास अधूरा होते हुए भी पर्याप्त विस्तृत है रही बात 'चमेली' और 'इन्दुलेखा' की तो यह मात्र प्रारम्भ ही हुए थे।

निराला साहित्य में कविता का जितना अवदान है उससे कम महत्त्वपूर्ण निराला के उपन्यास नहीं हैं यह अलग बात है कि निराला की प्रतिष्ठा एक कवि के रूप में अधिक है। उपन्यासकार निराला की विस्तृत सृजन-दृष्टि को सादर नमन।

मो0- 9415551878

सुमित्रानन्दन पंत की कविता में अध्यात्म

➲ डॉ0 सत्येन्द्र कुमार दुबे

हिंदी में छायावाद वह समय है जब लगभग साढ़े सात सौ साल बाद विशाल भारत की एकत्र सांस्कृतिक विरासत समूचे देश में अखंड भारत की भावना और राष्ट्रीय अस्मिता का भाव भर रही थी। भारतीय इतिहास में यह बात सर्वज्ञात है कि प्राचीन भारत में हर्षवर्धन के बाद कोई दूसरा शासक ऐसा नहीं हो सका जिसने संपूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधने का प्रयास किया हो। हर्षवर्धन के बाद राजपूत रजवाड़ों का आपसी कलह और कालांतर में विदेशियों के हमले तथा लम्बे समय तक उनका शासन भारत को एक बड़े कालखंड तक विषाद में बांधे रखा, किंतु बीसवीं शताब्दी के आरंभिक समय में जिस तरह का परिदृश्य भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का बनने लगा, उसको देखकर आभास होने लगा था कि अब भारत को अंग्रेजों से मुक्ति मिलने के दिन बहुत दूर नहीं हैं। इसी आशा और आत्मविश्वास के कारण भारत को अपने स्वर्णिम अतीत का स्मरण भी होता है और भारतीय सांस्कृतिक विरासत को पुरस्कृत करने का भाव जागृत होता है तथा इसके साथ ही मिलने वाली विजय की भावना ने भारतीयों में विजेता का गौरव बोध भर दिया था। यह सहज देखा जा सकता है कि छायावादी समय का समाज और साहित्य एक तरफ अपने राष्ट्र की वर्तमान दशा से दुखी है, तो दूसरी तरफ स्वाधीन भारत के आदर्श स्वरूप की संकल्पना मात्र से आनंदित भी है। दुख और आनंद के इसी द्वन्द्व में समस्त छायावादी कवियों में रहस्यवाद की भी झलक देखने को मिल जाती है।

भारतीय संदर्भ में आधुनिकता एक विशिष्ट प्रत्यय है। विश्वव्यापी आधुनिकता में जहाँ तार्किकता, इहलौकिकता, प्रश्नाकुलता, तकनीक, औद्योगिकी और वैज्ञानिकता जैसे तत्व महत्वपूर्ण हैं, वहीं भारत के संदर्भ में आधुनिकता का प्राथमिक पड़ाव है आत्मशुद्धि का प्रयास अर्थात रूढ़ियों से अवमुक्ति। यही कारण है कि आधुनिक भारत के निर्माण का कार्य नवजागरण की चेतना से आरंभ होता है, जहाँ भारतीय समाज अपनी पुरानी कुरीतियों का परित्याग कर आत्मशुद्धि के मार्ग पर आगे बढ़ रहा होता है। इतना ही नहीं मध्यकालीन लोकजागरण के दौर में भक्ति का विचार आंदोलन का रूप इसीलिए ले सका कि विविध संप्रदायों में आत्मनिरीक्षण का संदेश समान रूप से उपस्थित है। यह देखा जा सकता है कि भक्ति आंदोलन के जागरण अभियान में भी पुरानेपन से मुक्ति की कामना है, महात्मा कबीर उसके प्रखर वक्ता के रूप में दिखाई देते हैं, साथ

ही देखा जा सकता है कि पौराणिक विषयों को भक्तिकालीन रचनाकारों ने अपने समय की मांग के अनुरूप किंचित परिवर्तन के साथ प्रस्तुत किया है। सारांश यह है कि भारतीय आधुनिकता में प्राचीन से पूर्ण मुक्ति नहीं है तथा नवीन की अंधस्वीकृति भी नहीं है। छायावाद के समय अर्थात 1920 के आस-पास तक आते-आते भारतीय समाज में आत्मशुद्धि की स्थिति बहुत ही संतोषजनक दिखाई देती है।

छायावादी कवियों में सुमित्रानंदन पंत ने अपने समय की कविता के लिए खड़ी बोली को अपरिहार्य माना। हरिऔध और प्रसाद जैसे रचनाकारों की ब्रजी की रचनाओं को देखकर पंत जी इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आधुनिक भारत के हिंदी साहित्य का स्वर खड़ी बोली के माध्यम से ही अभिव्यक्त होना चाहिए। पल्लव की भूमिका में पंत जी खड़ीबोली में राजपथ का विस्तार और व्यापकता लक्षित करते हुये आगे लिखते हैं- ''खड़ी बोली आगे की सुवर्णाशा है, उसकी बाल कला में भावों की लोकोज्ज्वल पूर्णिमा छिपी है। वह हमारे भविष्याकाश की स्वर्णगंगा है, जिसके अस्पष्ट ज्योति पुंज में न जाने कितने जाज्वल्यमानव सूर्य शशि, असंख्य ग्रह-उपग्रह अमन्द नक्षत्र तथा अनिन्द्य लावण्य लोक अंतर्हित हैं।'' फिर पंत जी की सौन्दर्य चेतना की अभिव्यक्ति खड़ी बोली के माध्यम से होती हुई दिखाई देती है।

प्रकृति की सुकुमारता का वर्णन करने और कोमल कल्पना के माध्यम से पंत जी को एक विशिष्ट पहचान मिली है। वास्तविकता यह है कि पहाड़ी होने के नाते पंत जी के लिए प्रकृति अनिवार्य हो गई। उनकी रचनाओं में प्रकृति का अनिवार्य रूप से उपस्थित रहना उनकी प्रकृति के प्रति आकर्षण ही नहीं है बल्कि प्रकृति के बिना वे कोई अभिव्यक्ति प्रस्तुत कर सकने में अक्षम दिखाई देते हैं। वृक्ष, बादल, आकाश, नदी, छाया, वर्षा, आतप, रश्मि, नक्षत्र आदि के बिना पंत जी कुछ कैसे कह सकते हैं, अर्थात प्रकृति पंत जी के लिए विषय कम और शिल्प अधिक है।

पंत जी की रचनाशीलता में आध्यात्म एक पक्ष मात्र नहीं है, बल्कि यह कहना अधिक ठीक होगा कि पंत के काव्य-चिंतन के केंद्र में अध्यात्म ही है। उनकी रचना के विविध सोपानों को ध्यान में रखें, तो उनके सौंदर्यवादी युग की कविताओं से लेकर आगे क्रमशः यथार्थवादी युग अंतश्चेतनावादी युग तथा नव-मानवतावादी युग की समस्त रचनाओं में जीवन और जगत के पृथक-पृथक व अंतर्संबंधित विश्लेषण की प्रणाली अध्यात्मिक ही है। प्रकृति से सीधे संवाद और प्रकृति का मानवीकरण छायावादी कवियों में सबसे अधिक पंत जी ने ही किया है। संपूर्ण जगत को अभिन्नता में देखना, दृष्टा की अध्यात्मिक चेतना का ही परिणाम है। तुलसी को संपूर्ण जगत सियाराममय यदि दिखाई देता है, तो यह उनकी अध्यात्मिक चेतना है जो आत्मावत् सर्वभूतेषु को देखती-परखती है। उसी प्रकार पंत जी 'छोड़ द्रुमों की मृदु छाया तोड़ प्रकृति से भी माया, बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन, भूल अभी से इस जगह को।'' की सौन्दर्य चेतना में अध्यात्मिक रंग देखा जा सकता है।

पंत जी की आरंभिक युग की कविताओं में प्रकृति का कोमल और सुंदर रूप देखने को मिलता है। अतः उसे प्राकृतिक सौंदर्यवादी युग की रचनाएँ कहा जाता है। प्रकृति के इन कोमल और सुंदर रूपों के भीतर पंत जी रहस्य की भी सृष्टि करते हैं। इन रहस्यवादी रचनाओं का आधार भले ही आध्यात्मिक है, किंतु ये रहस्य, प्रश्नों की जो झड़ी लगाते हैं, उन प्रश्नों में भारतीय ढंग की आधुनिकता की प्रश्नाकुलता भी देखी

जा सकती है- ''न जाने नक्षत्रों से कौन, निमंत्रण देता मुझको मौन-'' अर्थात पुराने की कितनी स्वीकृति होनी चाहिए तथा नए का कितना स्वागत, यह तय करने के लिए भौतिक जगत के यथार्थ और व्यक्ति के आत्म रूप की संगति-असंगति का विश्लेषण करना अत्यंत आवश्यक है। ऐसा प्रतीत होता है कि सुमित्रानंदन पंत आत्मा और जीवन अथवा विश्व के मध्य परमात्मा की मध्यस्थता स्वीकार नहीं करते जबकि वे श्रद्धा विश्वास आस्था और आस्तिकता से भरे पूरे हैं।

प्राकृतिक सौंदर्य और अध्यात्म का अंतर्संबंध पंत जी की कविताओं में सर्वत्र दिखाई देता है। प्रत्यक्ष जगत में गंभीर दार्शनिकता का आरोप करने वाली उनकी कविता 'नौका विहार' इस संदर्भ में विशेष रुप से रेखांकित करने योग्य है। 'नौका विहार' कविता में एक कथात्मकता है। प्राकृतिक बिम्ब हैं, तो मानवीय प्रेम के मनोरम प्रसंग का भी संकेत है, किन्तु रचना के अन्त में आकर कवि रचना के भीतर की समूचा सौंदर्य, प्रेम और प्राकृतिक दृश्यों की यात्रा को एक अध्यात्मिकता की ओर मोड़ देता है- ''इस धारा सा ही जंग का क्रम, शाश्वत इस जीवन का उद्‌गम, शाश्वत है गति शाश्वत संगम।'' यहाँ मानो जीवन के इसी अध्यात्मिक पक्ष को विषय के रूप में रखने के लिए पंत जी ने ज्योत्स्ना, नदी, द्वीप, लहरों, आदि की भूमिका बाँधी थी ।

सन् 1935 के बाद हिन्दी साहित्य के पटल पर छायावाद का सौंदर्य, प्रेम, कल्पनाशीलता, रहस्य आदि चीजें अपनी स्वाभाविक उड़ान के साथ नहीं रहीं। पंत की रचना यात्रा में यहीं से उनके यथार्थवादी दौर का आरंभ होता है। मानव जीवन के यथार्थ को सामने रखकर इस युग के कवि का सौंदर्यबोध निर्मित होता है। 'युगांत', 'युगवाणी', 'ग्राम्या', 'युगपथ', 'पल्लविनी' और 'आधुनिक कवि' में पंत का जगत के प्रति दृष्टिकोण यथार्थवादी है, किंतु विश्लेषण प्रणाली अध्यात्मिक ही है। अपने चिंतन के सौंदर्यवादी समय में जहाँ पंत जी ''छोड द्रुमों की मृदु छाया, तोड़ प्रकृति से भी माया, 'बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन' भूल अभी से इस जग को'' का विचार व्यक्त करते हैं, वही जब वे यथार्थवादी धरातल पर आते हैं, तो 'गुंजन' करते हैं कि ''सुंदर हैं विहग, सुमन सुंदर, मानव तुम सबसे सुंदरतम।'' हालाँकि अपने 'छायावाद' ग्रंथ में नामवर सिंह इस प्रसंग में छायावादी कवियों के प्रकृति प्रेम को आर्यसमाज की द्विवेदी युगीन कट्टर नैतिकता के प्रभाव से जोड़कर देखते हैं। उनका मानना है कि छायावादी कवि आरंभ में नारी से इसी कट्टर नैतिकता के कारण दूरी बनाये हुये दिखाई देता है, किन्तु धीरे-धीरे उसका संकोच दूर हो जाता है। अपने मत की पुष्टि वे रामनरेश त्रिपाठी के 'पथिक' से करते हैं, जहाँ वह पत्नी से दूर हो जाता है, किन्तु आगे चलकर वह अपने पत्नी अधिकारों की मांग करता है। नामवर जी का इस प्रकार का विश्लेषण उनकी प्रतिबद्ध मार्क्सवादी सोच का परिणाम मात्र प्रतीत होता है, जो विशुद्ध ऐतिहासिक विश्लेषण से बहुत दूर प्रतीत होता है।

पंत जी 1938 में रूपाभ पत्रिका के प्रथम अंक का संपादन करते हुए लिखते हैं- ''कविता के स्वप्न भवन को छोड़कर हम इस खुरदुरे पथ पर क्यों उतर आए..... यदि हमें सत्य के प्रति वास्तविक उत्साह है तो हम अपने महान उत्तरदायित्व की अवहेलना नहीं कर सकते। हमारा निश्चित ध्येय प्रगति की शक्तियों को सक्रिय योग देना होगा।'' स्पष्ट है कि पंत जी की रचना यात्रा के विविध चरण उनके बदलते सौंदर्यबोध के कारण नहीं हैं। जब वे अपने चिंतन के यथार्थवादी युग में रचना

को छायावादी कल्पना लोक से विमुक्त करते हैं, तो उनके चिंतन में मानव और जीवन अथवा जगत महत्वपूर्ण होता है। पंत जी की सौंदर्यवादी युग की रचनाओं में घटनाओं और सामाजिक परिस्थितियों का ब्यौरा प्रस्तुत करने के लिए कोई अवकाश नहीं है । इसकी पूर्ति उन्होंने अपने यथार्थवादी और अंतिम पड़ाव पर आकर सम्पन्न होने वाली नवमानवतावादी युग की रचनाओं में की है। अपने घोर यथार्थवादी चिंतन में भी उन्होंने मानव जीवन के महत्व की आध्यात्मिक व्याख्या ही की है। यही कारण है कि वे कार्ल मार्क्स को पसंद करने के बाद भी मार्क्सवादी नहीं हैं। 'युगांत' (1936) में पंत जी ने अपनी प्रगतिशील दृष्टि का परिचय दिया तथा 'युगवाणी' (1929) में पुराने की समाप्ति की घोषणा करते हुए वे कह चुके हैं- ''द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र. ...'' तो इसी संकलन में ''हो पल्लवित नवल मानवपन'' की नवीनता की बात भी करते हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रसाद जी ने कामायनी (श्रद्धा सर्ग) में ''पुरातनता का निर्मोह सहन करती न प्रकृति पल एक। नित्य नूतन का आनंद, किए हैं परिवर्तन में टेक।।'' कहते हुए प्राचीनता और नवीनता के विस्थापन- स्थापन की अनिवार्यता पर बल देते हैं। यही भारतीय मनीषा का अध्यात्मिक चिंतन है। भारतीय दार्शनिक चिंतन में आत्मा का आवागमन अथवा जन्म-पुनर्जन्म ऐसे ही प्राचीन अध्यात्मिक चिंतन की उपज है। पंत जी जब साम्यवाद की प्रशंसा करते हैं, तो उनकी दृष्टि साम्यवादियों से भिन्न दिखाई देती है। साम्यवाद में जहाँ साम्यवादी सर्वहारा की मुक्ति देखते हैं, वही पंत जी इसमें मनुष्य ही नहीं बल्कि मानवता की मुक्ति देखते हैं। यह पंत की अपनी अध्यात्मिक दृष्टि का ही परिणाम है

समाजवाद, गांधीवाद और मार्क्सवाद में पंत की जिज्ञासा प्रवेश तो करती है, लेकिन वह उनमें अपनी जगह नहीं खोजती, बल्कि विभिन्न विचार सरणियों से गुजरते हुए आत्मा को विश्वात्मा से जोड़ने की युक्ति खोजती है। उनका चिंतन निरंतर गतिशील है। यही कारण है कि उनकी आरंभिक सौन्दर्य चेतना एक बार पुनः जागृत होती है, जो यथार्थवाद और प्रगतिवाद के अनुभवों से गुजरने के कारण एक नए ढंग के भावबोध के धरातल पर आती है, जहाँ उसे अरविंद दर्शन का अवलंबन मिलता है और पंत की काव्य यात्रा में गहरे दार्शनिक भाव बोध का प्रवेश होता है। अरविंद दर्शन से प्रभावित होकर पंत जी की मूल सौन्दर्य भावना का स्वाभाविक विकास होता है और मनुष्य-शक्तियों के प्रति विश्वास और भी प्रबल हो जाता है। वे संकुचित दृष्टि वाले भौतिकवादियों को कबीर की तरह फटकारते हैं- ''आत्मवाद पर हँसते हो, भौतिकता का रट नाम। मानवता की मूर्ति गढ़ोगे तुम सवाँर कर चाम।।''

इसी प्रकार पंत जी 'ग्राम्या' में मनुष्य के भीतर की वर्गीय पहचान को दरकिनार कर सर्वप्रथम जीव और मानव के रूप में उसके महत्व की प्रतिष्ठा करते हैं- ''मनुष्यत्व के मान वृथा, विज्ञान वृथा, रे दर्शन । वृथा धर्म, गणतंत्र उन्हें यदि प्रिय ने जीव जन जीवन।।''

पंत जी की 'स्वर्ण किरण', 'स्वर्ण धूलि', 'उत्तरा', 'अतिमा', 'रजत शिखर', 'शिल्पी', 'वाणी', 'किरण वीणा' रचनाएँ अरविंद दर्शन से प्रभावित रचनाएँ हैं। अरविंद दर्शन में भौतिक जीवन का सार भी महत्वपूर्ण है। भौतिक चिंतन को भी आध्यात्मिक चिंतन की ही पद्धति मानने वाले अरविंद दर्शन ने पंत का सारा भ्रम ही दूर कर दिया।

यह बड़ा ही महत्वपूर्ण है कि अपनी रचना

यात्रा अथवा चिंतन यात्रा के विविध चरणों में पंत जी ने अपनी किसी भी पूर्ववर्ती सोच का पूर्णतः परित्याग नहीं किया। अपने अध्यात्मिक अंतश्चेतनावादी चिंतन के समय में भी कवि ने पूर्व की समाजवादी सोच को बनाए रखा- ''वही सत्य कर सकता, मानव जीवन का परिचालन। भूतवाद हो जिसका रज-तन, प्राणिवाद जिसका मन, औ' अध्यात्मवाद हो जिसका हृदय गंभीर चिरंतन।''

पंत जी ने अपनी अंतश्चेतनावादी युग की रचनाओं में सामाजिक समस्याओं, विशेषकर स्त्री विषयक समस्याओं का भी वर्णन किया और यहाँ तक आते-आते कवि की कोमल कल्पना वाली सौंदर्य चेतना का समाज कल्याण संबंधी चिंतन में पर्यवसान होता सहज ही देखा जा सकता है। पंत जी के अध्यात्मिक चिंतन को यदि स्थूल रूप से व्याख्यायित किया जाये, तो कहा जा सकता है, कि बाहरी जगत में संतुलन बनाने से ही काम नहीं चलेगा बल्कि मनुष्य के लिए आंतरिक संतुलन भी आवश्यक है जिसके लिए साधना और आस्तिकता आवश्यक है। 'स्वर्ण किरण' में वे कहते हैं-'' फिर श्रद्धा विश्वास प्रेम से मानव अन्तर हो अन्तः स्मित, संयम तप की सुन्दरता से जग-जीवन शतदल दिक् प्रहसित।''

पंत जी की काव्य-यात्रा के अंतिम पड़ाव के रूप में नव मानवतावादी युग को रखा ही जाता है। इस युग की उनकी श्रेष्ठ कृति 'लोकायतन' है। इस विशाल काव्य ग्रंथ में पंत जी ने स्वीकार किया है अथवा संदेश दिया है कि साहित्य किसी समुदाय, समाज या राष्ट्र मात्र का नहीं बल्कि संपूर्ण मनुष्यता का कल्याण करने के लिए रचा जाना चाहिए - ''कविमनीषी का कर्तव्य सनातन। जीवन मंगल का करना सुख सर्जन।।'' अपनी रचना यात्रा के अंतिम दौर में कवि की सौंदर्य चेतना बौद्धिक चेतना तथा सूक्ष्म चेतना परस्पर अंतरसम्मिलित हो जाती है। 'उत्तरा' की प्रस्तावना में वे लिखते हैं-'' मनुष्य के अतर्जगत तथा भविष्य की अस्पष्ट झाँकियाँ देखकर नवीन मानव चेतना को झकझोरने में ही अपने जीवन की सफलता है।

यह कहना ठीक ही होगा कि साहित्य का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य है संपूर्ण जगत में प्रेम की प्रतिष्ठा अर्थात् किसी से किसी का किसी प्रकार का दुराव न हो, यही भारतीय चिंतन परंपरा का 'वसुधैव कुटुंबकम' भी कहता है, भारतीय साहित्य भी और सुमित्रानंदन पंत भी- ''वह हृदय जो ना करे प्रेमाराधन, मैं चिर प्रतीति में स्नान कर सकूँ प्रतिक्षण।''

सहयुक्त आचार्य-हिन्दी
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु
सिद्धार्थ नगर-272202, उत्तर प्रदेश।
मो0- 8707281835

चित्र-काव्य और सुमित्रानन्दन पंत

➲ डॉ0 बिनय षडंगी राजाराम

शैवदर्शन के अनुसार महामाया के पाँच कंचुक हैं-काल, नियति, राग, विद्या और कला। महामाया के रूप और शक्ति को बढ़ाने वाले ये पाँच कंचुक शिव के लिए प्रेरणा का कार्य करते है तथा उन्हीं से प्रेरित हो कर आनंदातिरेक की अवस्था में पहुँच कर सृष्टि-संरचना के लिए प्रवृत्त होते हैं। 'ललिता स्तवः स्तोत्र' के अनुसार शिव महाशक्ति-महामाया से प्रेरित हो कर सृष्टि की रचना करते हैं। शिव की लीला सहचरी होने के कारण महामाया आदि शक्ति को 'ललिता' कहा गया है। महामाया के इसी लालित्य-स्वरूप से समस्त ललित कलाओं की उत्पत्ति हुई।

ऐसी ही पुरागाथा यूनान में भी प्रचलित रही। यूनान के विचारक प्लेटो ने कला विषयक अपने विचारों में इस कथा का संदर्भ दिया है- 'एक समय भगवान समस्त विश्व के प्राणियों को उनकी सुरक्षा के लिए विभिन्न उपादान प्रदान कर रहे थे। शेर को नख- दंत, भैंस को सींग, किसी को घने बाल, किसी को कठोर त्वचा, किसी को विष ग्रंथि आदि भगवान ने सबको बाँट दिए। मनुष्य देर से पहुँचा इसलिए उसको कुछ नहीं मिला। तब मनुष्य ने स्वर्ग में सेंध लगाई और वहाँ से एक अग्निपिंड चुरा लाया। वह आग 'चातुर्य' की आग थी। उसी आग से मनुष्य ने विभिन्न कलाओं का विकास किया और अपने कला-कौशल के आधार पर वह सब प्राणियों में श्रेष्ठ बना।'

यह तो अकाट्य सत्य है कि कला ही मनुष्य को मनुष्य बनाती है। -

''साहित्य संगीत कला विहीना,
साक्षात् पशु पुच्छ विषाण हीना''।

साहित्य और संगीत तथा अन्य सभी कलाएँ तत्वतः एक-दूसरे से जुड़ी हैं और अन्यान्याश्रित भी हैं। संगीत आदिम स्वर से आगे बढ़ कर साहित्य अर्थात काव्य के साथ जुड़ता है तब अपने रंजक-रूप का विकास करता है। साहित्य जब चित्रोपमता को अपनाती है तभी अपने श्रेष्ठ अभिव्यक्ति को प्राप्त करती है। नाटक में सभी कलाओं का समावेश होता है, इसीलिए उसे भारतीय वाङ्मय में पंचम वेद की संज्ञा दी गई है। अभिप्राय यह है कि सभी कलाएँ स्थूल अथवा सूक्ष्म रूप से एक दूसरे से तत्वतः संपृक्त हो कर ही पूर्णता को प्राप्त करती हैं।

चित्र का एक विशेष पक्ष और भी है। जब शब्द या भाषा का विकास नहीं हुआ था तब भी वह मनुष्य की अभिव्यक्ति का आधार बना। प्राचीन गुफा-चित्र इसके

प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। आज भी आदिवासी, वनवासी अथवा सामान्य ग्रामीण, कलाओं के विविध माध्यमों के द्वारा अपनी अभिव्यक्ति को साकार करते हैं।

कलाओं के विविध स्वरूपों में तात्विक अन्तर्निभरता के महत्व को अभिव्यक्ति के सिद्धांत से जोड़कर देखें तो वेद-उपनिषदों के समय से ही काव्य और चित्र का अथवा काव्य में चित्रात्मकता का महत्व अधिक स्पष्टता के साथ उभर कर सामने आता है। काव्य में बिंब विधान का विकास चित्रात्मक अभिव्यक्ति के आधारभूत गुण से हुआ है। काव्य में चित्रोपमता की यह विशिष्टता वेदों-उपनिषदों के समय से देखने को मिलती है। पृथ्वी सूक्त, मुण्डकोपनिषद और अन्यत्र भी जीवात्मा-परमात्मा को ठीक से समझाने के लिए, प्रकृति के महत्व को स्पष्ट करने के लिए, स्थान-स्थान पर सुन्दर चित्रात्मक बिंबों के प्रयोग किए गए हैं।

मुण्डकोपनिषद के अनुसार- 'दो सुन्दर चिड़ियाँ सफेद और काली, जागती और सोती, मानो छायातप की भाँति एक साथ रह रही हैं। एक चिड़िया फल चख रही है, गा रही है। दूसरी चुप-चाप बैठी देख रही है।-

''द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्चन्नन्योऽभिचाकशीति।।''

दोनों चिड़ियाँ यहाँ जीव और आत्मा की प्रतीक हैं।

विद्याचरण मुनि विरचित 'पंचदशी' ग्रंथ के 'चित्रदीप' प्रकरण में कला के प्रतिमानों का गंभीर विवेचन किया गया है। वे लिखते हैं - 'जिस प्रकार पट-चित्र की चार अवस्थाएँ बताई गई हैं उसी प्रकार परमात्मा की भी चार अवस्थाएँ जाननी चाहिए।'

ऐसा प्रतीत होता है कि आगे चल कर शंकुक ने जिस 'उत्पत्ति वाद' एवं 'अनुमिति वाद' की स्थापना की है उसका आदि सूत्र 'पंचदशी' के चित्रदीप प्रकरण से ही निकला है। लोल्लट के 'आरोपवाद' के अनुसार रज्जू में सर्प का आभास होता है तथा 'चित्रदीप' के अनुसार चित्रगत वस्त्रादि वस्त्राभास मात्र होते हैं। शंकुक के 'अनुमितिवाद' के अनुसार 'चित्रदीप' में भी वस्त्रादि पहनाए जाने की कल्पना की जाती है जो वस्तुतः वस्त्रादि नहीं होते जैसे कि चित्र में घोड़े को देखकर घोड़े की कल्पना कर ली जाती है।

काव्य और कला के अंतः सम्बन्ध की जब चर्चा होती है, तब प्रायः काव्य में प्रयुक्त बिंब विधान को ही महत्व दिया जाता रहा है। सुन्दर-सटीक बिम्बाभिव्यक्ति को चित्रोपमता की संज्ञा देकर काव्य में चित्र का आरोपण कर लिया जाता है और चित्र तथा काव्य के सह-अस्तित्व की स्थापना हो जाती है।

चित्र-निर्माण के आधारभूत छः तत्वों का उल्लेख भरत के नाट्य-शास्त्र और 'चित्रसूत्र' में भी मिलता है-

''रूपभेदा प्रमाणानि भाव लावण्योजनम्।
सादृश्यम् वर्णिकाभंगम् इति चित्रम् षडंगकम्।।''

रूप अर्थात् दृश्य जगत में व्याप्त रूपाकार, प्रमाण में विविध रूपों-आकारों का, दूर-पास का अंतर, विविध भावानुभावों के चित्रण से दृश्यमान लावण्य की अभिव्यक्ति, उपमा-रूपक आदि के समरूप सादृश्य अंकन तथा रंगों-रेखाओं के संयोजन चित्र को साकार करते हैं। अस्तु, काव्य में चित्रात्मकता का आधार मात्र बिंब विधा में निहित है ऐसा मानना तुलना-विपर्यय को दर्शाता है।

मेरा मानना है कि काव्य में चित्रात्मकता का आधार चित्र के अन्य सभी उपादानों के सांगोपांग

समानताओं के आधार पर किया जाना चाहिए। निश्चित ही काव्य में चित्रोपमता के व्यापक स्वरूप को समझने के लिए यह एक आदर्श स्थिति होगी।

कालिदास के अनेक पदों में सांगोपांग चित्रात्मकता दिखाई देती है। 'शाकुन्तलम' में आश्रम का वर्णन करते हुए कालिदास ने एक स्थान पर मृग-मृगी का ऐसा सुंदर चित्र उपस्थित किया है कि लगता है हम उस दृश्य को साक्षात् देख रहे हैं। 'शाकुन्तलम' में ही रथ के वेग को स्पष्ट करने के लिए कालिदास ने गतिमान रथ के आस-पास के वृक्ष-लताओं को 'रेखा सादृश्य' दिखाई देने का वर्णन किया है। यह चित्रत में 'प्रमाण' की उपस्थिति है। कण्व आश्रम से लौट कर जब दुष्यन्त शकुन्तला का चित्र बनाते हैं जिसमें चितित्र भ्रमर साक्षात् उड़कर बाहर आ जाएगा ऐसा भी वर्णन आता है जो 'सादृश्य बोध' की पराकाष्ठा है।

रीतिकाल में, विशेष रूप से बिहारी के पदों में चित्रकला के तत्वों का सजीव-सटीक आरोपण हुआ है और बारंबार हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है। कालिदास की तरह बिहारी भी चित्र कला के पारखी थे। सतसई का पहला ही दोहा इस दृष्टि से अद्‌भुत है-

"मेरी भवबाधा हरो राधानागरी सोई।
जा तन की झाँई परै श्याग हरित दुति होय।"

इस दोहे में कला पारखी कवि बिहारी ने लिखा है - श्याम रंग में पीत रंग के मिलने से हरित रंग बन जाता है। यहाँ चित्रकला के वर्णिका भंग तत्व का सुन्दर समावेश हुआ है एक और दोहा है बिहारी का'

"कर समेटि भूज उलटि खाएँ सीस पर डारि।
काको मन बाँधे न यह जूरो बाँधन वरि।।"

हाथ ऊपर करके जूड़ा बाँधने वाली नायिका का यह दृश्य काव्य में साक्षात् चित्र के दर्शन कराता है।

रीतिकाल में चित्र और काव्य के अन्योन्याश्रित संबंधों के संकेत कलाविद कुमार स्वामी और वासुदेव शरण अग्रवाल ने खुलकर दिए हैं। कुमार स्वामी के अनुसार 'मध्यकालीन चित्रों को समझने के लिए तत्कालीन साहित्य का अध्ययन आवश्यक है।' वासुदेव शरण अग्रवाल लिखते हैं 'रीतिकाल के काव्य को ठीक से समझने के लिए राजस्थानी, पहाड़ी आदि चित्रों को समझना आवश्यक है।'

जैसे प्रकृति का आलंबन रूप चित्रों में सहज-ग्राहा उपादान होता है, वैसे ही हमारे छायावादी काव्य में प्रत्येक अभिव्यक्ति का मुख्य आलंबन प्रकृति होती है।

प्रसाद और निराला के काव्य में भी सुंदर चित्रोपमता के अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं, किंतु उनके काव्य में चित्रात्मकता की चर्चा वैसी नहीं होती, जैसी सुमित्रानंदन पंत के काव्य में होती है। पंत की भाषा को चित्रात्मकता से जोड़कर देखने के पीछे संभवतः उनकी कोमलकांत पदावली अक्लिष्ट शब्द-प्रयोग और प्रवाहमयी बिंबात्मक भाषा-शैली विशेष कारण रही होगी।

जैसे चित्रकला में अभिव्यक्ति का माध्यम रंग-रेखा और बुरुश आदि होते हैं, वैसे ही काव्य की अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है। कालिदास रचित संस्कृत-छंदों में, बिहारी विरचित ब्रज भाषा के दोहों में, प्रसाद-पंत एवं निराला की हिंदी काव्य-रचनाओं में और फणीश्वर नाथ रेणु के गद्य में भी अनेक शब्द चित्र साकार हुए हैं। विवेचना करें तो स्पष्ट होता है कि अभिव्यक्ति की शैली में चित्रात्मकता के अवयव परिलक्षित होतें हैं न कि भाषा में। और भी अभिव्यक्ति की शैली को 'चित्रात्मक' मात्र कह कर 'चित्रोपमता' की

व्यापक विशेषताओं का परिसीमन कर दिया जाता रहा है। कलाओं की तात्विक एकता अथवा सह-संबद्धता पर आधुनिक हिन्दी आलोचना में बहुत कम काम हुआ है। यूरोप में आधुनिक कलाओं के विकास क्रम में कलाकार और साहित्यकार मिलबैठ कर कला और आलोचना के विकास का दायरा निर्धारित करते थे ऐसे प्रमाण के उल्लेख मिलते हैं। रविन्द्र नाथ ठाकुर ने इस दिशा में पहल की थी। हिन्दी क्षेत्र में नामवर सिंह के एकपक्षीय आलोचना के ही पक्ष-विपक्ष बनते रहे, जिसका सर्वाधिक खामियाजा भाषा और शैली के विकास को भुगतना पड़ा। हिन्दी कविता के आधुनिक स्वरूप के शैलीगत विकास का बहुत सूक्ष्म विश्लेषण अपेक्षित था जो वादों में उलझ कर रह गया। कविता की श्रेष्ठता उसके मार्क्सवादी जनवादी या राष्ट्रवादी आदि होने के आधार पर तय कर ली गई। अब भी समय है इस विषय में कार्य किया जाना आधुनिक हिन्दी कविता के दिन बहुरने जैसा होगा ।

सुमित्रा नंदन पंत की काव्य भाषा को कोमलकान्त पदावली के दायरे में रखा जाता रहा है। कोई दो राय नहीं है कि उनकी काव्य भाषा नर्म-मुलायम चिड़ियों के परों के स्पर्श का अनुभव कराते हैं। अनेक स्थानों पर शब्दों और अभिव्यक्तियों की कोमलता को पाठक बहुत गहरे स्पर्श की सीमा तक भी अनुभव कर पाता है। इसका बहुत अच्छा उदाहरण उनकी 'बादल' कविता है, जिसका हर पद रूपात्मक कोमलतम अभिव्यक्ति से सज्जित है ।

पंत जी की कविताओं में भाषा किसी तूलिका की तरह शब्दों के रंगों का चयन करती है प्रायः उनकी प्रत्येक कविता मानो एक चित्रफलक है जिसमें वे चित्र बनाते हैं। यहाँ उनके कुछ कवितांशों के उदाहरण लेकर अपने कथ्य को अधिक स्पष्ट करना चाहूँगा। चित्रकला के षडंग की तरह काव्य में भी चित्रात्मक अभिव्यक्ति में छः बिन्दुओं की कसौटी हमारी तुलना के आधार होंगे।

काव्य में चित्रात्मकता के जो छः आधार बिन्दु हो सकते हैं वे हैं- 1. रूपात्मक शब्द-चित्र 2. प्रमाण प्रस्तुत करती अभिव्यक्तियाँ 3. भावातिरेकी चित्रात्मकता 4. चित्रोपम लावण्याभिव्यक्ति 5. सादृश्य मूलक शब्द-चयन 6. रंगों-रेखाओं और तूलिकादि के प्रयोगों से सज्जित शब्द-चित्र

रूपात्मक शब्द-चित्र -

लोकायतन के 'ग्राम शिविर' का एक सहज-सरल छंद है-

''नवल वधू बैठी खेतों में या
हिम ऋतु अब छाई घर-घर।
किसने हल्दी मलदी उसके
अर्ध खिले कोमल अंगों पर।
लहराती पीली सरसों से
स्नेह गंध उड़ती रस भीनी
फहराती उड़ हलकी आबी
कुहरे की चूनर कँप झीनी''

इस पद में गाँव के खेत का वर्णन है जो हिम-ऋतु में फूली सरसों के फूलों से सजी है। वर्णन की कोमलता में पीले रंग की अभिव्यक्ति किसी सुंदर चित्र को साकार कर देती है। नवल वधु की उपमा इस चित्र को ताजगी से भर देती है। प्रभाववादी फ्राँसिसी कलाकार पॉल गोगाँ के किसी सुन्दर चित्र को देखने जैसा अनुभव होता है। यह अनुभव सम्पूर्ण लोकायतन में 'ग्राम्या' तथा और भी अनेक कविताओं में बारंबार होता है।

एक और उदाहरण देना चाहूँगा-

''उन्मद यौवन से उभर घटा-सी नव असाढ़ की सुन्दर,

अति श्याम वरण, स्लथ मंद चरण, इठलाती आती
ग्राम युवति वह गज-गति सर्प डगर पर।''

इन पंक्तियों में ग्रामीण युवती का रूप वर्णन अद्वितीय तो है ही, चित्रात्मक भी है। मध्यप्रदेश, इंदौर के ख्यातिलब्ध कलाकार श्री देवकृष्ण जटाशंकर जोशी के वनवासी युवतियों से सज्जित दृश्य-चित्र यदि देखेंगे तब लगेगा उन्होंने पंत की इसी नायिका को अपने चित्र में साकार किया है।

अप्रस्तुत की प्रस्तुति में भी पंत की कविता पंक्तियाँ दृश्य रच देती हैं ।-

'इस निर्जन स्फटिक स्वच्छ मंदिर के
मुक्ताभ कक्ष में कल रात चाँद
चाँदनी के संग सोया था ।
किरणों की बाहों में चंदिरा की
अनावृत ज्वाला को लिपटाए।'

चाँद, चाँदनी और ज्वाला जैसे यहाँ मूर्तिमान हो कर कवि की कल्पना को साकार कर रहे हैं।

प्रमाण प्रस्तुत करती अभिव्यक्तियाँ-

क्षितिज की दृश्य-रेखा, वृक्षों की पंक्ति अथवा आकाश की निस्सीमता को जब अभिव्यक्त किया जाता है तब क्षितिज या आकाश अदृश्य होकर भी दृश्यमान बन जाते हैं। वृक्षों की पंक्ति रेखा का आभास कराते हैं। बादलों के टुकड़ों में आकृतियाँ और पर्वत श्रृंखला रंगीन दिखाई देती है। उच्च अट्टालिकाएँ गगन चूमती हैं, आकाश में उड़ते पक्षी बिन्दु-मान बन जाते हैं। सागर की विस्तीर्णता में सरोवर नहीं दिखता, सर्पिली नदी पगडंगी नहीं लगती। यही होता है चित्र में प्रमाण का महत्व। चित्र में यह अभिव्यक्ति थोड़ी कठिन होती है। काली गाय और काली भैंस को अलग बनाना, घोड़े की पूँछ और गधे की पूँछ में फर्क कर पाना, ऊँची अट्टालिकाओं को नीचे से विस्तीर्ण और ऊपर जा कर बिन्दु तुल्य दिखा पाना कला की गहरी समझ की माँग करते हैं। काव्य में यह थोड़ा सरल अवश्य होता किन्तु कवि शब्दों के माध्यम से भी वर्णन में प्रमाण प्रस्तुत करता है। नदी को सर्पाकार भर कहकर वह आगे नहीं बढ़ जाता, नदी के सौन्दर्य को उसके दोनों किनारों से जोड़ता है, उसकी लहरों के विलास को बताता है। सरोवर के कमल वह नदी में नहीं खिलाता क्योंकि कवि यह जानता है कि कमल बहते पानी में नहीं पनपते। काव्य में इस प्रकार की बारीकियों को गंभीरता से प्रायः परखा ही नहीं गया है।

पंत एक कला पारखी कवि थे इसलिए उनके विशाल-काव्य-सागर में अनेक रूप ले कर कला के कमल खिले हुए हैं। 'लोकायतन' के विज्ञान खण्ड में पंत ने यूरोप-भ्रमण के सुन्दर चित्र प्रस्तुत किए हैं। वहाँ की कलात्मकता को मुखरता के साथ अभिव्यक्ति दी है। एक स्थान पर तो उन्होंने पश्चिम की कला का ऐश्वर्य भूमि कह कर फ्राँस-इटली आदि की कला के महत्व को स्वीकार किया है।

''रहा पश्चिम की मानस भूमि,
कला-चिंतन ऐश्वर्य निवेश।''

पंत यूरोप के आधुनिक कला-विकास के साथ-साथ वहाँ के चर्च की गोथिक कला से भी परिचित थे। ''लोकायतन'' के इस 'विज्ञान' खंड में उन्होंने विस्तार से इन पर काव्य-टिप्पणियाँ की हैं।

यहाँ मैं ''कला और बूढ़ा चाँद'' संग्रह से दो उदाहरण प्रस्तुत कर रही हूँ, जिसमें 'प्रमाण-कलातत्व' की स्पष्ट अभिव्यक्ति मुखर होती दिखाई देती है। नदी के वेग के साथ गाय का पूँछ उठा कर दौड़ने का वर्णन सुन्दर सामंजस्य के साथ किसी चित्र की तरह अभिव्यक्त

हुआ है।-

"ओ फेन गुच्छ
लहरों की पूँछ उठाए
दौड़ती नदियों,
इस पार उस पार भी देखो-
जहाँ फूलों के कूल,
सुनहले धान के खेत हैं।
कल-कल, छल-छल
अपनी ही विरह-व्यथा
प्रीति कथा कहते
मत चली जाओ।

एक उदाहरण और देखते हैं जिसमें श्वेत माखन पर्वत और श्वेत कमल-वन की कल्पना की गई है, जिसके भीतर से छन कर आते प्रकाश का प्रभाव इस पद की चित्रात्मकता के सौन्दर्य को अद्‌भुत बनाता है। -

"ओ दुग्ध श्वेत
माखन पर्वत के सूर्य,
ओ श्वेत कमलों के वन,
प्राणों के सुनहले जल,
तुम्हारे सूक्ष्म कोमल
उरोज मांसल प्रकाश ने
मुझे घेर लिया है।

कविता की पंक्तियों में जब अभिव्यक्ति के आधार पर चित्र-फलक का निर्माण होता है तब चित्रोपमता का साक्षात् प्रमाण दृष्टिगोचर होता है। उक्त पंक्तियों में वही प्रामाणिकता शब्दों में साकार हुई है।

भावातिरेकी चित्रात्मकता-

काव्य में भाव का स्थान सर्वोपरि है। भाव ही विविध रसों के उद्रेक के स्पष्ट कारण बनते हैं। काव्य में भावों की अभिव्यक्ति सरलता के साथ शब्दों के माध्यम से कर ली जाती है। किन्तु, चित्रादि में भावाभिव्यक्ति दुरूह कार्य है। कलाकार की तूलिका समस्त कलात्मक उपादानों को एकत्र करके भावों की अभिव्यक्ति कर पाता है ।

मैथिली शरण गुप्त की 'यशोधरा' काव्य की पंक्तियाँ हैं-

'असखि वे मुझसे कह कर जाते,
कह तो क्या, पथ बाधा ही पाते?

इन पंक्तियों में विरहिणी यशोदा की व्याकुलता पाठक के भीतर तक व्याप हो जाती है। इस भाव को चित्रत में अभिव्यक्त करना निश्चित ही कठिन है ।

अजंता की गुफाओं में चित्रित बुद्ध के जीवन से जुड़ी घटनाओं के चित्रों में एक प्रसिद्ध चित्र है जिसमें यशोधरा अपने बालक पुत्र को भिक्षा-स्वरूप बुद्ध को सौंप रही है। यह चित्र भाव-विह्‌वल श्रेष्ठ चित्राभिव्यक्ति के रूप में विश्व विख्यात है। उसी प्रकार बुद्ध के अवलोकितेश्वर स्वरूप का चित्रण भी जगत प्रसिद्ध है। समस्त संसार की करूणा को आँखों में समाए गौतम का अर्ध-उन्मीलित आँखों से देखने वाला यह चित्र करुणा की सार्वभौम अभिव्यक्ति के कारण उनकी 'आइकोनोग्राफी' बन गई और चीन-जापान आदि देशों में भी भगवान बुद्ध के चित्र और मूर्तियाँ इसी रूप में बनाए गए हैं।

रससिक्त भावातिरेकी चित्रण तो संपूर्ण छायावाद का विशिष्ट गुण है, उसमें भी कोमलकान्त पदावलियों से सज्जित सुमित्रानंदन पंत का संपूर्ण काव्य-संसार भावातिरेकी चित्रोपमता से परिपूर्ण वर्णनों का आगार ही है ।

प्रेम की कोमल भावना हो या भीषण उन्माद का वर्णन। पंत ने स्थान-स्थान पर चित्रात्मक अभिव्यक्ति से

कथन को अधिक मुखर बनाया है। ''लोकायतन'' में भारत-विभाजन के अवसर की क्रूर अमानवीय घटनाओं का चित्रण पाठक के सम्मुख मानों छाया-चित्र का निर्माण करते हैं। कुछ पंक्तियाँ देखें -

''कस-मसक नग्न अंगों को,
स्तन काट, ठठा हँसते खल,
बच्चों को चीर, पटक झट
द्वेषाग्नि बुझाते पागल!
भागदौड़ आग, कोलाहल,
बनते पुर गृह पथ निर्जन,
मंदिर मसजिद के ईश्वर ?
अल्ला संत्रस्त व्यथित मन।''

एक और सौन्दर्यानुभूति का दृश्य दृष्टव्य है।-

''तुम देही हो? दीपक लौ सी दुबली, कनक छबीली,
मौन मधुरिमा भरी, लाज ही सी साकार लजीली,
तुम नारी हो? स्वप्न कल्पना सी सुकुमार सजीली।''

इस पद में नारी का कोमल किन्तु दैदीप्यमान सौन्दर्य प्रतिच्छवित होता है ।

लावण्याभिव्यक्ति-

कवि हो या कलाकार, लावण्यमयी अभिव्यक्ति ही उनके सौन्दर्य-वर्णन का मुख्य अभिप्राय रहता है। प्रकृति के प्रत्येक अवयव में कवि अपनी कल्पना के अनुसार रूप लावण्य को साकार करता है। लावण्य शब्द सौन्दर्य का पर्यायवाची नहीं है। सौन्दर्य के साथ आभा और ओज का भी समावेश होता है लावण्य में। भोजन में नमक की तरह सौन्दर्य में लावण्य आंतरिक ओज की तरह अदृश्य हो कर भी दृश्यमान रहता है। यह लावण्य देवी दुर्गा की प्रतिमा के मुखमंडल में प्रतिभासित होता है। यह लावण्य द्रौपदी के अभिमान में और सीता के सहज-सौन्दर्य में दिखाई देता है। कोणार्क की नृत्य-रत प्रतिमाओं में और नाथद्वारा के पिछवाई चित्रों में चित्रित कृष्ण के रूप-लालित्य में लावण्य का ही सम्मोहन समाया होता है।

बिहारी की नायिका की आलक्तक एड़ियों से लेकर राधा की वक्रोक्ति भंगिमाओं में लावण्य होता है।

पंत की सौन्दर्याभिव्यक्ति में 'रूप' कम 'लावण्य' अधिक दिखाई देता है। सौन्दर्य-वर्णन में वे जिन शब्दों की अवृत्ति करते हैं उन शब्दों के अर्थ ही उनके रूप-वर्णन को 'लावण्य' की आभा से भरते जाते हैं। 'स्वर्ण धूलि' में अरविन्द पर लिखी एक कविता की पंक्तियाँ देखें-

''स्वर्मानस के ज्योतित सरसिज,
दिव्य जगत-जीवन के वर द्विज,
चिदानन्द के स्वर्णिम मनसिज,
ज्योति धाम, सज्ञान प्रणाम!''

'स्वर्ण धूलि' के पुरूष-नारी रूपक में आधुनिक नारी पर लिखते हुए पंत ने 'आधुनिका' के रूप - लावण्य की सुंदर छवि प्रस्तुत की है'

''छूटी पट की संस्कृति, हृदय रहित मधुरोंति,
दे रहीं प्रगति को गति
हम नव युग की भारति, रूप शिखा!''

'लोकायतन' में कवि ने गांधी के रूप-चित्रण में अलौकिकता जो आभास दिया है वह 'लावण्य' का एक अनूठा उद्धरण प्रस्तुत करता है -

''जय राष्ट्र पिता, जन-मानव,
जय शुभ्र पुरूष, युग-संभव,
जय आत्म शक्ति के पर्वत,
भू-स्वर्ग दूत, युग नर नव!,

गांधी डेढ़ पसली के होकर भी भू पर 'स्वर्ग के दूत' सम दिखाई देते हैं जो उनके आत्मिक-सौन्दर्य की, उनके मुख मंडल में व्याप्त युगानुरूप उनके अद्वितीय कार्य की लावण्य-आभा है।

सादृश्यमूलक चित्रोपमता-

अत्यंत सहजता के साथ काव्य में जिस चित्रात्मकता को रेखांकित किया जाता है वह सादृश्यमूलक चित्रोपम अभिव्यक्ति होती है ।

सहज-सार्थक शब्द-बिंबों के संयोजन से काव्य में जब किसी विषय वस्तु प्राणी अथवा स्थानादि की दृश्याभिव्यक्ति होती है तब शब्दों के माध्यम से उपस्थित चित्रोपमता हृदय-स्पर्शी बन जाती है। तुलसी दास का पद- ''ठुमक चलत रामचन्द्र, बाजत पैजनियाँ'' हो या रसखान विरचित पद... ''काग के भाग बड़े सजनी, हरिहाथ सो ले गयो माखन रोटी'' हो, ये पंक्तियाँ सामान्य चित्रात्मक अभिव्यक्ति से कहीं अधिक मनोमुग्धता से भरी हैं। ऐसे वर्णन कवि के काव्य-कला-कौशल की अप्रतिम सार्थकता को दोहराते हैं।

पंत जी का एक बहु- प्रशंसित चित्रबिंब है-

''संध्या का झिट-पुट,
बाँसों का झुरमुट हैं चहक रहीं चिड़ियाँ,
टी-बी-टी टुट-टुट।''

इन पंक्तियों की चित्रात्मकता वर्णन से आगे बढ़ कर भाषा प्रयोग की सिद्धि भी स्पष्ट करती हैं।

इस प्रकार के भाषा प्रयोग का रेणु ने गद्य में भी खूब सार्थक प्रयोग किया है। उन्होंने वाद्य यंत्रों की ध्वनियों और कुश्ती के दाँव-पेंचों को भी अर्थ पूर्ण शब्द देकर वर्णित दृश्यों को सजीवता से साकार किया है-

''ढाक ढिला, ढाक ढिन्ना !
ढिन्ना - ढिन्ना, ढिन्ना दिन्ना .....
.....आजा आजा आजा आजा !
चटधा, गिड़धा, चटधा गिड़धा !
.....आजा भिड़जा, आजा भिड़जा...।''

ऐसे अनूठे शब्द-प्रयोगों के कारण ही 'रेणु' के उपन्यासों को नई पहचान मिली थी।

पंत जी की 'स्वर्णधूलि' में 'ताल कुल' नाम की एक कविता की प्रथम तीन पंक्तियों में भी 'संध्या के झुट-पुट' का सुन्दर दोहराव हुआ है।

''संध्या का गहराया झुट-पुट,
भीलों का सा घरे सिर मुकुट,
हरित चूड़ कुकडू कूँ कुक्कुट। ''

पंत के काव्य में सादृश्य मूलक चित्रोपमता बिना किसी शाब्दिक व्यायाम के भी खूब मुखरित हुआ है। एक उदाहरण दृष्टव्य है

''निश्चय ही कटती होगी तब जौ-गेहूँ की बाली,
कटि में खोंस दराती, सिर पर घर सोने की डाली,
जाती होगी खेतों में प्रातः मखमल की चोली,
मार छींट लहंगे में फेटा,-बहू गाँव की भोली! ''

एक और सुंदर उदाहरण देखें-

''राजमहल के पास एक मिट्टी के कच्चे घर में
रहती थी मलिन की लड़की क्षुधा विदित पुर भर में
मौन कुँई सी खिली गाँव के ज्यों निशीथ पोखर में,
वह राशिमुखी सुधा की सहचरी हर्म्य अंबर में!''

'नरक में स्वर्ग', नाम की लंबी कविता में 'क्षुधा' और 'सुधा' नामकी दो सखियों की कल्पना और उनका सुंदर चित्रात्मक वर्णन इस पूरी कविता की विशिष्ट सौन्दर्याभिव्यक्ति है।

रंगों-रेखाओं से युक्त शब्द-चित्र -

चित्रों के निर्माण में प्रमुख उपकरण होते हैं रंग, रेखा और तूलिका आदि। चित्रकला की भाषा में इसको 'वर्णिका भंग' कहा जाता है। अर्थात् वर्णन की भंगिमाभिव्यक्ति के साधन।

जैसे कलाकार चित्र बनाते समय साहित्य को

आधार बनाता है, वैसे ही कवि भी कविता रचना में चित्रकला के इन 'आधारभूत उपकरणों से भी अपने कथन- उद्देश्य की परिपूर्ति करता है'।

''कामायनी'' में जब जयशंकर प्रसाद श्रद्धा का रूप-वर्णन करते हैं तब उन्होंने नीले और गुलाबी रंग का जो सुन्दर प्रयोग किया है वह अनिर्वचनीय है।-

''नील परिधान बीच सुकुमार
खिल रहा मृदुल अधखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघबन बीच गुलाबी रंग।''

शब्दों में रंगों का यह खेल किसी सुंदर चित्रकृति को निहारकर परितृप्त होने जैसी अनुभूति करता है।

सुमित्रा नंदन पंत ने अपने काव्य में तूलिका, रंग और रेखाओं का सीधा-सपाट प्रयोग भी खूब किया है। कई जगह तूलिका से रंग भरने की बात कही है तो कई स्थानों पर कलाकार को भी साकार उपस्थित किया है ।

'लोकायतन' के 'युग-भू' खंड के प्रथम छंद में कवि लिखता है, समस्त दिशाएँ चित्रपट हैं जिसमें काल अपनी गति की तूलिका से सृष्टि की छवि को धूप-छाँही रंगो के साथ निरंतर चित्रित करता रहता है ।-

''अमित शून्य दिक् पट पर
सृष्टि छवि अंकित,
काल तूलि गति जिस पर
धूप छाँह भरती नित''

उपनिषदीय शाश्वत भाव-बोध की इतनी सुन्दर अभिव्यक्ति चित्र-चित्रकार, तूलिका और रंग के बिना संभव न हो पाती।

इसी प्रकार 'स्वर्णधूलि' की पंक्तियों में उषा अपनी ज्वाला रूपी तूलिका से समस्त संसार के अंधकार को रंग कर स्वर्णमयी बना देती है।-

''तुम उषा, तूलि की ज्वाला से
रंग देती जग के तम भ्रम को
वह प्रतिभा स्वर्णांकित करती
संसृति के विकास क्रम को ।''

कवि पंत के काव्य में जीवन के विविध रंग हैं, जिनको वे रंग और तूलिका से रंग कर दोहरे अर्थ से भर देना चाहते रहे।-

''उलट रश्मियों के सतरंग घर
रंग दो मेरा प्राणों का पट,
रंग-रंग की पंखडियों में
हँस फूट पड़े अंतर का यौवन !
रंग जाए जो मेरा अंतर
गोचर तुम बन सको अगोचर।''

प्रेम में रंग, यौवन में रंग, प्रकाश में रंग, अधंकार में रंग, आकाश में रंग सब ओर रंग ही रंग है पंत के काव्य में। उनका काव्य संसार निश्चित ही शब्द और रंग की द्वाभा से प्रतिभासित है। यदि यह कहें कि पंत जी के काव्य में 'कला' प्राणवायु के समान सब ओर दिखाई देती है तो अत्युक्ति नहीं होगी। उनके शब्द, शब्दों के प्रयोग, प्रयोगों के अर्थ, अर्थ के अभिप्राय हर कहीं 'कला' अपने सुन्दर स्वरूप के साथ विराजमान है।

एच-8, सप्तवर्णी, सूर्या परिसर, सर्वधर्म
सी-सेक्टर, डॉ0 श्यामाप्रसाद मुखर्जी नगर,
कोलार मार्ग, भोपाल-462042
9826215072- चलभाष

सोहनलाल द्विवेदी का बाल साहित्य

➲ दिविक रमेश

हिन्दी बाल-साहित्य और उसमें भी बाल-कविता अर्थात् शिशु, बाल और किशोर कविता का प्रारम्भ कब से माना जाए या उसका प्रथम रचनाकार किसे माना जाए, इस पर भले ही विद्वानों में थोड़ा-बहुत विवाद हो लेकिन यह तय है कि सही मायने में जिसे हम बाल गीत साहित्य कह सकते हैं उसके लेखन का इतिहास अधिक से अधिक सौ वर्ष पुराना है। विवाद यह भी है कि पाठ्य पुस्तकों के लिए लिखी या लिखवाई गई कविताओं को बाल गीत साहित्य के अन्तर्गत माना जाए अथवा नहीं। जहाँ तक मेरी बात है मैं विषयाधारित रचनाएँ लिखने-लिखाने या उसी आधार पर समीक्षा करने का पक्षधर नहीं हूँ। मैं निरंकार देव सेवक की इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ कि बच्चों और बड़ों के लिए कविता में उनकी रचना प्रक्रिया की दृष्टि से कोई विशेष अन्तर नहीं होता। जैसे बड़ों का कोई श्रेष्ठ कवि एक सत्य को उजागर करके या सौन्दर्य की सृष्टि करके उसे वैसा ही छोड़ देता है कि उसका पाठक या श्रोता जो चाहे वह प्रेरणा उससे ग्रहण कर ले, वैसे ही कोई श्रेष्ठ बालगीत का लेखक इससे अधिक कुछ नहीं 'करता।' (बालगीत सा., पृ.24)। साफ है कि बच्चों के लेखन में चाहे वह उपदेश, सीख कुछ भी हो, उसके नाम पर आरोपित नहीं होना चाहिए। रचनाकार के पास बालक के मन पर उसकी दृष्टि की गहरी समझ होनी चाहिए। सच तो यह है कि बाल-साहित्य रचनाकार का कलात्मक अनुभव होता है। बहुत बार बालक के लिए तैयार की गई उपयोगी सामग्री को भी साहित्य अर्थात् सृजनात्मक साहित्य की कोटि में लेने की भूल की जाती है। अन्यत्र भी लिख चुका हूँ कि साइकिल पर बालसुलभ में भाषा जानकारी चाहे वह लय-छन्द में ही क्यों न हो और साइकिल पर लिखी कविता अर्थात् कलात्मक अनुभव में अन्तर होता है।

सोहनलाल द्विवेदी यद्यपि अपने बाल-साहित्य के लिए अत्यंत प्रख्यात हैं और हम सब जानते हैं कि बड़ों के लिए रचे उनके लेखन को भी बहुत महत्त्व के साथ देखा गया है लेकिन हिन्दी लेखन का परिदृश्य देखें तो मात्र बच्चों के लिए लिखने वालों की संख्या तो नगण्य है ही, बच्चों के लिए लिखने वाले आज के बड़े लेखकों की सूची भी बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं है। हालांकि यह सच है कि महावीर प्रसाद द्विवेदी युग, छायावाद एवं छायावादोत्तर युग में बड़ों के लेखक बाल साहित्य के प्रति उदासीन नहीं रहे। वस्तुतः जैसा बालस्वरूप राही भी मानते हैं, हमारा साहित्यिक परिदृश्य ऐसा है जिसमें बाल लेखकों को बड़े या बड़ों के लेखकों के समतुल्य या

समकक्ष भी नहीं माना जाता (त्रिपदा, पृ.33)। सच यह भी है कि बाल-साहित्य के क्षेत्र में आलोचना या मूल्यांकन की सही परम्परा न होने के कारण कूड़ा-कबाड़ भी काफी बढ़ रहा है। इसकी गहरी चिन्ता डा0 प्रकाश मनु के लेख हिन्दी की बाल कविता के समक्ष चुनौतियाँ (त्रिपदा, पृ. 106) में व्यक्त हुई है। फिर भी प्रकाश मनु के ही शब्दों में कहा जाए तो कोई बाल कविता अगर समय की नब्ज को नहीं पकड़ती, तो यह तय है कि वह बहुत दूर तक नहीं जा सकती...। लेकिन इस तरह के रूटीन को तोड़ने वाली बाल कविताएँ भी हिन्दी में चाहे थोड़ी ही सही, लिखी जरूर जा रही हैं। (त्रिपदा पृ. 110, राष्ट्रीय बाल भवन, 1997)। बहरहाल, यह भी सच है जैसा डा0 परमानन्द पांचाल का भी मानना है कि 1920 से अपना लेखन प्रारम्भ करने वाले सोहनलाल द्विवेदी ने अपनी कविताओं का प्रारम्भ बालगीतों से किया था और 'उपलब्ध साक्ष्यों के अनुसार, इनकी प्रथम बाल कविता 'बिलैया' जून 1929 ई. में शिशु नामक बाल पत्रिका में प्रकाशित हुई थी।' तथा उनकी 'रचनाओं में बालगीत संग्रहों की संख्या सबसे अधिक है।' (सोहन लाल द्विवेदी, पृ. 58, सा. अकादमी, 2006)। द्विवेदी जी का जन्म 4 मार्च 1906 ई. को बिन्दकी, जिला फतेहपुर (उ.प्र.) में सम्पन्न कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। स्कूली जीवन से ही उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन की राह पकड़ ली थी। दंभ और अहंकार से दूर थे। कभी दरबारी नहीं बने। बड़ों के लिए रची उनकी पहली कृति 'भैरवी' ने धूम मचा दी थी। इसका एक गीत तो आज तक जबान पर है -- वन्दना के इन स्वरों में एक स्वर मेरा मिला लो। जयप्रकाश भारती जी ने तो इस राष्ट्रीय जागरण के प्रेरणाप्रद गीतों के संकलन भैरवी के प्रकाशन को एक ऐतिहासिक घटना मानते हुए हिन्दी की सौ श्रेष्ठ पुस्तकों के अन्तर्गत सम्मिलित किया है। (हिंदी, की सौ श्रेष्ठ पुस्तकें, पृ.60)। पांचाल जी के अनुसार 'राय कृष्णदास जी से ही सोहन लाल द्विवेदी को बाल साहित्य लिखने की प्रेरणा मिली थी।' यूँ उन पर महात्मा गाँधी, गणेश शंकर विद्यार्थी, मालवीय जी आदि का भी प्रभाव रहा है।

उपर्युक्त हिन्दी के 'बाल-गीत' साहित्य-परिदृश्य के संक्षिप्त जायजे के बाद हम सोहनलाल द्विवेदी के बाल-साहित्यकार रूप के सम्बन्ध में विचार करेंगे। द्विवेदी जी उन लेखकों में हैं जिनका लेखन-समय स्वतंत्रता के पूर्व से लेकर स्वतंत्रता के बाद के समय तक विस्तृत है। साथ ही ये उन लेखकों में अग्रणी हैं जिनके साहित्य का सरोकार प्रमुखतः राष्ट्रीय भावनाओं, देश-महिमा वर्णन, प्रयाण गीत-सुलभ जोश, गाँधीवादी विचारों और नेताओं के चरित्र गीतों से रहा है। ये उस काल के प्रमुख कवि हैं जिसमें, मस्तराम कपूर के शब्दों में 'गाँधी जवाहर बनने अथवा देश का भाल ऊँचा करने और देश की लाज बचाने के आग्रह भरे उपदेश देने तक ही लेखक नहीं रूके, चीन और पाकिस्तान के साथ युद्ध छिड़ने पर शत्रुओं को मार भगाने तथा कश्मीर और तिब्बत को मुक्त कराने के लिए बच्चों को तैयार करने में भी कुछ लेखकों ने बहुत उत्साह दिखाया। किन्तु इन सब त्रुटियों के बावजूद कुछ अच्छी राष्ट्रीय कविताएँ भी सामने आईं जिनमें... द्वारका प्रसाद माहेश्वरी कृत 'लहरें',... निरंकार देव सेवक कृत 'चाचा नेहरू के गीत, रघुवीर शरण मिश्र कृत 'अमर रहे यह देश', 'कदम मिलाते चलो', सोहन लाल द्विवेदी कृत 'बच्चों के बापू'.. . विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।' (मधुमती, भारतीय बाल साहित्य विवेचन विशेषांक, जुलाई-अगस्त, 67, पृ. 66-67)। इसी संदर्भ में बाल-साहित्य के क्षेत्र में, विशेष रूप से किशोरों के संदर्भ में, एक भ्रामक मान्यता से

संबंध डा0 हरिकृष्ण देवसरे के मत की जानकारी भी दिलचस्प है। उनके अनुसार अब तक बच्चों के अधिकांश कवि यही मानते रहे थे कि किशोर अवस्था के बच्चों को तो 'प्रार्थना-गीत', 'प्रयाण गीत' और 'राष्ट्रभक्ति' के गीत ही दिए जाने चाहिए, जबकि मैं उन्हें 'किशोर मनोविज्ञान' के अनुरूप गीत लिखने की बात समझा रहा था। (किशोर साहित्य की संभावनाएँ, सं. देवेन्द्र कुमार देवरा, पृ.202) और यह भी कि 'मेरी इस बात को आप वर्तमान की कसौटी पर परखकर देख लें कि आज छह-सात साल का बच्चा वे बातें जानने समझने लगा है, जो बच्चे कभी दस-बारह वर्ष की उम्र में जानते थे। यह मीडिया के प्रभाव, वैज्ञानिक उन्नति, कम्प्यूटरी संस्कृति आदि के कारण हुआ है। ऐसे में 1984 ई. और उसके बाद के वर्षों में बच्चों में हो रहे बदलावों के प्रति पूरी तरह सजग था।' (वही, पृ.148)। उपर्युक्त मत का उल्लेख करने का एक बड़ा उद्देश्य यही बताना है कि आज यदि तथाकथित उपदेशों आदि से लदी सीधे-सीधे विषयोंधारित वर्णनात्मक, भले ही अपने समय की प्रसिद्ध तथाकथित राष्ट्र या देश प्रेम वाली कविताएँ आज के बच्चों को पुरानी और उबाऊ लगती हैं तो वह स्वाभाविक ही है। लेकिन इससे उन रचनाओं का इतिहासपरक महत्त्व कम नहीं हो जाता। और यह भी कि राष्ट्र और देश-प्रेम के आयाम और दायरे भी बहुत विस्तृत हो गए हैं। एक बड़े लेखक शायद अज्ञेय ने ठीक ही जवाब दिया था कि उनकी कौन सी रचना ऐसी है जो राष्ट्र और देश प्रेम से सनी न हो। इस बिन्दु को बहुत आगे तक बढ़ाया जा सकता है लेकिन यहाँ विषयांतर हो जाने के भय से थम जाना चाहिए। वस्तुतः द्विवेदी जी की भी बहुत सी रचनाओं को उनके रचना-इतिहास के संदर्भ में ही महत्त्व दिया जा सकता है। लेकिन उनकी ऐसी भी रचनाएँ हैं जो कालजयी होने की क्षमता रखती हैं। भले ही वे 'राष्ट्रीय चेतना' के गायक के रूप में ही चर्चित किए गए हों लेकिन बालगीतों में प्रकृति, संबंधों, पक्षियों आदि के भी कलात्मक अनुभव अपनी विभिन्न छटाओं और खुशबुओं के साथ उपस्थित हैं। उन्हें रेखांकित करने की आज बहुत जरूरत है। डॉ0 परमानन्द पांचाल ने अपनी पुस्तक सोहन लाल द्विवेदी में, द्विवेदी जी के बाल-गीत संग्रहों की संख्या 24 बतायी है यद्यपि सूची में 'दस कहानियाँ' आदि का भी उल्लेख है। उनके बालगीतों की पहली पुस्तक 'दूध बताशा' है जो 1930 में प्रकाशित हुई थी। अन्य प्रमुख पुस्तकों में शिशु भारती, बाल भारती, झरना, बच्चों के बापू, चाचा नेहरू, हम बलवीर, रामू की बिल्ली, गीत भारती (चयन), हँसो और हँसाओ, फूल हमेशा मुस्काता आदि हैं। एक वाक्य में कहें तो उनके बाल-गीत सदाचार, निर्भीकता, साहस, दृढ़ता, सांस्कृतिक सरोकारों, प्रकृति-प्रेम, राष्ट्रीयता एवं देश प्रेम आदि से ओत-प्रोत हैं।

सोहनलाल द्विवेदी जी के योगदान का महत्त्व इसी तथ्य से सिद्ध है कि जयप्रकाश भारती ने इन्हें पं. रामनरेश त्रिपाठी, रामवृक्ष बेनीपुरी, स्वर्ण सहोदर, सुभ्रदाकुमारी चौहान आदि के साथ हिन्दी बाल-साहित्य के सप्तर्षि की उपाधि दी है। (बाल-साहित्य इक्कीसवीं सदी में, पृ.72)। आचार्य किशोरीदास बाजपेयी ने उन्हें राष्ट्र कवि मानते हुए 'उशना' कवि कहा है। उशना शुक्र कवि का नाम है जिसे श्रीकृष्ण ने संसार का सर्वश्रेष्ठ कवि कहा है। (सोहनलाल द्विवेदी, परमानंद पांचाल, पृ. 15)। इसी प्रकार उन्हें बच्चों के माई-बाप, बाल-साहित्य के आचार्य, बच्चों के महाकवि आदि उपाधियों से भी विभूषित किया गया है।

यहाँ मैं यह स्वीकार कर लूँ कि मुझे द्विवेदी जी

की तमाम पुस्तकें प्राप्त करने में सफलता नहीं मिल सकी। अतः जो सामग्री मुझे उपलब्ध हो सकी, और सौभाग्य से वह महत्त्वपूर्ण है, उसी को अपने विवेचन का आधार बनाया है। अतः द्विवेदी जी के साहित्य के विद्वान अध्येताओं खासकर डा0 पांचाल, डा0 श्याम सिंह शशि आदि से पहले ही क्षमा मांग लेता हूँ। साथ ही यह भी कहना चाहूँगा कि द्विवेदी जी ने बाल-गीत साहित्य के जिस पक्ष को नहीं अपनाया उसके संबंध में भी कुछ लिखना उचित नहीं समझा है। मसलन उनके यहाँ 'लोरी' नहीं है। प्रभाती है अर्थात् जगाने के लिए गाए जाने वाले गीत (पृ.83 निरंकार देव सेवक)। जैसेः

उठो-उठो
पत्ती डोली चिड़ियाँ बोली
हुआ सवेरा उठो-उठो।
छाई लाली क्या ही आली
मिटा अंधेरा उठो-उठो।
आलस त्यागो प्यारे जागो,
आँखें खोलो उठो-उठो ।
देखो झाँकी भारत माँ की
जय-जय बोलो, उठो-उठो।

(बालगीत साहित्य, पृ. 84)

गौरतलब है कि अंतिम पंक्तियाँ सोहनलाल द्विवेदी की हैं जहाँ राष्ट्रीय चेतना का छोंक भी है। और इस प्रकार 'जागो' शब्द की अर्थ छवियाँ विशाल हो उठी हैं। माँ और भारत माँ का यह अद्भुत मेल कवि का कौशल है। और रूपक का सफल प्रयोग भी। साँचेबाज इकहरी अतः उबाऊ 'राष्ट्रीय अथवा देश प्रेम' की कविताओं से अलग यह ऐसी कविताओं में से एक है जो न तो तात्कालिक उपभोग के लिए होती हैं और न ही क्षणजीवी। ऐसा भी नहीं है कि द्विवेदी जी की देश भक्ति या देश प्रेम की तमाम कविताएँ इतनी ही अच्छी हों। इनके यहाँ घनघोर सीधे कथन, वर्णन और उपदेशों या अच्छी-अच्छी बातों के कथनों से लदी कविताएँ भी हैं लेकिन ध्यान किसी भी कवि की उपलब्धियों की ओर अधिक जाना चाहिए। कदाचित अपनी अच्छी कविताओं के कारण ही उन्हें राष्ट्र कवि भी माना गया है और पद्मश्री की उपाधि से सुशोभित भी किया गया था। राजपाल से छपी उनकी एक पुस्तक है 'हम बालवीर'। इसे बालकों में श्रेष्ठ विचार और देश-भक्ति भरने वाली सरस कविताओं की पुस्तक कहा गया है। इस संग्रह की अनेक कविताएँ द्विवेदी जी को बालक का बड़ा कवि सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। विशेष रूप से यदि हम देश की आजादी और आजाद देश की अपेक्षाओं का संदर्भ ध्यान में रखें तो पाएँगे कि एक सुनहरे देश के बालक को अच्छे से तैयार या सुसंस्कृत करने वाली ये कविताएँ कितनी महत्त्वपूर्ण हैं। और आज के समय के लिए भी। जयप्रकाश भारती जी ने ठीक ही लिखा है कि 'उनकी ये कविताएँ कई पीढ़ियाँ पढ़ती रहीं और इक्कीसवीं सदी में गूंजती रहेंगी।' (बाल साहित्य, इक्कीसवीं सदी में, पृ. 85-86)। वस्तुतः द्विवेदी जी बालक के प्रति पूरी तरह समर्पित थे। वे तो अपने तमाम लेखन को ही 'बाल-साहित्य' मानते थे। उनकी पुस्तक 'रामू की बिल्ली' की भूमिका में डा0 सम्पूर्णानन्द ने लिखा है,' यो तो पंडित सोहन लाल द्विवेदी ने सभी प्रकार का साहित्य लिखा है, जिसमें उनका भाषा पर प्रभुत्व और भावों की गहराई देखने को मिलती है, किन्तु बाल-साहित्य तो उनका खास क्षेत्र है। जो यह मानते हैं कि बच्चों में अच्छे संस्कारों का बीजारोपण बचपन में ही होना चाहिए, उन्हें द्विवेदी जी का कृतज्ञ होना चाहिए। उन्हें उनकी कृतियों को अपने नन्हें-मुन्नों के हाथ में देना चाहिए।' द्विवेदी जी

इस बात के कायल थे कि देश के भावी नागरिकों को अपने देश से परिचित कराना ही पर्याप्त नहीं, उनमें देश के प्रति अपने कर्तव्य का बोध भी कराना आवश्यक है। (सोहनलाल द्विवेदी, पृ.61)। कहते हैं कि बात बोलेगी हम नहीं। फिर भी इससे पूर्व कि द्विवेदी जी की अच्छी कविताओं पर थोड़ा विस्तार से आया जाए मैं अपनी निगाह में अच्छी कविताओं की बानगी दो कोरियाई बाल कविताओं से दूँगा जो कि कोरिया के वयोवृद्ध लेकिन अत्यंत प्रख्यात रचनाकार यून सॅक जूंग द्वारा रचित और दिविक रमेश द्वारा अनूदित हैं। पहली कविता है दुनिया का मानचित्रः

घर का काम मिला है मुझको
नक्शे में दुनिया दिखलाऊँ
रात बैठ कर मेहनत की पर
रहा अधूरा क्या बतलाऊँ
देश न हो जो तेरा-मेरा
राष्ट्र न हो जो मेरा-तेरा
हो बस दुनिया देश बड़ा सा
तब होगा आसान बनाना
नक्शे में दुनिया बतलाना

(प्यारी सी दुनिया दिखलाना)

दूसरी कविता हैः

आओ तोड़ के लाएँ चाँद
आओ बच्चों निकलो बाहर
बाहर निकलो लेकर बोरा
चढ़ पहाड़ पर तोड़ बाँस से
भरे चाँद से अपना बोरा
चढ़े दूर तक दूर-दूर तक
तोड़ बाँस से थोड़ा-थोड़ा
भरे चाँद से अपना बोरा
वहाँ उधर 'सुन ही' के घर पर
दीया भी न जल पाता है
घना अन्धेरा हो जाने पर
काम न कुछ भी हो पाता है।
आओ बच्चो आओ बाहर
आओ तोड़ के लाएँ चाँद
'सुन ही' की माँ के कमरे में
लटका दें हम चलकर चाँद।

इन इतनी मार्मिक और बालक को संवेदनशील बनाने वाली सच्ची मानवीय और उत्कृष्ट बाल कविताओं पर क्या कोई विस्तृत टिप्पणी की दरकार है?

अब द्विवेदी जी की ओर लौटा जाए।

द्विवेदी जी की एक बहुत अच्छी कविता है 'सबसे प्यारी कोयल भैया' जिसमें बहुत ही मजे-मजे में, सहज भाव से बालक को जानकारी के साथ-साथ एक दृष्टि भी मिलती है। 'हम बालवीर' में प्रकाशित इस कविता को उद्धृत करता हूँ ताकि कलात्मक अनुभव क्या होता है, उसकी पहचान हो सके।

प्यारे लगते तोता-मैना
जिनके सुन्दर-सुन्दर डैना
प्यारी लगती है गौरेया
सबसे प्यारी कोयल भैया।
प्यारे लगते मोर-मुरैला
जो घूमा करते बन छैला,
प्यारी लगती लाल चिरैया
सबसे प्यारी कोयल भैया।
प्यारा लगता बगुला भोला
बैठा रहता बन बंभोला
प्यारी पनडुब्बी पैरैया
सबसे प्यारी कोयल भैया ।

प्यारी लगती है फुल चुग्गी
प्यारे लगते सुग्गा-सुग्गी
प्यारा लगता हंस उड़ैया
सबसे प्यारी कोयल भैया।

मैं चाहूँगा कि विद्वानों और रसिकों का ध्यान मुरेला, छैला, बंभोला, उड़ैया जैसे जीवन्त एवं सौन्दर्य से भरपूर शब्दों की ओर अवश्य जाए। वस्तुतः द्विवेदी जी शब्द सजगता के संदर्भ में अत्यंत समृद्ध एवं कुशल थे। और उनका यह गुण आज तक असंभव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है। 'दंतखुदनी' का इतना मजेदार प्रयोग कहाँ मिलेगा जितना अपने समय के अनुसार चाबी के गुच्छे जैसे नए अनुभव की कविता में मिलता है:

चाबियाँ, अंगूठी, दंतखुदनी
छल्ले में सब हैं गुथीं बनी
लो देखो इनका फेर-फार
चलने में देता है बहार
चाबी का गुच्छा मजेदार

(गीत भारती, पृ. 13)

एक सशक्त बिम्ब क्या होता है उसका भी एक उत्कृष्ट उदाहरण है यह कविता। इसी प्रकार शब्द सजगता का बस एक और उदाहरण देकर यह प्रसंग खत्म करना चाहूँगा। और इस उदाहरण से तमाम रचनाकार प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं। सटीक प्रयोग लेकिन पूरी तरह खपा हुआ। इतना खपा हुआ कि सामान्यतः दृष्टि में न आए, हालांकि आनन्द आता रहे। कविता है 'नीम का पेड़'। फिर गीत भारती से। गाँव-देहात के अनुभव से सम्पन्न इस कविता में 'इसमें' शब्द के प्रयोग पर गौर किया जाए:

रोज सबेरे चिड़ियाँ आकर
इसमें शोर मचाती हैं,
तरह-तरह के गाने-गाकर
मेरा दिल बहलाती हैं।

देखा न इस पर नहीं बल्कि इसमें ।

यहीं से यह जो गाँव-देहात वाला सूत्र मिला है, लगे हाथ इस पर भी बात कर ली जाए। हम देख रहे हैं कि आज हमारे अच्छे-अच्छे कवियों का भी गाँव-देहात और आदिवासी क्षेत्रों के अनुभवों की ओर बहुत कम ध्यान जा रहा है। द्विवेदी जी की कितनी ही कविताओं से इस दिशा में भी सहज प्रेरणा प्राप्त की जा सकती है। उनकी एक कविता है मेरा घर (हम बालवीर) और दूसरी है 'घर की याद' (गीत भारती)। इन कविताओं की जो अन्य खूबियाँ हैं वे तो हैं ही लेकिन दोनों में जिस प्रकार गाँव का कलात्मक अनुभव उपलब्ध होता है वह बहुत ही प्रभावशाली है। मेरी निगाह में मेरा घर बेहतर कविता है। इन कविताओं में भी कितने ही मजेदार शब्दों का प्रयोग हुआ है। लेकिन अपवाद स्वरूप ही सही कहीं-कहीं शिल्प (मात्रा दोष, मैत्री दोष आदि की दृष्टि से) में चूके भी हैं। उदाहरण के लिए उनकी एक कविता है मीठे बोल (गीत भारती, पृ. 3)। यह कविता पहले के संकलन में भी आ चुकी है और पाठयांतर भी मिलता है। पंक्तियाँ हैं:

मीठे होते आम निराले
मीठे होते जामुन काले
मीठा शरबत है अनमोल
सबसे मीठे-मीठे बोल

मैं होता तो आम, जामुन के साथ शरबत न लाकर फल ही जैसे 'चीकू' या केले लाता और पंक्ति बनती 'मीठे चीकू हैं अनमोल' अथवा 'मीठे केले हैं अनमोल'।

वैसे एक और रूप मिलता है जो बेहतर और उचित है:

मीठे होते आम निराले

मीठे होते जामुन काले
मीठे होते गन्ने गोल
सबसे मीठे-मीठे बोल।

गाँव-देहात की अच्छी झलक 'आँधी आई' (युग भारती, पृ. 14) में भी उपलब्ध है। इसी प्रकार उनकी एक बहुत अच्छी कविता है छाया (गीत भारती, पृ. 15)। 'छाया' पर इतनी अच्छी बाल-कविता कम ही मिलेगी। बच्चे के साथ खिलवाड़ करती नटखट छाया का कोतूहलपूर्ण सुन्दर चित्र यहाँ विद्यमान है-

पीछे-पीछे कौन आ रही ?
संग-संग यह कौन आ रही?
दायें जाती, बायें जाती,
कभी सामने है आ जाती।
लम्बी कभी, कभी है छोटी,
दुबली कभी-कभी है मोटी,
तरह-तरह के रूप बनाती
साथ-साथ पर हर दम जाती।
कभी-कभी बनती है ऐसे
मेरी ही सूरत हो जैसे,
अजी! नहीं जादू या माया
अरे! तुम्हारी ही छाया।
छाया ही से काम तुम्हारे,
चलते पीछे-पीछे सारे,
जैसा जिसने काम बनाया
वैसी उसने पाई छाया।
दिखलाओ तुम सब पर दया
बने तुम्हारी शीतल छाया ।

मैं बहुत ही विनम्रता से कहना चाहूँगा कि अव्वल तो अंतिम दो पंक्तियों के बिना भी कविता पूरी हो रही थी और लदे हुए उपदेश की मार से बच रही थी, लेकिन कम से कम यह तो ध्यान रखा ही जा सकता है कि छाया के साथ न खपते हुए शब्द 'दया' के स्थान पर कोई अनुकूल तुक वाला शब्द रखा जाता। बहरहाल नमक बराबर ऐसे उदाहरणों से द्विवेदी जी का कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता। द्विवेदी जी की कुछ बहुत अच्छी कविताओं में उन कविताओं को भी लिया जा सकता है जिनमें बालक के मनोविज्ञान के अनुकूल भाव उभरा है। जैसे 'मैं क्या चाहता हूँ।' (हम बालवीर)। इस कविता में बच्चा अपनी अस्मिता को पहचानता है। वह वही नहीं बनना चाहता जो उनके बड़े, उसकी इच्छा को जाने बिना उसे बनाना चाहते हैं। बच्चे की अपनी इच्छा को यह महत्त्व देना और उन्हें स्वावलंबी बनने की सोच देना आज के कवियों से भी अपेक्षित है। कविता है:

अम्मा कहती, बनूँ कलेक्टर,
दादा कहते, जज बन जाऊँ।
दादी कहती, बनूँ गवर्नर,
सबके ऊपर हुक्म चलाऊँ।
.....
मैं चाहता देश की सेना
का बन जाऊँ एक सिपाही ।

याद करें बहुत ही विनम्रता के साथ द्विवेदी जी ने जिलाधीश द्वारा प्रदत्त स्पेशल मजिस्ट्रेट का पद अस्वीकार कर दिया था। अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के धनी द्विवेदी जी का कहना था, 'जो मनु होई हो जाब, कोई के नौकर नँइ हाँहिन।(सोहनलाल द्विवेदी, पृ. 16)।

जो कवि बच्चे के मनोविज्ञान की गहरी पहचान रखते हैं उनके बच्चे कविता के सपने में भी एक ऐसी सच्ची और अपेक्षित दुनिया में होते हैं जिसमें बच्चा अपने संबंधों, अपने परिवेश से आत्मीय ढंग से जुड़ा होता है। और हाँ जरा भी असुरक्षित महसूस करता है तो

सपने की गड़बड़ का सच भी झट उसके सामने आ जाता है। कविता है सपने में (गीत भारती, पृ.8)। यह एक अच्छी बाल कविता है:

मुन्नू आता, चाचा आते
दादा आते सपने में
खुल जाता है बंद मदरसा
गुरू पढ़ाते सपने में।
पेड़ खड़ा दिखलाता उस पर
चढ़ती गिल्ली सपने में।
.....
नानी बैठ कहानी कहती
हम सुनते हैं सपने में।
.....
टन-टन-टन-टन बज उठता
छुट्टी का घंटा सपने में।
कोई ऐसा काम नहीं
जो नहीं दीखता सपने में।

जैसा पहले संकेत दिया जा चुका है, द्विवेदी जी की अनेक ऐसी उत्कृष्ट कविताएँ हैं जिनमें प्रकृति का सहज कलात्मक सौन्दर्य उपलब्ध है। इन कविताओं में उनका सहज भाषा एवं लय अधिकार भी अद्‌भुत है। कविता चाहे हवा का झोंका हो (गीत भारती, पृ.4), अथवा बादल-बादल बरसो पानी (वही, पृ. 4), या फिर बसंत गीत (हिन्दी के श्रेष्ठ बाल गीत, जयप्रकाश भारती, पृ.123) अथवा प्रकृति की एक सुन्दर देन कबूतर सम्बन्धी कविता हो (हिन्दी बाल कविता का इतिहास, प्रकाश मनु, पृ. 34) अथवा 'ओस' (गीत भारती, पृ. 16) हो। सब में द्विवेदी जी के बाल कवि का वह सिद्धहस्त रूप मिलता है जिसकी ओर ध्यान दिया जाना चाहिए था और कम से कम अब दिया जाना चाहिए। ऐसी कविताओं की चटकती कलियों की सी ताजगी और स्रोत से निकलती नदी के से प्रवाह का भरपूर आनन्द मिलता है। कुछ अंश उदधृत कर रहा हूँ। 'ओस' कविता से-

नभ के नन्हें तारों से ये
कौन दमकते हैं यो दमदम?
लुटा गया है कौन जोहरी
अपने घर का भरा खजाना
पत्तों पर फूलों पर, पग-पग
बिखरे हुए रतन हैं नाना।
.....
जी होता, इन ओस कणों को,
अंजलि में भर घर ले आऊँ,
इनकी शोभा निरख-निरख कर
इन पर कविता एक बनाऊँ ।

और द्विवेदी जी जब नटखट होते हैं तो पूछिए मत। कविता बनती है:

नटखट पांडे आए-आए।
पकड़ किसी का घोड़ा लाए।
घोड़े पर हो गए सवार
घोड़ा भगा कदम दो चार ।
नटखट थे पूरे शैतान ।
घोड़ा भगा छोड़ मैदान ।।
नटखट पाण्डे गिरे उतान।।

(बालवाटिका, मार्च 2007, पृ. 22)

विनोद चंद्र पाण्डेय 'विनोद ने द्विवेदी जी की ऐसी कविताओं को उनकी राष्ट्रीय एवं नैतिक बाल-कविताओं से अलग बच्चों के लिए रूचि के अनुकूल मनोरंजन युक्त कविताएँ माना है और इनकी गणना निरंकार देव सेवक, श्रीप्रसाद जैसे कवियों के

समकक्ष की हैं। 'कविता एक बनाऊँ' पर ध्यान जाना चाहिए। सृजनात्मक प्रतिभा का उत्स है यह।

द्विवेदी जी ने प्रायः शिशुओं और थोड़े बड़े बालकों के लिए लिखा है। लेकिन उनकी कविताएँ किशोरों के लिए भी हैं। वैसे तो उनकी बड़ों के लिए मानी गई कितनी ही कविताएँ सहज ही किशोरों के लिए भी उपयुक्त हैं।

द्विवेदी जी ने ऐसी भी कविताएँ लिखी हैं जो लम्बे आकार की हैं और जिनमें कथात्मकता भी है। ऐसी कहानीनुमा कविताएँ उनके संग्रह रामू की बिल्ली में भी उपलब्ध हैं। संग्रह में कुल 6 कविताएँ हैं। इनके संबंध में भूमिका (26 जनवरी, 1980) के अन्तर्गत द्विवेदी जी ने लिखा है --

'पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से भारतीय लेखन भी अछूता नहीं रहा और उसकी जमकर नकल हो रही है .. .. । उसका बड़ा प्रभाव विशेषतः बाल-मन पर पड़ रहा है, जिसे रोका न गया तो उनका भविष्य अंधकार पूर्ण हो जायेगा। गगग इस संकलन में मैंने कुछ ऐसी ही रचनाएँ संकलित की हैं, जिससे बच्चों में मनोरंजन के साथ ही ऊँचे संस्कार भी अंकित हों और वे राष्ट्र के समर्थ नागरिक बनें। संकलन की सबसे अच्छी कविता मुझे 'चार गंवार' लगी है। इसमें वह सब है जो एक अच्छी कविता में पाया जाता है, मसलन मजा, हास्य, जिज्ञासा, उत्सुकता, रोचकता आदि। इन गंवारों का जो हश्र हुआ वह तो होना ही थाः

चार गंवार चार गंवार
वापस घर लौटे लाचार
पास टेंट में थे तो दाम,
किन्तु न आये कोई काम।

और अब लेख के अन्त की ओर जाते हुए मात्र दो कविताओं का और जिक्र कर लूँ। दोनों ही 'गीत भारती' में प्रकाशित हैं। एक है बाल विनय और दूसरी है 'मुस्कानों से भर दो घर वन'। इन दोनों कविताओं में बालक के प्रति कवि की सच्ची चिन्ता और दृष्टि स्पष्ट हो जाती है। कवि बालक के हर हाल में सुखी रहने की इच्छा रखता है। वह चाहता है कि बच्चा सुख में भी और दुःख में भी हँसता रहे। घर हो, पथ हो हर जगह उसे मुस्काना है, उमंग से भरे रहना है। तभी तो वह कण-कण को भी मुस्कानों से भरने में सक्षम होगा। एक तरह से कवि बड़ों को भी प्रेरित कर रहा है कि वे बच्चों को ऐसा परिवेश प्रदान करें जिसके कारण वह सदा मुस्कुराता रहे, हँसता रहे।

अब एक और बेहतर कविता का दर्शन कीजिएः

क्यों ?

क्यों बच्चों को नहीं सुहाता,
पढ़ना-लिखना, शाला जाना?
खेल-कूद में मन लगता,
दिन भर घर में धूम मचाना?
क्यों भाती मन को रंगरेली?
सुलझाए यह कौन पहेली ?
क्यों पतंग उड़ती है ऊपर?
क्यों न कभी नीचे को आती?
और गेंद फेंको जो ऊपर,
तो वह फौरन नीचे आती,
चोट लगाते ठेला-ठेली,
सुलझाए यह कौन पहेली?
क्यों मेंढक पानी में रहते?
टर्रटों-टर्रटों गाना गाते,
क्यों न घोंसले में चढ़कर के
वे चिड़ियों को मार भागते?

जल में ही करते अठखेली,
सुलझाए यह कौन पहेली ?
क्यों कोल्हू जब बैल चलाता,
उसकी आँख बंद की जाती?
तिल में से न कढ़ता है,
कितनी ही वह पेरी जाती,
कब मन में खुश होता तेली?
सुलझाए यह कौन पहेली ?
क्यों स्याही होती है काली?
क्यों काला कागज न दिखाता
रंग-बिरंगी तस्वीरें लाख,
हरा-भरा मन है बन जाता,
क्यों भाते हैं सखा-सहेली?
सुलझाए यह कौन पहेली ?
नहीं मदरसे अच्छे लगते,
भाता है छुट्टी का घंटा।
मजा न चुप रहने में मिलता,
मजा तभी जब बजता टंटा।
अच्छी लगती ठेलमठेली।
सुलझाए यह कौन पहेली ?
चाचाजी क्यों दाढी रखते,
बच्चों के मूँछें न दिखतीं?
क्यों चाची कंघी करती है,
अम्माँ अंजन रोज लगाती?
गुरु को भाते चेला-चेली,
सुलझाए यह कौन पहेली ?
क्यों चींटी बिल में रहती है,
क्यों इनको है शक्कर भाती,
पानी में शक्कर डालो तो,
पल भर में वह घुल-मिल जाती,
चींटी को भाती गुड़ भेली,
सुलझाए यह कौन पहेली?
क्यों नटखट बच्चों को भाता
सदा पहेली को सुलझाना,
क्यों नानी को अच्छा लगता,
बच्चों के मन को उलझाना,
क्यों भाती है कथा नवेली,
सुलझाए यह कौन पहेली ?
संपादक जी को क्यों भाता,
बच्चों के मन को छलना?
क्यों बच्चों को अच्छा लगता,
संपादक का मन फुसलाना,
छिड़ती-छेड़छाड़ अलबेली,
सुलझाए यह कौन पहेली ?
क्यों मुझको अच्छा लगता है,
नई-नई नित कविता गढ़ना?
क्यों तुमको अच्छा लगता है,
नई-नई नित कविता पढ़ना?
क्यों भाता है फूल चमेली,
सुलझाए यह कौन पहेली ?

बालक के ऐसे चिन्तक, ऐसे कवि, ऐसे हितैषी श्री सोहनलाल द्विवेदी के प्रति हिन्दी जगत सदा ऋणी रहेगा। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के महत्वपूर्ण शब्द है ''जब देश में बाल-साहित्य नहीं लिखा जा रहा था ऐसे में राष्ट्रकवि सोहनलाल ने प्रेरक संस्कार डालने वाली बड़ी संख्या में रचनाएँ लिखीं जो मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रभाव डालती हैं।''

एल-1202, ग्रेंड अजनारा हेरिटेज,
सेक्टर-74, नोएडा-201301
मो0 9910177099

राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी

➲ डॉ0 विजयानन्द

हिंदी साहित्याकाश के देदीप्यमान नक्षत्र के रूप में विख्यात राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जिले के बिंदकी तहसील के ग्राम-सिजौली में 28 फरवरी, सन् 1906 ई0 को एक संभ्रांत कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम स्व.वृंदावन द्विवेदी तथा माता का नाम स्वर्गीया श्रीमती सविता द्विवेदी था।

बाल्यकाल से ही उनकी शिक्षा की समुचित व्यवस्था उनके परिवार ने कर दी थी। फतेहपुर से ही हाईस्कूल की शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे उच्च शिक्षा के लिए वाराणसी आ गए। वहाँ काशी हिंदू विश्वविद्यालय से इन्होंने परास्नातक (एम.ए.) तथा विधि स्नातक (एल.एल.बी.) की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। काशी (वाराणसी) में ही उनका महात्मा गाँधी और पंडित मदन मोहन मालवीय जी से परिचय हुआ। आपको काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी में पंडित अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, लाला भगवान दीन, केशव प्रसाद मिश्र आदि ने पढ़ाया था। पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी तो आपके सहपाठी ही थे।

आपके लेखन की शुरुआत सन् 1915 ई0 के आसपास हो गई थी, जब आप सातवीं के विद्यार्थी थे, हालांकि तब छपने छपाने के विषय में सोचा भी नहीं था। बाद में गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस', मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत भारती' और जयशंकर प्रसाद के 'आंसू' से ज्यादा प्रभावित हुए और उन्होंने पुस्तक लेखन आरंभ किया। उन पर आदि शंकराचार्य की 'दर्पण संहिता' का भी काफी प्रभाव पड़ा था। आपकी पहली पुस्तक 'दूध बताशा' सन् 1930 ईस्वी में प्रकाशित होकर आ गई। इस तरह आपने बाल साहित्य से हिंदी साहित्य में प्रवेश किया। आपकी पंद्रह से अधिक बाल पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। सन् 1941 में आपकी देश प्रेम की कविताओं का संग्रह 'भैरवी' प्रथम वयस्क काव्यकृति के रूप में प्रकाशित हुई। धीरे-धीरे लगभग प्रतिवर्ष उनकी महत्वपूर्ण सरल काव्यशैली में लिखी काव्य पुस्तकें प्रकाशित होती रही। जिन्हें 'पूजागीत', 'युगाधार', वासवदत्ता, 'विषपान,' मुक्तिगंधा, वासंती, 'चित्रा', गांधायन आदि नामों से अलग-अलग पहचान मिली। उनकी बहुमुखी प्रतिभा के दर्शन उसी समय हो गए थे, जब 1937 में लखनऊ से उन्होंने दैनिक पत्र 'अधिकार' का संपादन शुरू किया था। चार वर्ष बाद उन्होंने इंडियन प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद से प्रकाशित 'बालसखा' का अवैतनिक संपादक के रुप में

संपादन किया। उस समय वे देश में बाल साहित्य के महान कवि एवं आचार्य थे। राष्ट्रीयता से संबंधित कविताएँ लिखने वालों में आपका स्थान महत्वपूर्ण है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी पर आपने कई भावपूर्ण रचनाएँ लिखी, जो हिंदी जगत में अत्यंत लोकप्रिय हुई। आपने गाँधीवाद के दर्शन और भावतत्व को वाणी देने का सार्थक प्रयास किया तथा अहिंसात्मक क्रांति के विद्रोह व सुधारवाद को अत्यंत सरल, सबल और सफल ढंग से काव्यमय बनाकर, अपने साहित्य को जन साहित्य बनाते हुए पाठकों के लिए उसे मर्मस्पर्शी, हृदयग्राही और मनोरम बना दिया।

बाल साहित्य की दृष्टि से आपने बच्चों की भाषा, बच्चों के हृदय और बच्चों की कल्पना को हू-ब-हू कागज पर उतार दिया। बाल मनोविज्ञान को समझते हुए प्रेरणादायक, उत्साहवर्धक, बच्चों को समझ में आने वाली भाषा में इन्होंने जो बाल साहित्य लिखा, वह आज भी अविस्मरणीय है। राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी जी ने जन साधारण को ही अपना सच्चा पाठक और श्रोता माना और इसीलिए उन्हीं की भाषा में लिखा। उनकी प्रमुख बाल रचनाएँ इस प्रकार हैं:- दूध बताशा, कुणाल, किसान, झरना, बाल भारती, चेतना, संजीवनी, सेवाग्राम, फूल और बगिया, कांटे, वैरागिया नाला तथा हँसो-हँसाओ आदि। उत्तर प्रदेश के पाठ्यक्रम में संकलित उनकी बाल कविता आज भी बच्चों की जुबान पर है-

पर्वत कहता शीश उठाकर,
तुम भी ऊँचे बन जाओ।
सागर कहता है लहराकर,
मन में गहराई लाओ।।

राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी साहित्य के चर्चित समीक्षक श्री अच्युतानंद मिश्र जी ने लिखा है कि- ''मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, रामधारी सिंह दिनकर, रामवृक्ष बेनीपुरी, सोहनलाल द्विवेदी आदि राष्ट्रीय नवजागरण के उत्प्रेरक ऐसे कवियों के नाम हैं। जिन्होंने अपने संकल्प, चिंतन, त्याग और बलिदान के सहारे राष्ट्रीयता की अलख जगाकर, अपने पूरे युग को आंदोलित किया था, गाँधी जी के पीछे देश की तरुणाई को खड़ा कर दिया था। पं0 सोहनलाल द्विवेदी जी उस काव्य श्रृंखला की महत्वपूर्ण कड़ी थे।''

डॉ0 हरिवंशराय बच्चन ने एक बार लिखा था- जहाँ तक मेरी स्मृति है, जिस कवि को राष्ट्रकवि के नाम से सर्वप्रथम अभिहित किया गया, वे सोहनलाल द्विवेदी ही थे। गाँधी जी पर केंद्रित उनका गीत 'युगावतार' और उनकी चर्चित कृति 'भैरवी' की ये पंक्तियाँ-

वंदना के इन स्वरों में,
एक स्वर मेरा मिला लो।
हो जहाँ बलि शीश अगणित,
एक सिर मेरा मिला लो।'

.....अंग्रेजी सरकार की जेलों में कैद स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों का सबसे अधिक कर्णप्रिय प्रेरणा गीत बन गया था। सोहनलाल द्विवेदी हिंदी काव्य-जगत की अमूल्य निधि हैं। महात्मा गाँधी के दर्शन से प्रभावित, द्विवेदी जी ने बालोपयोगी रचनाएँ खूब लिखीं। राष्ट्रीयता से संबन्धित कविताएँ लिखने वालों में इनका स्थान मूर्धन्य है। वे हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि थे। ऊर्जा और चेतना से भरपूर रचनाओं के इस रचयिता को महात्मा गाँधी ने स्वयं राष्ट्रकवि की उपाधि से अलंकृत किया था। सन् 1969 में भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री उपाधि प्रदान कर सम्मानित किया। उनका

काव्यपाठ भी बहुत ओजस्वी होता था। उनका 'खादी गीत' श्यामलाल पार्षद जी के झंडागीत के साथ गाया जाता था। उनका लम्बा गीत-

'ऐ लाल किले पर झंडा फहरने वालों,
पहले जवाब दो मेरे चंद सवालों का।
आजादी तो आई बर्बादी मिटी नहीं,
क्या न्याय मिलेगा यूँ ही रिश्वत देने से,
यह राज चलेगा कब तक ? रिश्वत वालों का।
सच कहना कितने साथी साथ तुम्हारे हैं...।

भारत के चर्चित प्रधानमंत्री पं0 जवाहरलाल नेहरू की रीति-नीति पर यह सीधा प्रहार था। जिसे सुनकर प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु, सरदार वल्लभभाई पटेल जी सहित उनके सहयोगी मंत्रियों को कुछ विशेष करने के लिए तत्पर होना पड़ा।

राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी जी की काव्यभाषा शुद्ध, सुबोध, परिमार्जित एवं सरल खड़ी बोली है। इन्होंने मुहावरों तथा व्यावहारिक शब्दावली का यथास्थान प्रयोग किया है। उनकी कविताओं में व्यर्थ के अलंकारों का प्रदर्शन नहीं है। कुछ स्थानों पर उर्दू तथा संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग भी देखने को मिलता है। उन्होंने काव्य-सृजन के लिए प्रबंध व मुक्तक दोनों ही शैलियों को अपनाया है। इनकी शैली में रोचकता है। मानवतावादी दृष्टिकोण से भरी, देश प्रेम से जुड़ी उनकी राष्ट्रीय कविताएँ ओजपूर्ण हैं। वे अपनी ऐसी ही ओजपूर्ण राष्ट्रीय कविताओं के माध्यम से पराधीन, गुलाम, सुप्त भारतीय जनमानस को जागरण का संदेश देने वाले विशिष्ट कवियों में गिने जाते थे।

गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित होकर ही द्विवेदी जी ने राष्ट्रीय आंदोलनों में भाग लिया और राष्ट्रीय भावना प्रधान रचनाओं के लिए देशभर के अनेक कवि सम्मेलनों में सम्मानित भी हुए। उनकी कविताओं का मुख्य विषय ही राष्ट्रीय उद्‌बोधन है। खादी प्रचार, ग्राम सुधार, देशभक्ति, सत्य, अहिंसा, प्रेम, आदर्श, चरित्र निर्माण आदि उनकी कविताओं के मुख्य विषय हैं। इनकी गणना राष्ट्रीयता एवं स्वदेश-प्रेम का शंख फूंकने वाले प्रमुख कवियों में की जाती है।

जब वे साहित्य क्षेत्र में अनवरत सृजन कर रहे थे, उस समय भारतीय स्वाधीनता संग्राम आंदोलन जोरों से चल रहा था। राष्ट्रपिता मोहनदास करमचंद गाँधी के नेतृत्व में पूरा भारत हिंदीमय हो चुका था और बापू ने हिंदी को हथियार बनाकर अंग्रेजों के खिलाफ पूरे भारत में जन आंदोलन छेड़ दिया था। राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी भी उनके साथ स्वाधीनता आंदोलन में कूद पड़े और उन्होंने महात्मा गाँधी को नायक मान कर गांधायन काव्यग्रंथ लिखा, जो खूब चर्चित हुआ। वे देश भर के काव्य मंचों पर बुलाए जाने लगे और राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर, गयाप्रसाद शुक्ल सनेही, रामनरेश त्रिपाठी, श्यामनारायण पांडेय, सुभद्राकुमारी चौहान विद्यापति कोकिल आदि की तरह उनका भी काव्य साहित्य जन-मन-गण को आकर्षित करने लगा था।

उत्तर प्रदेश सहित कई प्रदेशों की सरकारों ने उनकी कविताओं को पाठ्यक्रम में शामिल कर लिया और वे नगर-नगर, गाँव-गाँव पढ़ाए जाने लगे, उनकी यह कविता बहुत प्रसिद्ध हुई-

चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि,
गड़ गए कोटि दृग उसी ओर..... ।

इस कविता को पढ़कर मैं अपने विद्यार्थी

जीवन में बहुत प्रभावित हुआ था और पुस्तक में उनकी जीवनी पढ़कर उनके पते पर एक पंजीकृत पत्र भी भेज दिया था। जिसका उत्तर तो नहीं मिला, किंतु जब मैं प्रयागराज (तत्कालीन इलाहाबाद) के राजकीय इंटर कॉलेज में 11वीं में प्रविष्ट हुआ तो संयोग से पता चला कि उनके पड़ोस के एक वकील साहब मेरे पड़ोस में रहते थे। उन्होंने जब बिंदकी, फतेहपुर जाकर राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी को मेरा नाम, परिचय बताया, तब उनकी ओर से मुझे बिंदकी आने का आमंत्रण मिला। मैं उन्हीं पड़ोसी श्री कमलेश मिश्र के साथ एक रविवार को रेल द्वारा राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी से मिलने, बिंदकी, फतेहपुर पहुँच गया। वहाँ राष्ट्रकवि जी तथा उनके पुत्रों सहित पूरे परिवार से मुलाकात हुई। दो दिन रुककर साहित्यिक चर्चाओं, संस्मरणों के श्रवण करने एवं चित्र खिंचवाने के बाद, उनका साक्षात्कार लेकर मैं इलाहाबाद के लिए चल दिया। बिंदकी बाजार की सड़क के दाएं तरफ राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी इंटर कालेज का बोर्ड दिखाई दिया। मन को बहुत परितोष मिला कि राजनेताओं के नाम पर तो बहुत से कालेज, विश्वविद्यालय होते हैं। साहित्यकारों के नाम पर तो कहीं-कहीं ही दिखाई पड़ता है। बात ही बात में उन्होंने लखनऊ में रह रहे पंडित श्रीनारायण चतुर्वेदी जी से भी मिलने को कहा था, जिससे मेरी 'साहित्यकारों से साक्षात्कार' की शृंखला निरंतर चलती रहे। कालांतर में सुप्रसिद्ध साहित्यकारों के संक्षिप्त परिचय, परिवेश एवं साक्षात्कार के साथ मेरी यह पुस्तक 'साहित्यकारों से साक्षात्कार' (सर्वश्री अमृतलाल नागर, महीयसी महादेवी वर्मा, डॉ0 रामकुमार वर्मा, रामेश्वर शुक्ल अचल, डॉ0 रामविलास शर्मा, पंडित श्यामनारायण पांडेय, गोरा पन्त शिवानी, राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी, श्रीनारायण चतुर्वेदी एवं विनोद रस्तोगी के साक्षात्कार) सन् 1996 ईस्वी में प्रकाशित हुई, जो आज भी पाठकों, शोधकर्ताओं के बीच चर्चा का विषय बनी है।

आपको कानपुर विश्वविद्यालय ने डी0लिट0, राजस्थान विश्वविद्यापीठ ने साहित्य चूड़ामणि आदि मानद सम्मानों से सम्मानित किया। एक बार आपके जीवन काल में भ्रमवश 1982 ईस्वी में ही कानपुर के दैनिक अखबारों ने दिवंगत होने का समाचार प्रकाशित कर दिया। बाद में उसका खंडन हुआ। कालांतर में ऐसे प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी सुकवि, राष्ट्रकवि पं0 सोहनलाल द्विवेदी का 1 मार्च 1988 ई0 को शिवाला, कानपुर, उत्तर प्रदेश में देहावसान हो गया। हिंदी साहित्य का चमकता हुआ सितारा अचानक सर्वदा के लिए अस्त हो गया, किंतु अपनी रचनाओं के माध्यम से आज भी वे हम सभी के बीच अमर हैं।

हवेलिया, प्रतिष्ठानपुर (झूसी)
प्रयागराज-211019, उत्तर प्रदेश
मो0. 919335138382

नागार्जुन की काव्य संवेदना

➲ डॉ0 अभिषेक शर्मा

नागार्जुन प्रगतिवादी काव्यधारा में 'रागात्मक भावबोध' की प्रतिष्ठा करनेवाले पूर्णभावुक कवि हैं। उनकी काव्य संवेदना स्निग्ध और सहानुभूतिमूलक है। वे गद्य और पद्य में समाभ्यस्त रचनाकार हैं। उनकी काव्य-कृतियों में 'सभ्यता-समीक्षा' की खूबियाँ निहित है। इसीलिए डॉ. नामवर सिंह उन्हें 'तुलसी' जैसा लोकप्रिय कवि कहते हैं। उनकी काव्य परिधि में चराचरजगत समाहित है जो उनकी काव्य संवेदना को सजीवता प्रदान करता है। प्रगतिशील कवि नागार्जुन की काव्य-संवेदना उनके लोकजीवन के अनुभवों से अनुप्राणित है। यह बहुत कम लोग जानते हैं कि उनकी काव्य चेतना में सर्वाधिक रूप से युवावर्ग की आशाएँ आकाँक्षाएँ प्रतिबिंबित होती है। युवाओं के जीवन और चरित्रनिर्माण पर उनकी दृष्टि बहुत पैनी है। सूक्ष्मता से देखने पर पता चलता है कि वे अपनी कविताओं द्वारा भारतीय युवावर्ग को आजादी क्या है? प्रेम किसे कहते हैं? करूणा क्या है? गरीबी से कैसे लड़ें? पूँजीवाद के विरोध का आधार क्या हो? जैसे अनेक विषयों को तार्किक ढंग से समझाते हैं। कवि नागार्जुन मानवजीवन का उत्कर्ष उसकी श्रम-साधना में देखते हैं। मार्क्सवादी चिंतन पद्धति से प्रभावित होते हुए भी भारतीय ज्ञानपरंपरा और सनातन मानवमूल्यों में उनकी दृढ़ आस्था है इस संदर्भ में उनकी 'कालिदास' शीर्षक कविता को उद्धृत किया जा सकता है। साहित्यसृजन के क्षेत्र में नागार्जुन कई अर्थों में मार्क्सवाद के भारतीय संस्करण जान पड़ते हैं। उनकी रचनाओं के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि वे बहुभाषाविद् और अनेक विषयों के जानकार थे। नागार्जुन के व्यक्तित्व में निर्भिकता कूट-कूट कर भरी थी। उनकी कविताएँ समकालीन राजनीतिज्ञों की आलोचना करने से कभी नहीं चूकती थी। ग्राम्यत्वबोध उनकी कविताओं में आद्यांत परिलक्षित होता है। राष्ट्रनिर्माण में वे युवाओं की भूमिका को सर्वोपरि मानते हैं। अपने समय के युवाओं पर भरोसा करने वाले वे एक युवावत्सल कवि हैं। इसका स्पष्ट प्रमाण हमें 'तुमकिशोर, तुमतरुण...' शीर्षक कविता में देखने को मिलता है। उद्धृत कविता में कवि नागार्जुन 'युवावर्ग' का अभिनंदन करते हैं- ''तुमकिशोर/तुमतरुण/तुम्हारी अगवानी में/खुरच रहे हम राजपथों की काई-फिसलन/खोद रहे जहरीली घासें /पगडंडियाँ निकाल रहे हैं/गुंफित कर रक्खी हैं हमने/ये निर्मल निश्छल प्रशस्तियाँ/आओ, आगे आओ, अपना दाय भाग लो/अपने स्वप्नों को पूरा करने की खातिर/तुम्हें नहीं तो और किसे हम देखें बोलो/निबिड़ अविद्या से मन मूर्छित/तन जर्जर है, भूख-प्यास से/व्यक्ति-व्यक्ति सुख-दैन्य ग्रस्त है/दुविधा में समुदाय पस्त है/लोमशाल अब घर-घर को आलोकित कर दो। "वस्तुतरू यह कवि नागार्जुन की भारतीय युवाओं के प्रति अपार निष्ठा है जो उन्हें छायावादोत्तर कवियों में विशिष्ट दर्जा प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त अबोध बच्चों और शोषित महिलाओं पर भी

उन्होंने कई मार्मिक कविताएँ लिखीं हैं। 'हरिजनगाथा' इसका ज्वलंत प्रमाण है। नागार्जुन की कविताएँ व्यंग्यात्मक होते हुए भी कई अर्थों में गंभीर राजनीतिक और सामाजिक चिंताओं से आबद्ध हैं। उनकी कविताएँ साधारण मनुष्य की हितरक्षा के साथ-साथ मानवमूल्यों की रक्षा के लिए भी प्रतिबद्ध है। वे साहित्य को मानव-मन की परिष्कृति का प्रमुखसाधन मानते हैं। उनका स्पष्ट मत है कि सत्साहित्य आत्मोत्थान और राष्ट्रोत्थान में समवेतरुप से सहायक होता है। नागार्जुन की कविताओं का मूलस्वर अहिंसात्मक है। राष्ट्रीयता और राष्ट्रप्रेम जैसे शब्दों को उनकी कविताओं में कई स्थलों पर रेखांकित किया गया है। राष्ट्रपिता 'महात्मा गाँधी' की हत्या की भर्त्सना करते हुए वे आक्रोशित मन से लिखते हैं कि-''इन संप्रदायवादी दैत्यों के विकट खोह/वह नहीं चाहते, पिता, तुम्हारा श्राद्ध ओह! /भूखे रहकर/गंगा में घुटने भर धँसकर/है वृद्ध पितामह/तिल-जलस/तर्पण करके/हम तुम्हें नहीं ठग सकते हैं..../यह अपने को ठगना होगा/शैतान आय गारह-रह हमको भरमाने/अब खाल ओढ़कर तेरी सत्य–अहिंसा की/एकता और मानवता के/इन महाशत्रुओं की न दाल गलने देंगे/हम नहीं एक चलने देंगे। "वस्तुतः महात्मा गांधी का वध संपूर्ण मनुष्यता के वध जैसा है। उद्धृत काव्यांश में कवि का आक्रोश सिर्फ कवि तक ही सीमित न होकर संपूर्ण जनमानस तक प्रसारित हो जाता है।

कवि नागार्जुन की कविताओं की निर्मिति में भावुकता और सुकुमारता का भी स्थान विशिष्ट है। यही कारण है कि उनकी अधिकांश कविताएँ गेय हैं। उनकी काव्यसंवेदना पर विचार करते हुए प्रसिद्ध आलोचक 'डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी' उन्हें कबीर और तुलसी जैसा संवेदनशील कवि कहते हैं। अपने प्रसिद्ध निबंध 'ऐसे ही रहे होंगे कबीर और तुलसी' में वे लिखते हैं कि.-''नागार्जुन मात्र फक्कड़ चिर युवा थे। xxx वे हमारे जातीय सौन्दर्यबोध के प्रतीक कवि हैं। जिस तरह सौन्दर्य नित्य नवीन होता रहता है उसी तरह नागार्जुन का व्यक्तित्व और साहित्य। नागार्जुन को देखकर हम अनुमान कर लेते थे कि सरहपा, कबीर, तुलसी कैसे रहे होंगे। नागार्जुन सच्चे अर्थों में भारतीय संस्कृति के प्रतीक थे। xxx लोक – जीवन से संवेदना और उसे प्रकट करने के लिए रचनारूप बटोर नागार्जुन की प्रतिभा का रहस्य है। समकालीन हिंदी कविता में इतने लोक प्रचलित काव्यरूपों का प्रयोग शायद ही किसी अन्य कवि ने किया हो। दोहा, मंत्र, हरगंगे आदि इसके प्रमाण और उदाहरण हैं। नागार्जुन इतिहास के सहचर कवि हैं। "नागार्जुन की कविता में कृषिजीवन की अनुभूतियों के अनेक सजीव चित्र भरे पड़े हैं। 'बहुत दिनों के बाद' शीर्षक कविता का एक अंश यहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है - ''बहुत दिनों के बाद/अब की मैंने जी भर देखी/पकी-सुनहली फसलों की मुस्कान/बहुत दिनों के बाद। /अबकी मैं जी भर सुनपाया/धानकूटती किशोरियों की कोकिल कंठी तान/बहुत दिनों के बाद/अबकी मैंने जी भर सूँघे मौलसिरी के ढेर-ढेर से ताजे- टटके फूल/बहुत दिनों के बाद। /अबकी मैं जी भर छू पाया/अपनी गँवईं पगडंडी की चंदनवर्णी धूल/बहुत दिनों के बाद। ''यहाँ हम कवि नागार्जुन का प्रकृति-प्रेम भी देख सकते हैं, जिसे आज के समकालीन कवियों ने लगभग भुला सा दिया है।

कवि नागार्जुन के व्यंग्यों में भी सूक्ष्म अन्वेषण और व्यवस्था सुधार की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। उनके यहाँ व्यंग्यात्मकता अपने संपूर्ण विचारात्मकता के साथ उपस्थित है। उनके व्यंग्य हँसोड़ों को भी सोचने पर मजबूर कर देते हैं। नागार्जुन अपने व्यंग्यों द्वारा व्यवस्था की आलोचना करने के साथ-साथ उसमें परिवर्तन भी लाना चाहते हैं। व्यंग्य उनके यहाँ विरक्ति के रूप में प्रयुक्त न होकर आत्मसमीक्षा के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। कवि नागार्जुन के व्यंग्यों में व्यवस्था पर प्रहार के साथ-साथ गहरी करुणा का भाव भी छिपा है। 'प्रेत का बयान' शीर्षक कविता में वे लिखते हैं कि- ''तनिक भी पीर नहीं/दुख नहीं, दुविधा

नहीं/सरलतापूर्वक निकले ये प्राण/xxx सुनकर दहाड़/स्वाधीन भारत के/भुखमरे, स्वाभिमानी, सुशिक्षक प्रेतकी/रह गये निरुत्तर,/महा महिम नरकेश्वर।''

कवि नागार्जुन की कविताओं में निहित उत्तेजनात्मक संवेदन और तुकबंदियाँ पाठकों के मन को क्षणिक प्रभावित न करके उन्हें गंभीरतापूर्वक अपने भविष्य के प्रति सोचने के लिए प्रेरित करती हैं। यही कारण है कि भारतवर्ष की आजादी के उपरांत राजनेताओं की सामूहिक असफलता को केंद्र में रखकर लिखी गयी अधिकांश राजनीतिक कविताएँ जन-समुदाय को उद्वेलित करती हैं। नागार्जुन की कविताओं की एक प्रमुख शर्त- सुशासन है। उनकी संपूर्ण काव्य-यात्रा एक सुशिक्षित और भय मुक्त समाज के निर्माण हेतु समर्पित है। इसीलिए वे अपनी कविताओं में आस्था और विश्वास के स्थानपर 'विचारों' को अधिकतर तरजीह देते हैं। फलतः उनकी राजनीतिक कविताओं में हमें अक्सर प्रश्नाकुलता के दृश्य दिखाई देते हैं। आधुनिक कविता के तेवर और कलेवर पर विचार करते हुए 'प्रो. नित्यानंद तिवारी' लिखते हैं कि- ''कवि दृश्य से अपने को मुक्त नहीं कर सकता और सिर्फ उसका ही हो भी नहीं सकता। xxx उसे दृश्य की भीड़ और अपने अकेले होने को जागरूक और सचेत होकर अन्दाजना होता है। xxx परिस्थितियों को निचोड़ लेने की निर्ममता में कहीं भी असावधानी न बरतने का मिजाज अर्जित करना होता है।''

कवि नागार्जुन काव्य-रचना के दौरान किसी 'अनासक्त योगी' जैसे प्रतीत होते हैं। इसीलिए वे अपनी कविताओं में स्वयं की भी आलोचना से नहीं चूकते हैं। स्वयं को पुरस्कृत होता हुआ देखकर भी 'भ्रष्टाचार की वैतरणी में डुबकी लगाने' वाली बात सिर्फ वही कह सकते हैं ! कबीर की तरह नागार्जुन का भी युग-बोध प्रखर हैं। स्वार्थ, अहंकार और असत्य से वे मानव-जीवन को बोझिल नहीं बनाना चाहते हैं। इसलिए उनकी कविताओं में श्रमजीवीवर्ग की आद्यांत सराहना की गई है - ''यहाँ वहाँ पर चित्र-कूट हैं /बाएँ-दाएँ तलहटियों तक/फैले इनके जटा-जटू हैं/सूखे झरनों के निशान है/तीन पथों में बहनेवाली/गंगा के महिमा-बखान हैं/इनकी आभा दमक रही है/इनका चूना चमक रहा है। इनके मालिक वे किसान हैं/जिनके लड़के मैदानों में/युग की डाँट-डपट सहते हैं/दफ्तर में भी चुप रहते हैं।''

वस्तुतः कवि नागार्जुन की कविताओं में लोकसंस्कृति का उत्कर्ष छिपा है। उनकी काव्य भाषा अर्थपूर्ण और गेय है। उनकी कविताएँ राष्ट्रीय चेतना के विकास और उसके संरक्षण के प्रति वचनबद्ध हैं। कवि नागार्जुन के यहाँ मानव जीवन के मूल्यांकन की सबसे बड़ी कसौटी नैतिकता एवं त्याग है, और यही उनकी काव्य- संवेदना की सबसे बड़ी खूबी है।

वरिष्ठ सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग
रेवेंशा विश्वविद्यालय
कटक-753003, ओड़िशा, भारत

साढ़ेसाती

➲ कृष्णाबिहारी

गुप्ता जी अड्डे पर नियमित आते हैं.....

देवता भाई का लांड्री अड्डा है। अड्डे पर यादव जी, मिश्रा जी और जय ठाकुर आ गए हैं. गुप्ता जी का टाइम अब हो रहा है। होटल से रात का खाना खाकर आते हैं। लांड्री के सामने मुख्य सड़क पर बस स्टॉप है इसी स्टॉप पर उतरते हैं और एक-डेढ़ घंटे बाद होटल की दूसरी बस से अपनी रिहाइश के लिए चल पड़ते हैं। इन दिनों गुप्ता जी भीतर ही भीतर अपने घर-परिवार को लेकर परेशान हैं। हालांकि, गुप्ता जी समझते हैं कि जगत का यही कारोबार है मगर उन्हें इस बात का जवाब नहीं मिलता कि जगत का अगर यही कारोबार है तो क्यों है?

गुप्ता जी फाइव स्टार होटल में पेंटर हैं। होटल की ओर से वेतन तो बहुत अच्छा नहीं है मगर जो सुविधाएँ हैं वे उन्हें राजयोग से जोड़ती हैं। सुबह का नाश्ता, लंच और रात का खाना होटल की तरफ से है। रिहाइश भी होटल की पूरी-पूरी बिल्डिंग होटल ने अपने कर्मचारियों के लिए ली है। हफ्ते में दो बार फ्लेट की सफाई के लिए आदमी आता है। एक कमरे में दो लोग, टी. वी. और वाई-फाई की सुविधा है। कपड़े हर दिन धुले हुए मिलते हैं। फ्लैट से होटल तक आने-जाने के लिए हर आधे घंटे में बी. एम. डब्ल्यू. की बसे हैं। इस सुविधा के बाद गुप्ता जी का वेतन है लगभग पचीस हजार रूपये प्रति माह। गुप्ता जी इससे हमेशा खुश ही दिखाई दिए। एक बार उन्होंने अड्डे पर कहा, ''हम तो पाँच तक पढ़े... आगे पढ़बे नहीं किये... स्कूल से भाग आते थे... भागते क्या थे, जाते ही नही थे... पढ़ाई छूट गई... पढ़े होते तो आज न जाने कहाँ होते... लेकिन तकदीरिया सब कुछ थोड़े देती है !'' गुप्ता जी ने आगे बताया हम दस बरस के थे जब अम्मा-बाबू जी के साथ इलाहाबाद कुम्भ गए थे। उहाँ अम्मा ने एक बाबा से हमारा हाथ देखाया और पूछा कि लड़िकवा पढ़ी कि नाई ? तो बाबा बोले कि लरिका के हाथ में बिद्या नहीं है लेकिन बिदेश जाएगा और खूब कमायेगा... घर बदल देगा... तबसे हम जब हवाई जहाज देखते तो सोचते कि हम कब बइठेंगे जहाज में..... पन्द्रह के थे कि सादी हो गई। सत्रह बरस की उमिर में हमने घर छोड़ दिया, भाग के दिल्ली आ गए और लकड़ी पर पोलिश का काम सीखा। एक सरदार सिखाता था. जल्लाद था जल्लाद, गलती होने पर बहुत मारता था लेकिन उसका दिल मोम था। विरोधाभास पचास रुपया महीना मिलता था। कारखाने में ही सोने की जगह कुछ पैसा ऊपर का काम करने पर मिल जाता।

जो पइसा ऊपर से मिल जाता उसी में खा-पी लेते पचास रुपया हर महीना मनीआर्डर बाबूजी के नाम। बड़ा कष्ट सहा हमने... सुबह उठते ही झाड़ू लगाने से काम शुरू हो जाता था... हम बड़ी मेहनत से काम सीखे.... उसी मेहनत का फल है कि ऊ सरदार हमको रिकमेंड किया इस कम्पनी को और आज हम गल्फ में हैं... लेकिन गल्फ का पइसा सबको फलता नहीं है... हमी को देखिये कि कितना कमाया... घर एक में था। भाई लोगों को यहाँ ले आया ढाई बिगहा खेती खरीदी। बेटों को पढ़ाना चाहा, पानी की तरह पैसा बहाया, लेकिन सब व्यर्थ। भाई लोगों को यहाँ न ले आया होता तो सब ठीक होता। सब यहाँ आ गए और बदल गए... जिसके घर में कोई सवांग (मर्द) न हो उसको गल्फ नहीं आना चाहिए। घर की औरतें और बच्चे बिगड़ जाते हैं। बिना मिनहत के घर बइठे ऊ लोग पइसा पाकर फुटानी करते हैं और इहाँ हम लोगों की दसा को हमी लोग जानते हैं। इसे मुझसे ज्यादा कौन समझ सकता है...''

अड्डा ने अडंगा लगाया कि ऐसा कहना सही नहीं है लेकिन गुप्ता जी बोले, ''जब घर एक रहता है तो सब सही होता है लेकिन जब घर में सबकी बुद्धि चलने लगती है तो घर बिगड़ जाता है। और, बुद्धि तभी चलती है, जब चार पइसा आने लगता है.... एक घारी बनवाई... चरन बनी... पक्की चरन... पाँच नाद वाली... दो बैल, एक गाय, एक भैंस, पड़रू-पड़िया, बछवा.... लेकिन जब बंटवारा हुआ तो सब तितिर-बितिर, घारी मंझले भाई को मिली... दस साल हो गए घारी उसी के हिस्से में है। चार साल पहिले छोटे बेटे की सादी में जब मैं गाँव गया तो मंझिले भाई की बीवी के सामने कहा कि बच्चों को दूध चाहिए तो एक गाय खरीद लूँ... उसी घारी में बाँधी जायेगी तो चुप साध गई। एक शब्द नहीं बोली। जैसे उसने सुना ही नहीं और जब मैंने दुबारा कहा तो बोली, ''जगहिया हमरे हिस्से आई हैं अपना ईंटा-ऊंटा उखार लीजिये... जानते हैं जब मंझिले भाई की सादी थी तो हम पचीस ग्राम की चेन उसको पहिनाए थे... क्या मालूम था कि भयहु ऐसी आ रही है जो चउवा नहीं बाँधने देगी... लेकिन अब उसको क्या कहें... वह तो पट्टीदार है... अपने ही बच्चे बिगड़ गए... गल्फ का पइसा हर महीने पहुँचता रहा और लोग मउज करते रहे... हम तीस बरस के थे जब इहाँ आये थे सन् नब्बे में। जवानी कुर्बान हो गई। दो बरस में एक महीने की छुट्टी। उसी में जाते रहे और मलकिन के साथ सिर जोड़कर रोते रहे। किसे मालूम था कि वक्त ऐसा भी आएगा ... भाई अलग हो गए। उनको सब बना-बनाया मिल गया। ढाई बिगहा जो खेत खरीदे थे उसमें भी 'तिसरी' मिला। मेरे सामने तो अब गिरहस्ती नई थी...''

''ऐसा तो सबके साथ होता है गुप्ता जी। जो हो गया उसे भूलिए अब अपना और अपने बच्चों का देखिये...'' यादव जी ने बात को बदलना चाहा....

''अब अपना क्या और बच्चों का क्या...?''

गुप्ता जी ने कुछ ऐसे कहा कि जैसे सब मतलब के यार हैं...

गुप्ता जी के दो बेटे और एक बेटी है। बेटे बड़ी मुश्किल से इंटर तक पढ़े। दोनों बेटों की शादी हो गई है। बेटी सबसे छोटी है, पढ़ने-लिखने और देखने -सुनने में ठीक है। बी.ए. के तीसरे साल में है। गुप्ता जी का मन तो नहीं था कि बेटी को आगे पढ़ाएं लेकिन बेटी ने उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से जब प्रथम श्रेणी में इंटर पास किया और आगे पढने के लिए जिदिया गई तो गुप्ता जी ने सोचा कि जो पढ़ाई छोड़कर

वे भाग खड़े हुए थे और जिस पढ़ाई को उनके बेटों ने दुत्कारा उसे बेटी ने अपनाया है तो उसे आगे पढ़ाना है. ... हालांकि, उसकी शादी तय हो गई है और अबतक हो भी गई होती लेकिन बीच में व्यवधान आ गया...

गुप्ता जी बस से उतरे...

इन दिनों की उनकी परेशानी इतनी व्यक्तिगत है कि उसे जानकर केवल सहानुभूति ही प्रकट की जा सकती है। उनका बड़ा बेटा अपना परिवार लेकर मुंबई चला गया है। तीन साल से घर नहीं आया छोटा बेटा भी एक बेटे का बाप हो गया लेकिन कमाने-धमाने के नाम पर हर महीने बाप का पैसा अगोरता है। हर महीने वेतन मिलते ही पहला काम घर पैसा भेजना न भेजें तो घर पर पाँच परानी का खर्च कैसे चले ? अपने पोते को, यानी छोटे बेटे के बेटे को गुप्ता जी हँसी-खुशी में करोड़ों का लाल कहते हैं। फिलहाल आज का मसला उसी करोड़ों के लाल से जुड़ा है...

गुप्ताजी अपने करोड़ों के लाल की गन्दी बात से परेशान हैं। तीन वर्ष का होकर अब चौथे में पहुँचा है। उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के एक गाँव में माँ और दादी की देखरेख में पल रहा है। बाप कुछ करता-धरता नहीं। इस दुआरे-उस दुआरे बैठा तास खेलता है। जब गुप्ताजी को पोते के पैदा होने की खबर मिली तो उन्होंने अड्डे पर मिठाई बाँटते हुए कहा, आ गया... आ गया मेरे घर में करोड़ों का लाल आ गया... '' यह तीन साल और कुछ महीने पहले की बात थी। और आज, वही करोड़ों का लाल उनकी चिंता का सबब बन गया है ... असल में करोड़ों के इस लाल से पहले भी में एक लाल तब आया था जब गुप्ताजी के बड़े बेटे को भी पहली संतान बेटे के रूप में हुई थी, गुप्ताजी बहुत खुश थे लेकिन उनकी खुशी एकदम से इसलिए गायब हो गई कि बड़ी बहू उनकी मलकिन से हरदम झाँय-झाँय करती थी और उनके बड़े बेटे को उसने ऐसा भरमाया कि वह घर छोड़कर मुंबई चला गया और एक साल बाद आकर अपनी बीवी और बच्चे को भी ले गया। गुप्ताजी ने ऐलान कर दिया कि बहू नहीं है... दुश्मन है...

गुप्ताजी ने बड़े बेटे को माफ नहीं किया लेकिन उसके बेटे को भूल नहीं पाए। जब माया-मोह जोर मारते हैं तो उसके लिए बिना किसी को घर में बताये चुपचाप अलग से पैसे भेजते आ रहे हैं। हाँ, उसको कभी करोड़ों का लाल नहीं कहा। लेकिन छोटे बेटे की बहू उनकी मलकिन का इतना खयाल रखती है कि जब उसने पुत्र-रत्न को जन्म दिया और खबर गुप्ताजी को मिली तो मिठाई बाँटते हुए उन्होंने कहा आ गया... आ गया मेरे घर में करोड़ों का लाल आ गया...

अब उसी लाल की हरकतों ने गुप्ताजी को चिंतित और दुखी कर दिया है ... कह रहे हैं, ये लड़का तो हम सबको बंधवा के जेहल पहुँचा देगा...''

''गुप्ताजी, बात क्या है ? पूरी बात आप बताते नहीं और छटपटाते ज्यादा हैं मिश्राजी पूछ रहे हैं''

''अभी क्या कहें हम... एक महिन्ना हो गया... तबीयत परेसान है... करोड़ों के लाल ने दुखी कर रखा है... बित्ता भर का लड़का चोरी सीख गया है... घर से निकलता है और जिस किसी के दुआरे पर कोई सामान रखा पाता है, उठा लाता है ये तो लाठी चलवायेगा... गाँव है भाई... जानते नहीं का आप लोग कि बच्चों के मामिले में बड़े लड़ पड़ते हैं... घर पर कोई सवांग नहीं और यह लड़का आफत जोत रहा है...''

बच्चा है, समझ जाएगा... कितना बड़ा है... तीन साल का न! बचपना है... समझाइये उसे...'' यादवजी ने गुप्ताजी को धीरज बंधाया।

''नाहीं... ई अपने ननिहाल जाके बिगड़ गया... गाता है चार बोतल बोद्का... काम मेरा रोजका... ई गाना गाने लायक है ? कि उसकी उमिर है यह गाना गाने की... ?''

''आप पीते हैं तो ठीक... और वह तो केवल पीने का गाना गा रहा है तो आपको प्राब्लम है?'' दरभंगा के जय ठाकुर ने चुटकी ली।

''देखिये... ई मजाक का मौका नहीं है आप तो गाँव का हाल जानते हैं... आज कोई किसी का है नहीं... दया-माया किसी के पास नहीं है... कोई यह नहीं देखेगा कि बच्चा है... उठाके पटक देगा तो ची बोल जायेंगे...''

''कोई नहीं पटकेगा... बच्चा है यार गुप्ताजी...'' जय ठाकुर ने बात को सहज बनाने की कोशिश की लेकिन गुप्ताजी बोल पड़े, ''आप ऊ कहानी नहीं सुने कि एक लड़का साधू को पत्थर मारा तो ऊ उसको दू पैसा दे दिए लेकिन जब ऊ एक पहलवान को पत्थर मारा तो पटक दिया न... अब गाँव में कोई साधू नहीं है सब पहलवान हैं ...''

''अब गाँव में कोई नहीं है... सब शहर भाग गए... चिंता मत करें उसका नाम किसी स्कूल में लिखवायें। सुधर जायेगा...'' मिश्राजी बोले।.

''सरकारी स्कूल में नाम लिखवाया गया तो रोज भाग आया उहाँ से.... उस स्कूल में बाउंड्री नहीं है... गाँव के परधान के स्कूल में चार दिन पहले नाम लिखाया गया कि उसमें गेट पर ताला लग जाता है... अब परधान बोल रहे हैं कि उसको स्कूल मत भेजो... सब लड़कों से लड़ रहा है... जो समझाता है उससे बाझ (लड़) जा रहा है... अब क्या करें हम ...?''

''गुप्ताजी, तीन साल का बच्चा है... एक-दो तमाचे कायदे से लग जाएँ तो ठीक हो जाएगा... लेकिन उसे तमाचे बताकर लगाएं जाएँ कि क्या सही है और क्या गलत है... उसे बताएं कि जो कर रहा है... वह गलत है... केवल तमाचे लगाने से भी काम नहीं बनेगा... समझाना भी पडेगा...'' मिश्रा जी बोले।

''मारा गया तमाचा भी... हबस-हबसकर रोता है और फिर घर से बाहर निकलते ही दूसरे का कोई भी सामान उठा ला रहा है... यह तो लखपतिलाल भी नहीं होगा... हमको भिखारी कर देगा... असल में साढ़ेसाती लगी है... जबसे बड़े बेटे की सादी किये तबसे घर तहस-नहस हो गया... बड़ा बेटा घर छोड़ गया... बेटी की सादी तय किये तो उसके ससुराल में दुर्घटना हो गई। चचेरा देवर न जाने किस बात पर फाँसी लगा लिया... एक साल तक सादी टल गई। अब ये एक बित्ता का लड़का गाँव में बेइज्जत करा रहा है साढ़ेसाती चढ़ी है... बेटी की सादी हो जाती तो अब हम गाँव चले जाते और बाकी जिनगी मलकिन के साथ गुजारते...''

''सब ठीक हो जाएगा गुप्ता जी... बड़ी-बड़ी समस्याएं निपट जाती हैं यह तो बड़ी छोटी बात है...।'' जय ठाकुर ने उन्हें दिलासा देने की एक और कोशिश की मगर गुप्ताजी जिस तरह से परेशान दिख रहे हैं उससे सबकी परेशानी बढ गई है।

पता- एच आई जी-46 बी ब्लॉक,
पनकी, कानपुर-208020
मो0 6307435896

प्रेम-पत्र

➲ सुभाष चंद्र गांगुली

एक प्रेम-पत्र जिसे मैंने लिखा था आज से तीस वर्ष पहले, एक उद्विग्न, अधीर गहरी रात में बन्द कोठरी में, इतनी बन्द कि एक-एक छोटा-छोटा छेद भी कागज के टुकड़ों से बन्द कर दिया था, जिस प्रेम पत्र में एक-एक शब्द, शब्दकोश देख कर प्रयोग किया था, जिस प्रेम पत्र में अपनी काबिलीयत दिखाने के लिए ढेर सारे शेरों और कोटेशनों का प्रयोग किया था, जिस पत्र को मैं दुनिया का सबसे बेहतरीन प्रेम-पत्र बनाना चाहता था, जिस पत्र में अपने हृदय के एक्स-रे को उतारने का भरसक प्रयास किया था, जिस पत्र को अपने बिस्तर के नीचे छिपा रखा था रात भर और फिर सुबह नींद खुलने पर बनियाइन के भीतर कैद कर दिया था किसी अप्रत्याशित दुर्घटना के भय से और जिसे तस्करी सा दिमाग लगाकर एक मोटी किताब के जिल्द में रखकर पहुँचाया था अपनी प्रेमिका रंजना के पास उस प्रेम-पत्र का बड़ा सा हिस्सा आ पहुँचा मेरे घर खुल्लम-खुल्ला मूँगफली का पैकेट बनकर ।

सारी मूंगफलियाँ खा ली गई हैं, छिलके बिखरे पड़े हैं, मेरी बेटी कमरे से निकल चुकी है, पत्नी अभी भी छिलकों को हटाकर दाना बीनकर मुँह में डाल रही है और उँगली चाटकर मिर्च-मसालेदार नमक का जायका ले रही है। इधर मेरा पसीना छूटा जा रहा है क्योंकि पत्नी ने पूरे पैकेट को बड़े सुनियोजित ढंग से फाड़ लिया है और उस पर इस तरह निगाहें गड़ायी हुई है जैसे कि कोई जासूसी किताब पढ़ रही हो ।

कुछ लाइनें साफ हैं, पूरी की पूरी पढ़ी जा सकती हैं, कुछ आधी-अधूरी कहीं अंडरलाइन किया हुआ शब्द चमचमा रहा है और कहीं अधूरा शब्द संकेत दे रहा है। वह अपनी उँगली किसी शब्द पर टिकाती फिर मन ही मन बुदबुदाती, स्मरण करने की भंगिमा में आँखों की पलकें मूँदती - खोलती, फिर आगे बढ़ती, दूसरे शब्द पर उसका चेहरा तमतमा उठता है, वह गंभीर हो जाती, भावुक भंगिमा में गर्दन तिरछी करती। यह सिलसिला जारी है, दस मिनट से अधिक समय बीत चुका है। मैं व्याकुल हूँ। मैं सकते में हूँ। चोर की दाढ़ी में तिनका। मैंने तो अपनी राइटिंग पहचान ली है। मैं मन ही मन कहानियाँ गढ़ने के फेर में हूँ, कुछ नहीं सूझ रहा है ।

अब वह मुझे इस कदर घूरने लगी है मानो उसने मेरी चोरी रंगे हाथ पकड़ ली हो। मेरा कलेजा धक-धक कर रहा है, गला सूख रहा है, होंठ फड़फड़ाने लगे हैं, माथे पर हल्का तापमान महसूस कर रहा हूँ।

अभी तक कहानी नहीं बुन पाया हूँ जिसे सुनाकर अपनी जान बचा सकूँ। पैरों के अँगूठे ठण्डे होने लगे हैं, पेट के भीतर अँतड़ी सिकुड़ रही है, इतनी अकुलाहट, इतनी व्यग्रता कि मैं स्वयं को संभाल नहीं पा रहा हूँ।

अरे! अब तो वह मुझे एकटक निहार रही है, देखने का भाव भी अद्‌भुत है, कभी करुणा, सहानुभूति, कभी जिज्ञासा, कभी आक्रोश, कभी हैरानी, कभी हताशा और कभी इतना प्यार मानो वह आगोश में लेना चाहती हो, कुछ भी वह स्वेच्छा से नहीं कर रही है, सब कुछ सहज-सरल स्वाभाविक ढंग से दृष्टिगोचर है। नायिकाओं को इन्हीं सब भावों को उकेरने के लिए ट्रेनिंग लेनी पड़ती है मगर मेरी श्रीमती जी बिना ट्रेनिंग के ही इस वक्त गजब की नायिका है... अब जब उसके भाव प्रेम के हैं तो क्या मैं अपनी बात उससे कह दूँ? मगर क्यों ? खुद क्यों आगे बढ़ूँ? उसने पूछा तो नहीं... संभव है कि वह मेरे बारे में कुछ भी नहीं सोच रही है, यूँ ही मजा ले रही है... किन्तु वह तो गंभीर और भावुक हो उठी है, कहीं ऐसा तो नहीं कि उसे अपना प्रेम प्रसंग याद आ गया है... अरे बाबा! तब तो गड़बड़ नहीं, उसने शादी से पहले ऐसा-वैसा काम नहीं किया होगा। फिर भी मुझे अनजान बन कर पूछ लेना चाहिए। नहीं, ख़ामख़ाह आ बैल मुझे मार। इससे अच्छा भोलेबाबा बने रहो, देखो आगे-आगे होता है क्या।

अभी भी वह कागज को देख रही है और थोड़ी-थोड़ी देर में मुझे देख रही है, उसकी दृष्टि शिकारी बिल्ली जैसी है। कदाचित मैं उसकी नजरों से नजरें मिलाता हूँ तो वह अपनी नजरें कागज पर गड़ा लेती है। उफ ! अजब मुसीबत में फँस गया हूँ। बहुत अद्‌भुत होते है, जीवन के कुछ क्षण, कठिन जटिल, भयानक दर्दनाक व अझेल एक-एक पल, एक-एक वर्ष जैसा ! मेरे मस्तिक में कोई हथौड़ा चला रहा है, नसें फड़फड़ा रही हैं, हथेलियाँ ठंडी हो चुकी हैं, मैं अपनी सुधबुध खो रहा हूँ, पता नहीं कैसा कष्ट है। लगता है थोड़ी ही देर में ब्रेन हैमरेज हो जाएगा या दिल का दौरा पड़ जाएगा।

उम्र तो चढ़ ही चुकी है, असर भी दिखा चुकी है दो-दो बार, यह बात दीगर है कि बालों में डाई रहने से कोई सही उम्र भाँप नहीं पाता उल्टा लोग यंग समझ बैठते हैं पर मैं खुद को कैसे धोखा दूँ! मैं खुद को यंग महसूस करना चाहता हूँ मगर नहीं कर पा रहा हूँ, मेरा पूरा शरीर, पूरा वजूद फिलहाल मेरे वश में नहीं है। निष्कृति पाने का एक ही उपाय है, खिसको यहाँ से, मगर कहाँ ? कब तक ?... जहाज का पंछी यहीं लौटना पड़ेगा।

अब मैं अपनी जगह से उठ चुका हूँ, खिड़की के पास रखी कुर्सी पर बैठ गया हूँ, बाहरी दुनिया देख रहा हूँ मगर मेरा मन कहाँ मानता ? कभी कनखियों से, कभी सीधे उसे ही देखता हूँ। मैं बेचैन हूँ फिर भी तनिक बेहतर महसूस कर रहा हूँ... खिड़की से देख रहा हूँ दूर उस पार्क से जलाशय के पास पलाश वृक्ष की ओट में दो प्रेमी प्रेमालाप में लीन हैं। अक्सर मैं इस दृश्य को देखता हूँ।

जाने क्यों वे मुझे अभिभूत करते हैं। बड़ी ऊर्जा भर आती है मेरे तन-मन में। वे दोनों बेखबर हैं मेरी गुप्तचरी से उनका बेखबर रहना मेरे लिए हितकर है। मेरी पत्नी को इस सम्बन्ध में कुछ भी मालूम नहीं है, मैं कहना भी नहीं चाहता हूँ। कहने से मेरे बारे में उसकी धारणा खराब हो जाएगी, मेरे प्रति उसकी श्रद्धा कम हो जायेगी संभव है कि वह यह सोच ले कि मेरा मन भरा नहीं उसके प्यार से जिस वजह से मैं पराये प्रेम से

अपना दिल बहलाता हूँ। कई बार सोचा था उस दृश्य को उसे दिखाऊँ मगर अब मेरे अतीत का टुकड़ा उसके हाथ लग जाने से कहने का प्रश्न ही नहीं उठता।

अब उसने कागज से ध्यान हटा लिया है, ऊन का गोला अपने घुटनों में लपेट रही है, स्वेटर बुनने की तैयारी चल रही है। इस बीच बेटी ने चाय का प्याला धर दिया है। मैं चाय सुड़कने लगा हूँ, मेरी आँखों में पार्क का दृश्य समाया हुआ है मगर मेरा ध्यान उसी कागज पर बल्कि मेरी पत्नी की ओर है... ऊन का गोला फर्श पर रख कर पत्नी उठ रही है, बाथरूम के भीतर घुस गई, दरवाजा बन्द हो गया... मेरी इच्छा हो रही है कि मैं उस कागज पर झपट पड़ूँ, उठा लूँ, उसे चिन्दी-चिन्दी कर खिड़की से फेंक दूँ या जला कर राख कर दूँ... मगर उससे उसका संदेह पुख़्ता हो जाएगा... बेवजह मैं क्यों परेशान हूँ? किस बात का डर है मुझे ? तीन बच्चों की माँ, पूरी तरह मेरे ऊपर आश्रित है, जायेगी कहाँ ?... कहीं आत्महत्या कर ले तो ?

आत्महत्या ! इतनी सी बात पर ! बात इतनी सी मेरे लिए हो सकती है, उसके लिए बहुत बड़ी बात है। उसका पति झूठा, मक्कार, पति ने दगा दिया है उसे अब तक प्रेम का नाटक रचा है, अब तक जो कुछ उसने कहा है वही सब उसने कहा होगा रंजना से यह बड़ी बात नहीं है तो और क्या? आत्महत्या करने के लिए यह कारण बहुत बड़ा कारण हो सकता है। किसी स्त्री के लिए। आवेग और आवेश में औरत क्या कुछ नहीं कर बैठती ? स्वयं नारद औरत के चरित्र को नहीं समझ सके थे... हाँ, एक बात कर सकता हूँ, उस कागज को उठा कर मैं देख लूँ उसमें क्या लिखा है। प्रेम पत्र मैंने कई दिए थे, सभी खतरनाक नहीं थे, कुछ तो सामान्य पत्र जैसे थे, अगर सामान्य पत्र हो और एकाध शेर व कोटेशन वह भी अधूरा हो तो मामला उतना संगीन नहीं होगा। एक नेक इंसान की तरह उससे बस इतना कह दूँगा कि रंजना मेरी दोस्त थी, मेरे साथ पढ़ती थी, नोट्स व किताबों का आदान-प्रदान होता रहा, फिर कुछ-कुछ होने लगा था पर हुआ नहीं था। आखिर वह मेरी धर्मपत्नी है।

सात फेरे लगाकर सैकड़ों कसमें खाकर, अग्नि देवता को साक्ष्य रखकर, सारे देवताओं की सौगन्ध खाकर, सैकड़ों लोगों को गवाह बनाकर उस निरीह, अबला को मैंने अपनाया था। पहले मैं उसका पति था फिर धीरे-धीरे उसने तीज, शिव रात्रि, करवा चौथ समेत तमाम त्योहारों में मेरे लिए निर्जल व्रत रख, पूजा-पाठ कर मुझे अपना परमेश्वर बना लिया, अब परमेश्वर में दोष पाकर उसे जो सदमा पहुँचेगा उससे उसके पैरों के नीचे जमीन खिसकने लगेगी और वह कुछ भी करने के लिए उद्यत हो जायेगी। उद्वेग और उत्तेजना उसे संचालित करेंगे। सचमुच उसे अपना अतीत सताने लगे? अगर सचमुच उसे महबूब की याद आ गयी हो और वह अपना अतीत मेरे सामने रख दे ?... नहीं, नहीं, मुझसे सहा नहीं जायेगा... हम दोनों बूढ़े हो रहे हैं, हमसे से कोई अगर दम तोड़ दे ? अगर किसी को डिप्रेशन हो जाये तो ?... खामोश रहना बेहतर है। स्थिति पर नजर रखूँ, ठण्डे दिमाग से काम लूँ।

उधर आसमान में गोधूली की छटा बिखर गई है वृक्ष से दुगनी लम्बी छायाएँ दिखने लगी हैं... अरे! पलाश वृक्ष की ओट में अभी भी वे दोनों मौजूद हैं ? दोनों के सिर एक दूसरे को स्पर्श किए हुए हैं, दूर से अर्द्ध-गोलाकार वस्तु प्रतीत हो रही है किन्तु सिर आगे-पीछे होते रहने से बीच में जो गैप बन रहा है उससे उन दोनों की मौजूदगी का अहसास हो रहा है।

कितना मनोरम दृश्य! अद्‌भुत सुखानुभूति हो रही है, मेरा अतीत मेरे सामने है, मैं खुद को वहाँ मौजूद पा रहा हूँ, किसे नहीं भला लगता स्मृति में जीना ?... कभी रंजना भी बैठती रही उसी तरह किसी पार्क में वर्षों से मैं उसकी यादों में जी रहा हूँ।... खुद को उस पार्क में, पलाश वृक्ष के निकट रंजना के साथ बैठा महसूस करता हूँ। वर्षों से उसी पार्क में, उसी स्थल पर युवक-युवतियों को बैठा देखता आ रहा हूँ। कोई न कोई जोड़ा वहाँ बैठता रहा। जाने कितने जोड़े बैठे होंगे। कोई-कोई सदा के लिए एक दूजे से बँध गए होंगे, और किसी-किसी का हाल मेरा जैसा हो गया होगा... मगर रंजना ने मुझसे शादी क्यों नहीं की थीं? क्यों दगा किया था उसने? रंजना से न जवाब मिला था और न कभी मिल पायेगा... रंजना अब इस दुनिया में नहीं रही।

लगभग एक माह रंजना से मेरा संपर्क नहीं हो सका था, फिर जब मैंने उससे संपर्क करना चाहा तो पता चला वह शहर छोड़ चुकी है। वह किस शहर, किस गाँव में बिना किसी से कुछ कहे क्यों चली गयी कुछ भी पता नहीं चल सका था। मेरा मन कह रहा था रंजना के साथ चाहे जो मजबूरी रही हो वह मेरे बगैर नहीं जी पायेगी, वह आयेगी जरूर, भागकर आयेगी या फिर उसका खत आयेगा, वह मुझे धोखा नहीं दे सकती। वर्षों मैं डाक देखता रहा, वर्षों मेरी नींद टूटती, वर्षों मुझे उसकी आहट सुनाई देती। वर्षों की प्रतीक्षा के बाद मैंने हार मान ली, मैंने मान लिया कि उसने शादी कर ली होगी, फिर घरवालों के दबाव में भविष्य की सोच कर मैंने भी जीवन संगी ढूँढ़ ली... पत्नी को खुश रखने की कोई कसर नहीं छोड़ी।

यह खुशी कहीं रंजना के खत के कारण गम में तबदील न हो जाए यह सोचकर मैं रोजाना डाकघर जाने लगा था, रोजाना निराश लौटता, फिर भी मेरा मन कहता रंजना का खत आयेगा जरूर, वह मुझे भूल नहीं सकती, धोखा नहीं दे सकती। वह कम से कम अपनी सफाई, अपनी मजबूरी जरूर बतायेगी।

दो वर्ष पहले जब मैं मुंबई गया था तब अचनाक मेरी मुलाकात रंजना की सहेली सुमन से हुई थी। उसने कहा था रंजना के पति का किसी से नाजायज सम्बन्ध था जिसे तोड़ने में वह नाकामयाब रही। वह जब तक जीती रही, मर-मर कर जीती रही और अंततः पति के अत्याचार से तंग आकर उसने खुदकुशी कर ली थी।

सुमन ने कहा था कि रंजना को उसके पिता ने धमकी दी थी कि अगर वह मुझसे शादी कर लेती तो उसके पिता आत्महत्या कर लेंगे। रंजना डर गई थी। उसने पिता का कहना मान लिया था पूरा परिवार मुंबई जा बसा था। उसके बाद मैंने डाक देखना बन्द कर दिया था। मगर तभी से रंजना की यादें और अधिक सताने लगी हैं। वही बीस बाईस वर्ष की रंजना हमेशा मेरी आँखों के सामने मौजूद रहती है। शायद विछोह से मेरा प्यार और गहरा गया है। शायद सुमन ने मेरे मन में जमे क्रोध व घृणा को निकाल कर फेंक दिया था।

जब तक मैं अतीत को खँगालने में लगा हुआ था, मेरी पत्नी बाथरूम से निकल कर चाय खत्म कर चुकी थी। अब वह बाँये हाथ में ऊन का गोला और दाँये हाथ में चाय का प्याला और उस ऐतिहासिक प्रेम पत्र को लेकर उठ रही है, वह किचन के अन्दर गई, उसने प्याला धर दिया, गैस के चूल्हे की बगल में कागज को रखा, धीरे-धीरे वह कागज फरफरा रहा है, पता नहीं वह क्या सोचने लगी है... तुम मेरी अर्द्धांगिनी हो ! अब मैं तुम्हारा और सिर्फ तुम्हारा हूँ, उसे जला दो ना, चूल्हा पास ही है, फेंकना नहीं रखना भी नहीं, क्या पता

किसके हाथ लग जाए।... बेटी जवान हो गई है, कहीं उसके हाथ लगे और वह समझ जाए तो?... उफ! मुँह दिखाने लायक नहीं रह जाऊँगा... उसने चूल्हा जलाया, कागज हाथ में लिया... ओम शांति! ओम! अरे ! अरे! यह क्या ? हाथ आगे बढ़ाकर फिर खींच क्यों लिया?... उफ ! मेरी समस्या जस की तस शायद वह उसे जलाना नहीं चाहती। मेरे हाथ का लिखा जलाने में संकोच हो रहा होगा। अब वह ठहर कर कुछ सोचने लगी है... क्या सोच रही हो श्रीमती जी ? जलाने का मन नहीं हो रहा है तो उसके टुकड़े-टुकड़े कर दो, इतने टुकड़े कर दो कि उसका अस्तित्व मिट जाय, फिर हाथ बढ़ाकर कूड़ेदान में... क्या कीमत है आज उस कागज की? महज एक कागज का टुकड़ा । पेड़ से गिरी एक टहनी या सूखा पत्ता मेरी संवेदनाएँ, मेरी भावनाएँ मेरा तन-मन, मेरी आत्मा अब सब कुछ तुम्हारा है, सिर्फ़ तुम्हारा यह सच है कि रंजना मर चुकी है, यह भी सच है कि रंजना का भूत मेरे मस्तिष्क में सवार है, और मेरी मौत से ही रंजना पूर्णतया मरेगी। मगर क्या लेना देना है तुमको मेरे दिमाग से ? आखिर तुम्हारे दिमाग में किसी और की तस्वीर, किसी और की यादें हैं या नहीं मैंने जानने की कोशिश भी नहीं की। क्या फर्क पड़ता मेरे लिए अगर तुम्हारे दिमाग में भी कोई... हाँ मुझे कहना नहीं, कहने से गोलमाल होता है सोचने से नहीं।

''देखो किसने घण्टी बजायी ?''

'देखती हूँ' कहकर वह जा रही है, उसने फाटक खोला, वह खड़े-खड़े पड़ोसन से बातें कर रही है। पड़ोसन अन्दर नहीं आयेगी, ज्यादा देर रुकेगी भी नहीं, आज मैं जो हूँ घर पर पाँच मिनट बीत गए। वे दोनों खिलखिला रही हैं। उसके आने से पत्नी का तनाव कुछ कम हुआ है या फिर उसकी हँसी मैकेनिकल है मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

चेहरे से और आचरण से हमेशा किसी को समझ पाना संभव नहीं होता खासतौर पर महिला के मामले में, मेरा मन फिर कह रहा है कागज को उठा लूँ, मैं डगों को आगे बढ़ाता हूँ, पत्नी की आवाज सुनाई देती है। अच्छा दीदी आप चलिए में तैयार होकर आती हूँ... मैं डगों को पीछे खींचता हूँ तख़्त पर बैठ गया हूँ, मेज से अखबार उठा कर देखने लगा हूँ, मेरी निगाहें बार-बार घड़ी पर जा रही हैं, दस मिनट बीत गए... फाटक खुला है, पड़ोसन भीतर आती दिख रही है, मैं उसे देखता हूँ, नज़रें एक होते ही वह सकुचाती है, वह रुक गयी है।

-'अजी सुनती हो! पप्पू की अम्मा आयीं हैं, खड़ी हैं फाटक पर... आइए ना, अन्दर आइए।' मैंने कहा। 'ठीक है' वह वहीं खड़ी है। हल्की मुस्कान उसके चेहरे पर उमड़ती है, वह अपना पल्लू सँवारती है।

- 'आयी दीदी' आवाज लगाने के साथ-साथ मेरी पत्नी बाहर निकल आती है।

- अभी आती हूँ। चौबेजी के घर कथा है। कुछ चाहिए? चाय-साय?... चाहिए तो कह दीजिए, बेटी घर पर नहीं है।

- 'नहीं, नहीं, कुछ नहीं चाहिए, आराम से लौटना सुबह से घर बैठी हो। कुछ हड़बड़ा कर मैंने कहा अजीब सी मुस्कान बल्कि ख़ामोश भाव उसके चेहरे पर लहरा गये समझ गई है क्या?... क्या?... मैं मुस्कराता हूँ। मेरा मुँह मुझे भारी लगता है।

आँचल लहरा कर वह निकल रही है, कितनी प्यारी लग रही हो ! साड़ी पहनना, सजना-सँवारना, खुद को मेन्टेन रखना कोई तुमसे सीखे श्रीमती जी, सच ! आज रंजना रहती तो वह बूढ़ी लगती। उसकी सहेली सुमन उसी के बराबर है, एकदम बूढ़ी लग रही थी।

रंजना तो और भी केयरलेस थी। ख़ैर! आज वक्त नहीं है तारीफ करने का तुम सोचोगी मसका लगा रहा हूँ, पूरी ताकत से फाटक ढकेलता हूँ, सिटकिनी लगाने के बाद फिर से चेक कर लेता हूँ, कागज उठाता हूँ, खिड़की से देखता हूँ कहीं चौबे जी के घर से वह मुझे ताड़ तो नहीं रही... अब मैं कागज लेकर फर्श पर बैठ जाता हूँ।

अरे, मेरा चश्मा ? कमबख़्त अभी ही चश्मे को इधर-उधर होना था। धत् तेरे बुढ़ापे की। माधुरी दीक्षित को देखना हो तो चश्मा, परायी औरत को देखना हो तो चश्मा, बस पत्नी को देखने के लिए चश्मे की जरूरत नहीं। जब-जब पूछेगी देखिए ठीक है? तब-तब तुरन्त कहना पड़ेगा 'सुन्दर ! अति सुन्दर! अगर कहीं गलती से कह दिया' ठहरो जरा चश्मा पहन लूँ। तो गये काम से, तपाक से कहेगी मुझे देखने के लिए चश्मा चाहिए, परायी औरतों को तो खूब देख लेते हैं, तब चश्मे की जरूरत नहीं होती' चलो, चश्मा हाथ लगा।

मैं कागज यानी प्रेम-पत्र पढ़ने लगा हूँ। जी हाँ, यह मेरा ही लिखा है। रंजना को लिखा था। आज भी मेरी हैंड राइटिंग वैसी की वैसी है, हूबहू वैसी, अलबत्ता भाषा में बदलाव आ गया है। एक-एक लाइन मैं कई-कई बार पढ़ता हूँ, जाने कहाँ खो जाता हूँ, फिर सचेत हो जाता हूँ। आधे-अधूरे पत्र को कई बार पढ़ता हूँ ।

रंजना का चेहरा तैर रहा है, एक-एक दिन तैर रहा है... जाने क्यों मेरा दिल यकायक धड़कने लगा है। ब्लड प्रेशर का मरीज हूँ, मेरा सिर भन्नाने लगा है, साँसें तेज हो गई हैं। चारों तरफ 'रंजना' 'रंजना' गूंज रहा है। रंजना मरी नहीं होगी, रंजना मर नहीं सकती, सुमन ने झूठ कहा होगा, रंजना मुझे मिलेगी जरूर मिलेगी... अभी इसी वक्त वह दस्तक दे सकती है। वर्षों बाद भी उसे मैं पहचान लूँगा। भले ही सुमन को पहचान न सका था, रंजना को पहचानने में कोई गलती नहीं होगी। रंजना की आँखों में जो खूबी थी, उसके चेहरे पर जो नूर था, मुझे देखने का उसका जो अंदाज था वह किसी और को मिल ही नहीं सकता... नहीं मैं नहीं मान सकता कि रंजना अब इस दुनियाँ में नहीं है, सुमन ने मुझसे झूठ ही कहा था। रंजना जी रही है, मेरे साथ-साथ जी रही है। मरेगी, मेरे साथ मरेगी।

पत्नी को जो कुछ पूछना है पूछे मैं झूठ नहीं बोलूँगा, सच्चाई को छिपाना नामुमकिन है। रंजना हकीकत है, परीकथा नहीं। मैं उस प्रेम-पत्र को वहीं चूल्हे के बगल में रख देता हूँ... घण्टी बजती है, अपने चेहरे पर आये परिवर्तन को स्वाभाविक करता हूँ, दो गिलास पानी गटक कर धुकधुकी कम करता हूँ, तौलिये से मुँह और माथा पोंछ लेता हूँ, फाटक खोल देता हूँ। मुस्कराकर पत्नी को रिसीव करता हूँ। चौबेजी के घर कथा के दौरान हुई पंचायत की मोटी-मोटी बातें वह सुनाने लगती है। थोड़ी देर में बेटी घर लौटती है। खाना पकता है, टी0वी0 चलती है, हम सब खाना खा लेते हैं, खाते-खाते इधर-उधर की बातें होती हैं, हँसी-ठिठोली होती है माँ-बेटी फिर से टी0वी0 में मशगूल हो जाती हैं... काफी समय बीत जाता है, सब कुछ नार्मल है अब, मैं निश्चित हूँ, दवाइयाँ लेकर बिस्तर पर निढाल हो जाता हूँ।

बेटी अपने कमरे में सोने चली गई पत्नी सोने की तैयारी कर रही है, उसने मैक्सी पहन ली, दरवाजा बन्द कर दिया, स्विच बोर्ड के पास खड़ी है, उसने फिर दरवाजा खोला, किचन के अन्दर गई... डिब्बा ? डिब्बा क्यो खोला... शायद इलायची खायेगी। लौटी। फिर दरवाजा बन्द किया। अभी भी लाइट जल रही है।

मैंने आँखें मूँद रखी हैं। कागज की पुड़िया खोलने की सरसराहट... वह मेरे करीब है, अब वह बहुत करीब आ गयी है, उसकी साँसों की ऊष्मा महसूस कर रहा हूँ... उसने फुसफुसाया 'देखिए!... देखिए इधर! यह आपके हाथ का लिखा लग रहा है... है ना ? 'होगा... सोने दो... सो जाओं, मैंने नींद की गोली ले ली है नींद आ रही है। मैंने पलकें खोलकर एक झलक उसे देखा। 'देखिए ना! मेरी ओर... एक नजरा।'

'तुम्हारी ओर...?' मैं चौका। मैं शब्द ढूँढ़ रहा हूँ।

'मेरा मतलब इस कागज को गौर से देखिए, आपका ही लिखा हुआ है... है ना?'

'हाँ है... यह मेरे ही हाथ का है... उसका नाम था रंजना।' उसकी आँखों की गहराई में डूब कर मैंने कहा।

वह मुस्कराकर प्रेम-पत्र को फाड़ती है, चिन्दी-चिन्दी करती है, टुकड़ों को खिड़की से बाहर फेंक देती है, लाईट ऑफ करती है... वह अपना बायाँ हाथ मेरे सीने पर रख कर सुकून से सो जाती है।

एस-6, पंचपुष्प अपार्टमेन्ट,
417 अशोक नगर, प्रयागराज 211001
मो0 9415324238

चिर-समाधि में अचिर-प्रकृति जब,
तुम अनादि तब केवल तमः
अपने ही सुख-इंगित से फिर
हुए तरंगित सृष्टि विषम।
तत्वों में त्वक् बदल-बदलकर
वारि, बाष्प ज्यों, फिर बादल,
विद्युत की माया उर में, तुम
उतरे जग में मिथ्या-फल।
वसन वासनाओं के रँग-रँग
पहन सृष्टि ने ललचाया,
बाँध बाहुओं में रूपों ने
समझा अब पाया - पाया
- सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

अपराजिता

○ रजनी गुप्त

चारों तरफ फैले गोबर और गीली मिट्टी से सनी कच्ची सड़क पर अपने पैर बचाती और चारों तरफ से आती दुर्गंध से अपनी नाक मूंदती आरती ने पहला कदम ससुराल में रखा तो सबसे पहले खयाल यही आया-तो इतने व्रत उपवास करने, नियम से पूजा पाठ करने के बावजूद उसे इस देहात की ऐसी कच्ची मड़ैया में ब्याहा है बापू ने, जहाँ वह कितने ही जतन से क्यों न चले, जमीन पर पांव धरते ही मिट्टी और कचड़े से बचने की कोशिश के बावजूद उसके तलुवों में कीचड़ चिपक ही जाता। ऐसी भी क्या जल्दी थी उसके हाथ पीले करने की। कितनी बार दबी जुबान में मना करती रही, घंटों रोती रही मगर बापू नहीं पिघला तो कतई नहीं पिघला। सच्ची में, बिना अम्मा के जीना कितना दुश्वार हो गया था। माँ के गुजरने के बाद तो उस घर में आरती का वजूद ही शून्य होता गया। रह-रहकर बचपन में गुजर गई माँ की धुंधली तस्वीर जेहन में कौंधती रही- गोरा उजला रंग, उठा हुआ माथा, चौड़े माथे पर दमकती लाल बिंदी और सिर तक ढकी साड़ी। कितने विधिविधान से उस दिन माँ की आराधना करते वक्त उन्हें ऐसा दर्द उठा कि वे आरती तक ठीक से नहीं कर पाई और प्रसूतिगृह जाना पड़ा, सो नवशिशु कन्या का नामकरण हो गया-आरती ।

शुरू में आरती को पढ़ने का मन नहीं करता मगर आसपास काम करने वाली अम्मा की बेटी लीना को क्लास में फर्स्ट आते देखा तो उसके अंदर भी पढ़ाई की लौ जगी तो ऐसी कि बिना किसी ट्युशन के उसने 10वीं की परीक्षा पास कर ली मगर चाहकर भी आगे नहीं पढ़ पाई। यही वो मनहूस समय था, जब बापू ने उसकी जिंदगी की डोर मामूली से परचून की दुकान चलाने वाले से ऐसे धुर देहात में जहाँ आँख खुलते ही गायों के रंभाने और कुत्तों के भौंकने के सिवाए और कुछ सुनाई ही नहीं देता। खूंटे से बंधी मूक गाय की तरह जबरन बांध दिया गया उसे, जो अपना सिर उठाकर बाहर की तरफ देखते ही रंभाना शुरू कर देती है मगर कर कुछ नहीं पाती। ठीक इसी तरह उसके सारे सपने बांधकर उसके गले से लटका दिए। न तो वह घर के अंदर ठीक से सांस ले पाती, न बाहर निकलने पर सो आजादी का स्वाद जग ही नहीं पाया। इसके पहले कि वह ससुराल में सिर पर पल्लू डालकर चलना सीख पाती कि उसके पेट में बच्चे की कुनमुनाहट का एहसास होने लगा। जीने की विवशता ढोते अपने दर्द को समेटते एक दिन ऐसा आया, जब वह अपने बच्चे का एडमीशन

करवाने गाँव के विद्यालय गई। उसकी भोली सूरत और अंग्रेजी का ज्ञान देखकर अनायास टीचर ने उसकी शिक्षा पूछनी चाही तो सालों से दबा आक्रोश उफनाने लगा। आगे पढ़ना चाहो तो फार्म भरवा देंगे, सुनते ही उसके सोए सपने अधसोई तितली की तरह पंख फड़फड़ाने लगे।

'आपने तो मेरे मन की बात छीन ली। बहुत कुछ पढ़कर कुछ बनना चाहती थी मगर बाप ने बांध दिया इससे, जो हमारी बात सुनना तक नहीं चाहता।' कहते हुए उसकी आँखें भर आईं।' तुम जब तक चाहो, पढ़ाई कर सकती हो। बीए, एमए तक हो जाएगा। मैंने खुद इसी गाँव में रहकर पढ़ाई पूरी की है। कुछ को साक्षर करवाया तो कुछ को रोजगार दिलवाया। संगीता को देखो, शादी के बाद कितनी ऊँची पढ़ाई पूरी की है। सुनना चाहोगी, आजकल वह कहाँ हैं ?' उसकी तरफ एकटक आँखें टिकाए ऊँची आवाज में जताती रही- 'सुनो, चप्पल बनाने की फैक्टरी खोली है, उसके साथ दर्जनों महिलाएँ काम कर रहीं हैं ?'

'ऐं, मगर कैसे?' मुँह बाए आरती उजबक की तरह उन्हें ऐसे देखने लगी जैसे कोई निरक्षर अक्षरों से सजी किताब में से इबारतों को ध्यान से देखकर पढ़ने की कोशिश करता रहे, भले ही उसकी कुछ समझ में न आए...

'सुनो, पति के कपड़े की छोटी सी दुकान में घर ठीक से नहीं चलता था, सो टीचर्स ट्रेनिंग करके 6 महीने के लिए बाहर निकल गयी, अपने छ महीने के बच्चे को माँ के पास छोड़कर। फिर पीछे मुड़कर देखने का सवाल ही नहीं था। इरादा पक्का हो तो मुश्किलें अपने आप भागने लगतीं।'

'पढ़ाई के लिए पैसे कहाँ से आएँगे ?' वह कुछ सोचते हुए यहाँ-वहाँ ध्यान से देखने लगी। तब तक छुट्टी की घंटी बज गई और बच्चों के शोरगुल में उसकी बात दबती गई। अपने बच्चे को लेकर आरती बाहर खुले मैदान की तरफ निकली और बगल में चल रही लड़की को मोबाइल पर बात करते हुए ध्यान से देखती सुनती रही। बात खत्म होते ही लड़की ने पूछ लिया- 'ऐसे ताज्जुब से क्या देख रही हो ? हमारे साथ काम करोगी तो खुद अपने पैसों से मोबाइल खरीद सकती हो।' उसने आमंत्रित करती नजरों से घूरकर देखा तो आरती ने सकुचाते हुए अपनी बात रखी-

पर मैं ज्यादा पढ़ी लिखी तो हूँ नही, 10 पास हूँ, बस।'

'मैं एक स्वयं सहायता समूह चलाती हूँ जिसमें सभी महिलाएँ काम करती हैं। अपूर्वा लघु उद्योग नाम का बोर्ड टंगा देखा होगा कहीं ?'

'हाँ, वहाँ तो औरतें फल सब्जियाँ उगाने बेचने का काम करती हैं, हमें वहीं काम करना है ?'

'अरे नहीं, वहाँ काम करने वाली महिलाओं की निगरानी भर करना है। तीन चार गाँवों की पैदल यात्रा या साइकिल चलाकर जा सकती हो। तनखा फिलहाल तो तीन हजार। सोचकर बताना। ये रहा मेरा नंबर, कभी जरूरत हो तो कहीं से भी फोन कर लेना।' झटपट अपनी बात कहते हुए वह तेज-तेज कदमों से निकल गई।

आरती ने मन ही मन फैसला लिया, दुपहर 11 से 3 बजे तक कोई खास काम तो होता नहीं। कुछ न कुछ तो करना पड़ेगा। कम से कम पढ़ाई के लिए पैसा निकल आएगा। सोचते हुए घर लौटने में देर हो गयी, जहाँ उसकी सास ने उसे तरेरते हुए देखा-खाना खा लिया क्या ?'

अम्मा, अब हम भी काम करेंगे, पढ़कर नौकरी करेंगे।'

'अरे, अचानक कहाँ से लाटरी निकल गई तेरी। उतनी बड़ी पढ़ाई चाहिए नौकरी के वास्ते।

'अरे अम्मा, कैसी बातें करती हो? हमने फर्स्ट डिवीजन में 10वीं किया था सो आगे की भी करेंगे। दुपहर में हमारे खाने की बाट मत जोहना कल से। हाँ गले से निकली फैसलाकुन आवाज जिसे सुनकर अम्मा माथे पर हाथ रखकर बैठ गई। मुंडेर से उतरती हुई धूप आँगन को लांघती हुई चूल्हे पर चमकने लगी।

जब से आरती सेंटर से लौटी है, एक अजीब सी चमक उसके चेहरे पर उतर आई है, एक अनजानी सी धुन सवार रहती, कुछ अलग करने के जज्बे ने उसकी चाल में फुर्ती भर दी। उस दिन प्रोजेक्ट हैड राधिका को लैपटाप पर काम करते देखकर आश्चर्य से भर गई, जब उन्होंने बोलना शुरू किया- 'सुनो आरती, मेरे पति गोपीगंज में छोटी सी दुकान चलाते थे पर घर पर सब मिलाकर 12 जन थे सो गुजारा मुश्किल से चलता। फिर एक दिन कुछ ऐसा घटा, जब मेरी दो साल की बेटी ने पीजा खाने की जिद ठान ली और हमारे पास इतने पैसे नहीं थे। बस तभी ठान लिया, जो भी, जैसा भी, जहाँ भी काम मिलेगा, करेंगे, इससे हमारी इज्जत घटेगी नहीं, बल्कि बढेगी, फिर जिसको जो बकबास करनी हो, करता रहे। पहले बैंक मित्र के रूप में जगह-जगह खाता खुलवाने के लिए घर-घर जाकर औरतों को लेन-देन की तरकीबें समझाईं, फिर देखते-देखते इतने सारे बचत खाते खुलते गए। यकीन करोगी कि महज तीन महीने में 50 लाख से ऊपर की धनराशि जमा हो गई। फिर अपना खुद का काम करने की बात दिमाग में आई। बोलते हुए थोड़ी देर रुकी लेकिन उसके बाद फिर से बोलने लगी-'आरती, अगर सचमुच तुम कुछ करना चाहती हो तो अपने दम खम पर अपने बूते करने का हौसला जुटाओ। खुद पर भरोसा करो। पीठ-पीछे कोई क्या मुँह चला रहा है, जाने दो उसे, उनकी फालतू बातों पर ध्यान दोगी तो काम में मन नहीं लगेगा। पैसा तो आएगा-जाएगा मगर सबसे बड़ी बात है, अपनी सोच को बड़ा करना। हमने अपनी सहेली रीना के साथ कुछ करने का सोचा, जब कि हमारे पास रीना जैसी बड़ी जमापूँजी नहीं थी मगर भरोसा था अपने ऊपर सो रीना ने आगे बढ़कर सोयाबीन से पनीर बनाने की यूनिट लगाने की बात की। सुनते ही सब लोग पहले तो खी-खी करके हँसने लगे लेकिन फिर हमने ठान लिया। जिस बात पर लोग जितना कम भरोसा करें, उस अविश्वसनीय को विश्वसनीय बनाने के लिए जुट गए हम। जहाँ चाह, वहीं राह सो ब्लाक मुख्यालय की नीता के साथ बैंक जाकर एक लाख का लोन उठाया। शुरू में घर वाले खूब ताने सुनाकर डराया करते- 'ये औरत घर को गिरवी रखकर हमें एक दिन सड़क पर खड़ा कर देगी मगर हमने उनकी बकवासवाजी नहीं सुनी और मैदान में डटे रहे। मशीन खरीदने के लिए 50 से 60 हजार लगने थे। फिर इसी अपराजिता संस्था की महिलाओं ने मिलकर हमें दस-दस हजार- देने की पेशकश की तो हमने तय किया कि आगे जिसको जरूरत होगी, हम सब बारी-बारी से उसकी मदद करेंगे। उसी पैसे से हमने काम शुरू कर दिया। आज हरेक की आमदनी 12 से 15 हजार महीने है। बगल वाले गाँव में जाओगी तो पता चलेगा कि वहाँ भी ऐसे ही 20 महिलाओं ने पुष्टाहार प्लांट लगाया है..

'हाँ, वहाँ गई थी मैं, महिला लघु उद्योग समूह की बड़ी ऊँची बिल्डिंग है वह तो, दूर से ही नजर आती

है... आरती ने जानकारी दी।

आज की डेट में यहाँ की सबसे बड़ी फैक्टरी है वह, जहाँ-जहाँ दर्जनों लोग काम करते हैं। दिन रात की पाली में 20-20 औरतें 8 घंटे लगातार काम करती है जिनकी तनखा भी 15 हजार से ऊपर होगी।' लैपटाप पर देखते हुए वे बोलते-बोलते अचानक चुप हो गईं।

'गुलाल, अगरबत्ती, आँवले के लड्डू, मुरब्बा, अचार, पापड़, देशी घी से बनी मिठाइयाँ, गुड़ की मिठाई, घरेलू मसाले, बड़ियां और घरेलू चीजें जिन्हें हाईवे के पास वाले दुकानदार खरीदकर ले जाते। एक रेस्टोरेंट वाला तो नियमित रूप से हमारे ही सामान खरीदकर ग्राहकों को बेचता है। वहाँ से गुजरती बस, आटो, कार वाला, सब वहाँ उतरकर चाय पीकर, बाद में हमारे सामान खरीदकर अपने घर ले जाते। हमारे पास दूर-दूर से आर्डर भी आने लगे।'

अभी वे सब बातें ही कर रहीं थी कि इसी बीच एक बड़ी सफेद कार रुकी जिसमें से लंबी, पतली और खूबसूरत स्त्री को अंदर आते देखा।

'अरे नेहा मैम, उन्हें देखते ही सब लोग उठ खड़े हुए'

'राधिका, एक खुशखबरी देना था सो अचानक आने का मन बन गया। पुष्टाहार लघु उद्योग केंद्र अब आस-पास के छः गांवों में खुलेगा, बच्चों की बेहतर सेहत के लिए सरकार ने नए प्लांट लगाने की मंजूरी दे दी है यानी तुम सब जिसको चाहो, अपने ग्रुप में जोड़ सकती हो। अब इस नई मशीन में उत्पादन शुरू होगा जिसकी क्षमता बढ़ेगी। तुम सबकी मेहनत का नतीजा है ये, बोलते हुए वे लैपटाप पर तमाम चलती-फिरती तस्वीरें दिखाने लगीं। बाल पुष्टाहार फैक्टरी की तमाम विशेषताएं बताती नेहा मैडम स्वयं सहायता समूह में काम करतीं औरतों की हँसती-बोलती-मुस्कराती तस्वीरें दिखा रहीं थीं। बरसैंया गाँव में चप्पलें तैयार करती स्वयं सहायता समूह की औरतों के बीच अनायास आरती को बचपन की सहेली का चेहरा नजर आया, अरे, ये तो जाना-पहचाना चेहरा लग रहा है। कौन है ये, अगले ही पल स्क्रीन पर पुष्टाहार पैकिंग करती महिलाओं का नया जत्था नजर आया जिसमें अपराजिता समूह की अध्यक्ष का नाम उभरकर चमकने लगा, सुश्री लीना, एमडी.....

'अरे, ये तो हमारे गाँव की लीना पासवान है, यहाँ काम करती है।' प्रकट रूप से इतना बोलकर विगत के पन्ने पलटने लगी। इसके पति ने शादी के बाद उसे काली-कलूटी कहकर इतना प्रताडित किया कि मजबूरन उसे घर छोड़कर मायके आना पड़ा। बात करते-करते अक्सर उसकी आँखें भर आतीं। भरे गले से कहती- हम जैसी तलाकशुदा औरतों का कोई कल नहीं था, आज पर भी हमारा भरोसा नहीं रहा और आने वाले कल पर बीते कल की काली छायाएं कुछ देखने नहीं दे रहीं। हम जीना नहीं चाहते आरती, कहते हुए रो पड़ी। हमें तो गाय भैंस समझकर ब्याह दिया वहाँ बड़े शहर के नौकरीशुदा से, मगर बड़े शहर आकर पता चला कि हमारी जिंदगी का रंग तो काले तवे जैसा निकला, जितना गर्म करो, रहेगा काले का काला । हमारी सूरत देखकर वह जाने क्यों इतने गुस्से में भन्नाने लगता, वह बात-बेबात पर मुझे बुरी तरह अपमानित करने लगता हट जाओ यहाँ से, मेरी आँखों के सामने से, ब्लैक कैट. .... बाद में पता चला उसके बुरे सुलूक की वजह, वह मुझे अपने पास से हटाना चाहता था। क्योंकि वह तो किसी और के साथ खुल्लमखुल्ला रहता था।

आज वही लीना रातों रात तरक्की करके कहाँ से कहाँ पहुंच गई है कि उसने फिर पीछे मुड़कर नहीं

देखा।

'आरती, ओ आरती, कहां खो गई ?'

मैडम, ये जो लीना मैडम है न, हमारे साथ गाँव के स्कूल में पढ़ती थी। हम इनसे जरूर मिलना चाहेंगे वह दबी जबान से बोली। वैसे वह ज्यादा बोलना चाहती थी मगर चुप बनी रही ।

'जरूर मिलवाएंगे। वैसे तू खुद को कभी कमजोर न समझ। आरती, तू तो सच्ची में अपराजिता है जिसे कोई नहीं हरा सकता।'

साफ सुथरे सच्चे शब्द थे जो उसके अंदर बैठ गए। अनायास खुशी के आँसू झिलमिलाने लगे जिससे आसपास बैठे लोगों के चेहरे धुँधले नजर आने लगे। मन के अंदर विचारों का अंधड़ तेजी से सब कुछ उखाड़े ले जा रहा था, एक स्त्री के मान मर्दन के वे काले पन्ने इस अचानक आई आँधी में अनजान दिशा की तरफ उड़ने लगे जिनसे अपने को बचाती आरती ने अपनी माँ के नाम से नई संस्था अन्नपूर्णा सदन, को शुरू करने का संकल्प लिया। का। हां, यही होगा नए खुलने वाले सेंटर का नाम जिसे नये सिरे से गढ़ूंगी मैं ताकि आसपास के बच्चों की सेहत के वास्ते कुछ किया जा सके। अन्नपूर्णा सदन के सुनहरे सपने का अक्स उसकी आँखों में अनूठी चमक बिखेरने लगा जिसके आगे सूरज की कौंध भी बेअसर हो जाए ।

5/259 विपुलखण्ड,
गोमती नगर, लखनऊ- 226010
मो0 945229543

समष्टि की इकाई होने के कारण साहित्यकार के जीवनदर्शन और आस्था का निर्माण भी समाज विशेष और युग विशेष में होता है। पर उसका सृजन-कर्म उसकी आस्था के साथ जैसा अभिन्न और प्रगाढ़ सम्बन्ध रखता है, वैसा अन्य व्यक्तियों और उनके व्यवसायों में नहीं रहता।

एक लौहकार अच्छी तलवार गढ़कर भी मारने में आस्था नहीं रखता। एक व्यापारी को, सफलता के लिए सत्य में आस्था की आवश्यकता नहीं होती।

- महादेवी वर्मा

मृगमरीचिका

➲ सुधा जुगरान

'वह' रवीना को रोज मॉर्निंग वॉक के समय दिखती। दिखती क्या... उसे देखने की आदत ही पड़ गई थी। उसका दिखना, रवीना की मॉर्निंग वॉक का एक हिस्सा बन गया था। वह जैसे ही मुख्य सड़क से दाई तरफ छोटी सड़क पर मुड़ती, उसकी आँखें उसके मस्तिष्क को संदेश भेजने लगतीं। मस्तिष्क पटल पर उसकी तस्वीर बनती और आँखें उसे दूर तक तलाश करने लगतीं। रवीना को अधिक इंतजार नहीं करना पड़ता। हैरत की बात तो यह थी कि उससे आमना-सामना हमेशा उसी छोटी सड़क पर ही होता। छोटी सड़क वास्तव में छोटी ही थी और आगे जाकर उसका विलय दूसरी मुख्य सड़क पर हो जाता था। एक तरह से यह सड़क दोनों मुख्य सड़कों को जोड़ने का काम करती थी। 'वह' भी रवीना को उस मोड़ से इस मोड़ के बीच, शुरू या अंत... में कहीं भी मिल जाती।

15-16 साल की वह कमसिन लड़की मैला सलवार कुर्ता पहने, फटी चुन्नी एक कंधे पर डाल सामने से ढकते हुए कमर में लपेट, कस कर बाँधे रखती। जिसमें से उसका नवयौवन बिना अंतर्वस्त्र के किसी को भी एक नजर देखने को मजबूर कर देता। साथ में चल रही उसी के जैसे मैला लंबा ढीला सा फ्रॉक पहने एक छोटी सी लड़की से वह अटर-पटर न जाने किस भाषा में बात करती हुई चलती।

उसके कंधे पर एक बड़ा सा मटमैला सफेद रंग का थैला लटका होता। वे दोनों इतनी तेज चलतीं कि क्षण भर में ही उसके सामने से गुजर जातीं। उसकी देहयष्टि बहुत आकर्षक लगती जैसे कीचड़ में कमल। लंबी छरहरी साँवली, तीखे नैन-नक्श वाली उस अल्हड़ किशोरी में भविष्य की एक खूबसूरत नवयौवना के दर्शन होते। रवीना उसे दूर से ही पहचान लेती। कुछ दिन न दिखती तो वह एक अनजानी आशंका से भर जाती। कहीं कोई अनहोनी न हो गई हो उस के साथ। उसका दिल करता उसे किसी दिन रोक कर उससे कोई बात करे। उसका नाम पूछे। पर फिलहाल उसने उसका नाम किशोरी रख दिया था।

कहाँ रहती होगी। इधर तो सब उच्च मध्यमवर्गीय परिवार रहते हैं। जरूर कहीं दूर से आती होगी। इधर मुख्य सड़क पर कूड़ेदान रखे रहते हैं। वहीं से कूड़ा बीनने आती होगी। उसे किशोरी से अनजाना सा जुड़ाव हो गया था। ब्रैंडेड ट्रैक सूट पहने, कंधों तक के बालों की एक पोनी बनाए मॉर्निंग वॉक पर जाती आधुनिक रवीना का जुड़ाव एक कूड़ा बीनने वाली

लड़की से। बात अनोखी थी पर सत्य थी।

उसे युवा हो रही उस आकर्षक किशोरी की चिंता लगभग उसी की उम्र की अपनी बेटी रियाना जैसी हो जाती। 14-15 वर्ष की रियाना उम्र के नाजुक दौर से गुजर रही थी। मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक उतार-चढ़ाव दिखाई दे जाते। वह अनायास ही रियाना की तुलना किशोरी से करने लगी थी। उसकी बेटी की उम्र की किशोरी भी तो इन्हीं दबावों से गुजर रही होगी। लेकिन उसकी बेसिर पैर की चिंताओं से बेखबर किशोरी सुबह फिर वही कपड़े पहने, उसी सांचे में ढली छोटी बहन के साथ अटर-पटर बोलती बगल से निकल जाती।

आज रवीना 4-5 दिन बाद मॉर्निंग वॉक पर निकली थी। छोटी सड़क पर मुड़ते ही उसकी आँखें किशोरी को ढूँढने लगीं। धीरे-धीरे वह छोटी सड़क पार कर गई पर उसे किशोरी न दिखी। उसका मन अनमना सा हो गया। 3-4 दिन बीत गए, तब भी किशोरी न दिखी। आज तो पूरा एक हफ्ता बीत गया था। आज तो उसे जरूर मिलना चाहिए। उसका हृदय अनेक आशंकाओं से गडमड हुआ जा रहा था। घर आकर उसने सुकेश से बात की। बेटी से कहा ।

'तुम तो उस कूड़ा बीनने वाली लड़की के लिए ऐसे पागल हो रही हो... जैसे हमारी बेटी हो... अरे इन लोगों की जिंदगी ऐसी ही होती है। ये लड़कियाँ अधिकतर 10-12 साल की उम्र से ही कूड़ा बीनने लगती हैं। कई बच्चे तो 5-6 की उम्र से ही अपने वयस्क लोगों के साथ जाते-जाते कूड़ा बीनना सीख जाते हैं। थोड़ी बड़ी होने पर तो पूरी घाघ हो जाती हैं। अधिकतर के माँ या बाप में से एक ही होता है और किसी का तो कोई भी नहीं। थोड़ी बड़ी होकर धंधा भी करने लगती हैं कई तो...''

''छी कैसी बात करते हो... ऐसा कैसे सोच सकते हो किसी बच्ची के बारे में...'' रवीना को बुरा लग रहा था, तेजी से बोली।

''गलत क्या बोल रहा हूँ... चोरी चकारी में भी पकड़ी जाती हैं... कहीं थाने में बंद न हो तुम्हारी किशोरी'' सुकेश ने मामला मजाक में उड़ा कर रफा-दफा कर दिया।

लेकिन रवीना के दिल से बात न निकली। वह बुझी हुई सी विचारमग्न बैठी ही रह गई। ''रिलैक्स्ड मॉम...किस चिंता में पड़ गईं आप... मुझे विश्वास है आपकी वह फेवरेट कूड़े वाली जल्दी ही आने लगेगी'' रियाना ने उसके कंधे थपथपाए और स्कूल जाने की तैयारी करने लगी।

कुछ दिन और बीत गए। लेकिन किशोरी का कहीं अता पता न था। कहाँ से पता लगाए उसका। रवीना की आशंका अब व्यग्रता को पार करने लगी थी। एक दिन वह पास की ही एक शॉप पर कुछ खरीद रही थी। तभी उसकी नजर सड़क के उस पार रद्दी वाले की दुकान पर पड़ी। 'ओह उसे पहले क्यों नहीं आया इस दुकान का ध्यान ... यह रद्दी का डीलर कूड़ा बीनने वालों से कूड़ा खरीदा करता है और फिर रीसाइक्लिंग उद्योग के लिए भेज देता है।

उतावली हो वह सड़क पार करने लगी। दुकान पर पहुँच कर वह उसके मालिक से कुछ पूछ पाती... तभी उसकी नजर दुकान की बगल वाली गली पर पड़ गई। वहाँ पर कूड़ा बीनने वाली 3 औरतें बीना हुआ कूड़ा छांट कर अलग-अलग कर रहीं थीं। उनके साथ किशोरी के साथ दिखने वाली छोटी लड़की भी थी। उसे देख कर रवीना के अंदर अनायास ही कुछ बहने लगा।

किशोरी की खबर जानने का संपर्क सूत्र सामने देख वह ऊपर से नीचे तक तनाव बह जाने से हल्की हो गई थी। वह झपट कर उनके पास गई पर हटात रुक गई। आखिर क्या बोले इनसे ।

उसके अचानक सामने प्रकट हो जाने पर वे चारों उसे असमंजस से देखने लगीं। उनके चेहरों पर प्रश्न व शंका एक साथ दृष्टिगोचर हो रही थी। उनके चेहरों पर पसरी अजनबीयत ने उसे असहज कर दिया। तभी वह छोटी लड़की एक औरत के कान में फुसफुसाते हुए बोली,

''यह मैडम मुझे और दीदी को रोज मिलती है सुबह...'' बाकी तीन चेहरे उसकी बात कुछ समझे, कुछ नहीं समझे। पर पूर्वत उसे घूरते रहे। लेकिन लड़की की बातों में पहचाने जाने के एहसास ने रवीना के अंदर छायी हुई शंकाओं को स्वर दे दिए थे। प्रकृतिस्थ होते ही उससे मुखातिब हुई,

''मुझे पहचान रही हो न बेटा... तुम्हारी दीदी कहाँ है? नजर नहीं आती आजकल...'' लेकिन लड़की ने कोई जवाब नहीं दिया। वह उसे पूर्वत घूरती रही। अलबत्ता उस औरत ने, जिससे लड़की ने उसे पहचाने जाने की बात कही थी, बोली,

''सुगना से कुछ काम है क्या मेमसाब...'' ओह! सुगना नाम है उसका। रवीना को खुशी हुई... एक लापता लड़की का नाम जानकर। कुछ सोच कर बोली, ''हाँ काम तो है सुगना से... बता सकती हो वह कहाँ है... और कब आएगी?''

''क्या काम है...?'' कह कर वह पूर्वत कूड़ा छांटने लगी। उसका स्वर सपाट था। जैसे वह बात खत्म करने के मूड में हो। लेकिन रवीना हाथ आए इस अवसर को गंवाना नहीं चाहती थी।

''तुम मुझे इतना बता दो कि उससे कैसे मुलाकात हो सकती है?'' रवीना सोच रही थी, वह आगे पूछेगी... क्यों मुलाकात करनी है। पर उसने ऐसा कुछ नहीं पूछा। दोनों तरफ आशंकाएं सिर उठा रही थीं। फिर शायद उस औरत की आशंका को कोई विश्वास का सूत्र मिल गया था। लड़की इन्हें पहचानती है। बोली,

''उसका फोन नंबर लिख लो...'' वह अपना डिबिया वाला बदरंग सा मोबाइल कमर से निकाल कर रवीना की तरफ बढ़ाती हुई बोली। मुझे नहीं आता देखना। उसी ने अपना नंबर मेरे मोबाइल में भर दिया था। रवीना को आश्चर्य और खुशी एक साथ हुई। इन सबके पास मोबाइल है। क्यों नहीं होगा, ये लोग भी तो आखिर कामकाजी हैं। मोबाइल इनके लिए भी जरूरी है। उसने सुगना नाम से नंबर ढूँढा और अपने मोबाइल में सेव कर लिया। उसने देखा औरत के मोबाइल में जरूरत भर के ही नंबर थे।

''लेकिन सुगना काफी दिन से नहीं आ रही... आखिर क्या बात है?'' मोबाइल वापस देते हुए वह बोली। उसे लगा, अब कुछ जान-पहचान हो गई है तो कारण जरूर बता देगी।

''उसके दोनों हाथ बहुत जख्मी हो गए हैं मेमसाब... इलाज करवा रही है। काम पर आ सकने के लायक नहीं है। इसीलिए तो उसकी बहन आ रही है कूड़ा बीनने'' बोलते हुए उस औरत के चेहरे पर सुगना के लिए कोई दर्द नहीं उभरा। उसकी बात सुन और तटस्थता देख उसका खुद का दर्द और गहरा हो गया था।

''कैसे जख्मी हो गया... चोट बहुत ज्यादा है क्या?''

''बहुत ज्यादा क्या और कम क्या... हमारे

काम में तो यह खतरा बना ही रहता है''

''कूड़ा बीनने में खतरे वाली कौन सी बात है?'' उसे बात समझ नहीं आई।

''खतरा कैसे नहीं... कूड़ा बीनते हैं, फूल नहीं चुनते... सुगना का ही देख लो''

''बताओ तो सही क्या हुआ उसे?'' वह व्यग्र हो रही थी।

''लोग भी टूटा काँच... जहरीली चीजों को अलग नहीं कर पाते... सुगना एक पालिथीन के अंदर हाथ डाल कर अंदर की चीजें बाहर निकालने की कोशिश कर रही थी। अंदर किसी एसिड जैसी चीज की बोतल थी। जो उसके हाथ में उठाते ही टूट गई और जो कुछ उसके अंदर था। उसके दोनों हाथों में गिर गया। कितनी तड़पी बेचारी दर्द और जलन के मारे और काँच टूटने से उसके हाथ कई जगह से कट गए '' रवीना का हृदय अंदर तक पसीज गया।

घर आते समय सोच रही थी, उससे बात करके उसके घर का पता पूछ कर उसके घर जाएगी। जो मदद बन पड़ेगी, कर देगी।

घर आकर सुगना का नंबर मिलाने की उतावली ऐसी थी कि पहुँचते ही उसने सुगना का नंबर लगा दिया। 2,3 काल के बाद फोन उठा। सुगना की आवाज सुनकर रवीना को लगा उसे शाम तक इंतजार कर लेना चाहिए था। तब तक उसकी छोटी बहन आज सुबह का वाकया उसे सुना देती तो उसे अपना परिचय देने में आसानी होती ।

''सुगना..., वह आराम से बोली, ''मैंने तुम्हारी बहन से तुम्हारा नंबर लिया... तुमसे कुछ बात करना चाहती हूँ... मिल सकती हो?''

''क्या काम है...'' उसकी आवाज बेहद शुष्क थी, ''मेरे चोट लगी है... मैं आजकल कूड़ा बीनने के लिए भी नहीं जा रही हूँ''

''हाँ बताया तुम्हारी बहन ने... तुम कहाँ रहती हो... मैं आ जाती हूँ तुमसे मिलने'' सुगना की तरफ से चुप्पी थी। शायद वह अपने अंदर ही उत्तर ढूँढ रही थी कि मैं उससे क्यों मिलना चाहती हूँ। ''क्या काम है आपको... मैं तो आपको जानती भी नहीं...''

''तुम मुझे पहचान जाओगी... सुबह जब तुम कूड़ा बीनने जाती हो तो मैं सैर पर जाती हूँ'' सुगना को शायद कुछ-कुछ पहचाने जाने का अहसास हो गया था। बोली,

''जब हाथ ठीक हो जाएंगे... तब काम पर जाऊँगी, तब ही मिलूँगी''... यह उसकी बात खत्म करने के बाद की चुप्पी में छुप गया था। रवीना समझ गई। सुगना को उसमें कोई दिलचस्पी नहीं। उसके जैसी लड़कियाँ रवीना जैसी हैसियत की महिलाओं की मंशा में सिर्फ स्वार्थ ही ढूँढ सकती है। फिर भी उसने एक कोशिश की,

''दरअसल मेरी एक फ्रेंड डाक्टर है...'' उसने थोड़ा सा झूठ का सहारा लिया, ''मैं तुम्हारी मदद करना चाहती हूँ.. . तुम्हारा इलाज ठीक से होगा तो तुम जल्दी ठीक हो जाओगी'' सुगना चुप रही।

''तुम्हारी इतनी छोटी सी बहन कूड़ा बीनती है... क्या तुम्हें अच्छा लगता है... तुम्हारा घर कहाँ है, मुझे बस अंदाजा देदो''

''सूखी नदी के पार जो मलिन बस्ती है... वहीं रहती हूँ... मेरे नाम से कोई भी बता देगा '' ऐसे बोली जैसे वह कोई नामचीन हस्ती हो ।

रवीना जब सुगना के बताए अनुसार उसकी बस्ती में पहुँची तो विश्वास नहीं कर पा रही थी कि ऐसे

भी लोग रहते हैं, जीते हैं और खुश भी रह लेते हैं। गंधाती नालियाँ, भिनभिनाती मक्खियाँ मच्छर, नंगे पैर घूमते नंग-धड़ंग बच्चे। एक-दूसरे के सिर पर जूँ मारती स्त्रियाँ घरों की दीवारें कहीं टीन की हैं तो कहीं बाँस की टट्टियाँ लगीं हैं। दरवाजों की जगह मोटे गंदे परदे झूल रहे। कहीं पुरानी चादर ही दरवाजे का काम कर रही हैं। शायद यह भी उन्हें कचरे से मिला हो। कचरे के जिस ढेर के सामने से गुजरते हुए उस जैसे लोग नाक मुँह रुमाल से ढक लेतें हैं उसी गंधाते ढेर के बीच सुगना जैसे लोगों की पूरी जिंदगी सांस लेती है।

गंदगी से बचते बचाते, मुँह नाक, रुमाल से ढक कर उसने एक बच्चे को सुगना का घर बताने के लिए कहा तो बच्चा इतनी तत्परता से चल दिया जैसे इन फिल्म हीरोइन सी लगती मेमसाब को सुगना का घर बताने जैसा महत्वपूर्ण काम उससे छूट न जाए। बाकी बच्चे भी उनके पीछे-पीछे चल दिए थे। इधर-उधर बिखरी महिलाएँ उसे आश्चर्य से देख रहीं थीं। शायद ये सब उसे किसी समाज सेवी संस्था की कार्यकत्री समझ रहे हैं।

सुगना के पर्दे वाले दरवाजे पर खड़े होकर 3-4 बच्चे सप्तम सुर में आवाज देने लगे, ''सुगना दीदीइइइइ... सुगना दीदीइइइइइ''

''क्या है...'' सुगना बच्चों को 2-4 गालियाँ देती बाहर निकली और उसे देख कर ठिठक गई। लेकिन रवीना उसके घर को परख रही थी । उसके लिए जीवन का यह सर्वथा एक नया अनुभव था । सुगना का घर भी किसी कूड़े के ढेर से कम न था। जिसमें पर्दे से लेकर छत बनाने में भी अनेक कूड़े से मिली चीजों का इस्तेमाल हुआ था।

उसे देख कर सुगना ने सभ्यता की दिशा में कदम बढ़ाते हुए हाथ जोड़े। उसके हाथ वास्तव में बहुत जख्मी थे। कटे और जले हुए हुए भी। रवीना के हृदय में मिला-जुला सा कुछ पिघल गया। उसने हाथ में पकड़ा दवाइयों का पैकेट उसकी तरफ बढ़ा दिया साथ में कुछ रुपए भी। रुपए देख सुगना की आँखों में आत्मीयता पिघल गई। परदा पूरा हटा पैकेट पकड़ लिया।

''मै तुम्हें समझा देती हूँ... कौन सी दवाई कब लगानी है'' वह कैमेस्ट को पूछ कर अंदाजे से 2-3 मरहम ले आई थी। पर सुगना को तो सचमुच डॉक्टर को दिखाने की जरूरत थी, ''तुम्हारे जख्म तो बहुत ज्यादा हैं... कल मेरे घर पर आ जाओ। मैं तुम्हें डॉक्टर को दिखा दूंगी''

सुगना के कहने पर एक बच्चा अंदर से एक मैली सी प्लास्टिक की कुर्सी उठा लाया। कुर्सी का एक हत्था प्लास्टिक की डोरी से बंध कर सुशोभित हो रहा था।

''बैठिए मेमसाब... पानी लाऊं...?'' रवीना को अंदर से उबकाई आ गई। गरीब के घर में भोजन करते अखबार में छपे राजनेताओं के फोटो उसके मस्तिष्क पटल पर कौंध गए। वे प्रोग्राम तो सब सुनियोजित होते हैं। यहाँ आकर कोई नेता एक गिलास पानी भर पी ले सचमुच में। वह सच्चे मन से सुगना की मदद करने आई है। पर गंदगी व बीमारियों के ढेर पर बैठे इन लोगों के घर में पानी तो वह भी नहीं पी सकती।

''नहीं मैं ठीक हूँ...'' हटे पर्दे से रवीना की कुतूहल भरी नजरें अंदर का मुवायना कर रही थी। पन्नियाँ... फटे हुए कुशन कवर, चादरें, टूटी मेज, पुराने बरतन, किनारे पर रखे प्लास्टिक के दो कप... एक बड़ा कप जिस पर बार्बी डॉल बनी थी। साफ लग रहा था कि अधिकतर वही सामान है जो लोग कूड़े में

फेंक देते हैं। सुगना को अपनी नजर का पीछा करते देख उसने नजरें हटा लीं।

''तुम कल आना...मेरा मोबाइल नंबर है तुम्हारे पास...जब उस छोटी सड़क पर पहुँच जाओ तो फोन कर देना। मैं घर समझा दूंगी'' कह कर वह वापस पलट गई। सुगना ने कोई प्रतिक्रिया जाहिर नहीं की थी। इसलिए वह समझ नहीं पा रही थी कि वह आएगी भी या नहीं। वह उससे बहुत सी बातें करना चाहती थी। उस सुंदर लड़की में उसकी दिलचस्पी बढ़ गई थी। यह इतनी सुंदर कैसे है, जबकि छोटी बहन साधारण सी लगती है।

''हो सकता है माता - पिता में से एक सुंदर रहा होगा... एक नहीं'' रवीना रात में सुकेश से बातचीत करती हुई बोली। दोनों बाप-बेटी ने पहले तो उसकी खूब टांग खींची, ''मम्मी की फेवरेट कूड़े वाली मिल गई... चलो एक समस्या तो खत्म हो गई लेकिन दूसरी शुरू हो गई, आखिर वह सुंदर कैसे है'' सुकेश ने बहुत अर्थपूर्ण नजरों से रवीना की तरफ देखा जिसमें एक रहस्यमय परिहास घुला था।

''मम्मी मेरे खयाल से आपकी इस खूबसूरत फेवरेट कूड़े वाली को भी सबसे सुंदर लड़की की तरह चुना जा सकता है... क्योंकि मैंने पढ़ा था कि चीन के एक लोकप्रिय इंटरनेट पोर्टल ने कूड़ा बीनने वाली एक तिब्बती लड़की को एक वीडियो में शंघाई एक्सपो में इधर-उधर फेंकी बोतलों को चुनते देख उसे सबसे सुंदर लड़की घोषित किया था। पर्यावरण को स्वच्छ रखने के उसके प्रयास की बहुत सराहना भी हुई थी'' बेटी बोली।

रवीना ने बाप-बेटी को शह नहीं दी। वह कल आने वाली सुगना के बारे में सोच रही थी। लेकिन दूसरे दिन वह इंतजार ही करती रह गई । सुगना नहीं आई। फोन मिलाया तो उठा नहीं। आफिस से घर आए सुकेश उसको व्यर्थ चिंतित देख नाराज हो गए।

''तुम आजकल ये क्या जंजाल ले बैठी। जब आ जाएगी तो थोड़ा बहुत पैसे की मदद और कर देना । इस तरह हर वक्त उसके बारे में सोचना बंद करो'' सुकेश एकाएक तल्ख से हो गए।

''सुकेश, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हम उन बच्चियों की मदद करें... उनको पढ़ाएं लिखाएँ ... एक अच्छे कार्य होगा''

''वह कूड़ेवाली बुलाने पर भी नहीं आई और तुम पर तो बहुत आगे का फितूर शुरू हो गया... अरे इन सबको अपनी जिंदगी ऐसे ही प्यारी होती है... थोड़ा बहुत पैसे की मदद कर दो बस... स्कूल में डालना क्या इतना आसान है... एक बार स्कूल में नाम लिखा कर उनकी निगरानी करोगी कि वे स्कूल जा भी रहीं हैं या नहीं...''

''क्यों नहीं जाएँगी स्कूल... इन बच्चों के बारे में क्या सभ्य समाज को सोचना नहीं चाहिए?''

''किस-किस के बारे में सोचोगी... भारत में कूड़ा बीनने वालों की संख्या 15 से चालीस लाख के बीच है... जिसमें से चालीस फीसदी महिलाएँ और तीस फीसदी कम उम्र की लड़कियाँ कूड़े के ढेर में सशक्तिकरण तलाश रही हैं। अकेले दिल्ली में करीब पाँच लाख लोग सड़क पर कूड़ा बीनते हैं। कितनी बच्चियाँ वर्णमाला का ककहरा सीखने से पहले कुछ और सीखने लगती हैं...'' सुकेश रोष में बोले ।

''इसीलिए तो दिल दुखता है मेरा... जब हमारे बच्चे स्कूल बैग और पानी की बॉटल लेकर स्कूल ड्रेस में सजकर स्कूल जाते हैं... ये बच्चे कंधे पर कूड़े वाला बैग लेकर, कूड़े के ढेर में हमारे घरों से फेंकी हुई

चीजों में अपना भविष्य तलाश रहे होते हैं। सोचो सुकेश इस अनौपचारिक क्षेत्र ने देश को कूड़ादान बनने से बचाया हुआ है... खुद बीमारियों व गंदगियों से गलबहियाँ करके हमें स्वच्छ वातावरण मुहैया कराते हैं और हम हमारा समाज इन्हें देख नाक भौं सिकोड़ता है... इनकी मुश्किलों से अनभिज्ञ ही रहना चाहता है'' रवीना भी तल्ख हो गई।

रवीना को उन बच्चियों के प्रति इतना गंभीर व भावुक देख सुकेश चुप हो गए, ''तुम्हें जो ठीक लगता है करो'' कह टीवी के चौनल बदलने लगे।

रवीना अगले दिन भी सुगना की इंतजार करती रही। सुगना पूरे तीन दिन बाद आई। कूड़ा बीनने-वालियों को उनकी कर्मस्थली के आस-पास रहने वालों का हल्काफुल्का ज्ञान रहता है। इसलिए उसने सीधे घर पहुँच कर घंटी बजा दी। रवीना गेट पर गई तो सुगना को देख कर चौंक गई।

''अरे सुगना तुम... तीन दिन से तुम्हारा इंतजार कर रही हूँ... क्यों नहीं आई?''

''मेमसाब हाथ आपकी दी हुई ट्यूब से ठीक हो रहा था। डॉक्टर को दिखाने की जरूरत नहीं थी''

''अरे, पर आना तो चाहिए था... फिर आज कैसे आ गई?''

''काम नहीं है मेमसाब... कूड़ा बीनने लायक नहीं हुई अभी ... ये छुटकी अधिक नहीं कर पाती है। मैंने सोचा आप घर का कोई काम दे देंगी तो पेट भरने लायक हो जाएगा''

रवीना का हृदय पसीज गया। सुगना शायद कभी नहीं आती अगर पेट की भूख उसे मजबूर नहीं करती। ''तुम दोनों यहाँ बरामदे में बैठो, मैं कुछ खाने को लाती हूँ'' दोनों बहने बैठ गईं।

रवीना ने एक प्लेट में सब्जी रोटी रख कर उन्हें दे दी, एक बोतल पानी की पकड़ा दी। दोनों भूखी थीं। जल्दी-जल्दी खाने लगी। वह वहीं कुर्सी पर बैठ गई। रोटी सब्जी खाकर दोनों ने पानी पिया और तृप्त हो गई। पेट भरने की तृप्ति कुछ अलग ही भाव से चेहरे को भर देती है। रवीना उनमें आए परिवर्तन को देख रही थी ।

''मेमसाब कोई काम है... बाहर की सफाई या बागवानी का काम भी अच्छे से कर लूंगी..''

''पर तुम्हारे हाथ तो जख्मी हैं?''

''दोनों बहने मिल कर लेंगी... ये छुटकी जिन औरतों के साथ कूड़ा बीनने जाती है... वे इसका पूरा हिस्सा नहीं देती हैं... पैसे मार जातीं हैं इसका...'' रवीना उन दोनों के लिए शिक्षा अर्जित करने का साधन ढूँढ रही थी और वे सिर्फ धन अर्जित करने की बात सोच रहीं थीं। उनके सामने मस्तिष्क की भूख कोई मायने नहीं रखती थी।

''मैं तुम दोनों बहनों को स्कूल में पढ़ाऊँगी... जाओगी स्कूल?'' दोनों ने अपनी अजीब सी निगाहें उसके चेहरे पर बिछा दी ।

''मेमसाब स्कूल जाएंगे तो खाएंगे क्या?'' सुगना थोड़ी देर बाद बोली, ''मैंने छटी पास कर रखी है... और इस छुटकी ने दूसरी... मेरे बापू की छोटी सी चाय की दुकान थी । हम दो बहनें और सबसे बड़ा मेरा भाई। मेरे पिताजी बीमारी में एक दिन मर गए। माँ ने दुकान सँभाली पर भाई गलत संगत में पड़ गया। माँ के पैसे चुरा कर गुंडे दोस्तों के साथ उड़ा देता । हम दोनों बहनें स्कूल जाती थीं। भाई के गुंडे दोस्त हमारा पीछा करते फिकरा कसते । बापू के जाते ही सबकुछ बदल गया। माँ हमें लेकर यहाँ आ गई। लेकिन एक दिन माँ

भी मर गई और हम दोनों बहनें ही रह गईं '' एक साँस में अपनी कहानी सुना सुगना की वीरान आँखों में चंद कतरे उन सुनहरे लम्हों की याद में तैर आए थे।

''मैं तुम्हारा स्कूल का खर्चा उठाऊँगी... घर का कुछ काम भी दूंगी... तुम पैसा भी कमा लोगी और पढ़ भी लोगी'' रवीना ने सहानुभूति से सुगना की तरफ देखा ।

''लेकिन पढ़ कर क्या होगा... कोई मास्टरनी तो बन नहीं जाऊंगी... इस छुटकी को डाल दो स्कूल में... मैं तो अब बड़ी हो गई'' सुगना की आँखें अर्थपूर्ण गहरी मुस्कुराहट से भर गईं ।

''इतनी बड़ी भी नहीं हुई है... मैं तुम दोनों को घर पर भी पढ़ाऊंगी''

''लेकिन आप हमें क्यों पढ़ाना चाहती हैं...'' सुगना एकाएक उकता कर बोली। रवीना असमंजस में पड़ गई। इन्हीं की भलाई के लिए इन्हें स्पष्टीकरण भी देना है।

''तुम दोनों बहुत अच्छी हो... कूड़ा बीनने में अपना जीवन खराब कर रही हो... आखिर शिक्षा पर तो हर बच्चे का अधिकार है'' रवीना ने अपनी दलील दी।

''पढ़ भी लेंगे तो भी क्या...?'' सुगना किसी बड़ी बूढ़ी की तरह बोली। ''पढ़ लिख कर कूड़ा बीनेंगे । पेट भरने के लिए काम तो करना ही पड़ेगा न मेमसाब। खूब पढ़े लिखों को तो नौकरियों के लाले पड़े रहते हैं... फिर दसवी, बारहवीं करके हमें कौन सी नौकरी मिलेगी... न घर के रहेंगे न घाट के'' अल्पशिक्षित सुगना की दलील से अल्प समय के लिए वह निरूत्तर हो गई। काफी हील हुज्जत हुई। दोनों ने एक दूसरे के तर्क काटे। अपनी दलीलें दीं । आखिर सुगना चुप हो गई।

''ठीक है मेमसाब.. लिखा दो हमारा नाम स्कूल में..''रवीना को लगा, एक बड़ी जंग जीत ली। सुकेश को बताया। रियाना ने सुना तो बोली, मम्मी आल द बेस्ट.. आई होप कि आपकी ये कूड़े वालियां रोज स्कूल चली जांए''

रवीना ने दोनों का नाम स्कूल में लिखा दिया। उनके लिए ड्रेस, स्कूलबैग, जूते किताबें आदि सब जरूरत का इंतजाम कर दिया। कुछ नए कपड़े भी खरीद दिए। अपने घर में बाहर की साफ-सफाई का व फूल पौधों में पानी डालना, खरपतवार साफ करना आदि का काम उन्हें पकड़ा दिया ताकि उनकी कुछ आमदनी होती रहे।

वह खुश थी। उसने जो सोचा कर दिखाया। लड़कियों सुबह शाम में उसके घर नियम से आतीं। काम करतीं और उससे पढ़ती। दोनों बहनों को पढ़ाई छोड़े हुए बहुत समय हो गया था। इसलिए बहुत मेहनत से भी हासिल थोड़ा ही हो पाता। रवीना ने अपना सौ प्रतिशत लगा दिया उन्हें साक्षर बनाने में। दो महीना बीतते-बीतते वह निश्चिंत हो गई। अब पढ़ाई से नहीं भागेंगी।

बनारस में भाई की बेटी की शादी पड़ गई। उसने लड़कियों को खूब होमवर्क दे दिया। कुछ रुपए भी दिए। पीछे से किसी बात के लिए परेशान न होना। 12-15 दिन बनारस लगा कर आई। आते ही सुगना को फोन किया। फोन आउट आफ रेंज आता रहा। स्कूल में पता किया तो पता चला दोनों बहने पिछले एक हफ्ते से स्कूल नहीं आ रहीं। दूसरे दिन रवीना उनकी बस्ती में पहुँच गई। सुगना के घर के आगे खड़े होकर सुगना को आवाज दी। छोटी बहन निकल कर आई।

''तुम दोनों स्कूल क्यों नहीं जा रही हो ।

सुगना कहाँ है?'' वह रोष में बोली ।

''सुगना दीदी भाग गई किसी के साथ...'' वह बिल्कुल सपाट स्वर में बोली। जैसे एक उम्र के बाद भाग जाना एक सामान्य प्रक्रिया है... उनका विधिवत ब्याह आखिर कौन करेगा। रवीना हतप्रभ रह गई । मात्र 15 साल की सुगना का भविष्य आँखों के आगे नाच गया।

दो दिन की चाँदनी भी नसीब होगी या नहीं उसे । नसे में पिटती सुगना, पेट की आग बुझाने के लिए फिर से कूड़ा बीनने लगी है। ढेर सारे बच्चे पैदा कर कृषकाय सुगना ....एक बार फिर इसी खोली में आ गई। फर्क सिर्फ इतना कि आँखों में अनदेखे सपनों का स्थान अब बच्चों की भूख ने ले लिया था। वह अपनी माँ की कहानी दोहराने लगी है।

''तुम किसके साथ रहती हो...'' थकी सी आवाज में वह बोली ।

मैं अपनी खोली में ही रहती हूँ... पड़ोस में नर्मदा मौसी हैं। मौसी तो अच्छी हैं पर मौसा अच्छा आदमी नहीं है'' छुटकी के कथन पर रवीना सकते में आ गई, छुटकी की आवाज में कुछ रहस्य था। उसने आँखें उसकी आँखों से मिलाई। उसकी आँखों में दहशत के चिह्न साफ नजर आ रहे थे।

''तुम क्यों नहीं गई स्कूल...'' वह थकी हुई आवाज में बस इतना ही बोली ।

''मौसी ने मना किया... सुबह अपने साथ कूड़ा बीनने ले जाती है''

अबकी बार रवीना कोई जिरह नहीं कर पाई। दिल में आया कहे, 'मेरे साथ रहोगी' ? लेकिन समझ में भी आ रहा था, यह इतना सरल नहीं है। उसकी साफ नियत पर भी कौन भरोसा करेगा। चाइल्ड लेबर का ठप्पा लग जाएगा। होम करते हाथ वह भी नहीं जलाना चाहती। दूर से ही मदद ठीक है जो बन पाएगा। बहुत किंतु परंतु है... और वह मौसा? कितने दिन दूर से दुलराएगा इसे...।

घर आते रवीना के कदम मनों भारी हो रहे थे।

पता- दिव्यादेवी भवन,
सोलर-16 ई.ई. सी रोड, देहरादून- 248001
मो0- 9997700506

अपनी ही माणियों की आभा
मैं न और कर सकी सहन,
अधिक न रोयी मैं फिर उनको,
मूँद लिए मैंने लोचन !

तूने तब मुझ सत्व विहीना
दीना पर अति करुणा की
मूक तिमिर की भाँति मुझे भी
निज चरणों की छाया दी

-सुमित्रानंदन पंत

अद्भुत नर्सरी

➲ सुनीता अग्रवाल

अरे पापा! वो देखो नर्सरी, गाड़ी में बैठे-बैठे जैसे ही प्रीतू की निगाह एक नर्सरी पर पड़ी तो खुशी से चिल्लाती हुई प्रीतू ने अपने पिता अकिंत को गाड़ी रोकने की जिद की।

अंकित चड़ीगढ से कुछ ही महीने पहले ट्रांसफर होकर भोपाल आये हैं। अपने परिवार के साथ आज यहाँ शाम को घूमने का आनन्द लेने निकले है।

प्रीतू ही नहीं उसकी माँ कंचन को भी पेड-पौधे इतने लुभाते हैं, जैसे उसके आगे दुनियाँ का हर उपहार छोटा हो। अंकित को मजबूरी में कार रोकनी पड़ी, माँ-बेटी की जिद जो थी। जबकि अंकित का मन आज बाजार में घूमने और सामान खरीदने का था। कई दिन बाद आज ऑफिस से इतना समय मिल पाया था कि वह अपने परिवार के साथ अच्छा समय व्यतीत करे। कार रुकते ही प्रीतू लपककर नर्सरी के अन्दर दौड़ पड़ी और कंचन उसके पीछे-पीछे चल रही थी। कंचन बार-बार उसे आवाज लगा रही थी। अरे! प्रीतू! रुको न, इतना दौड़ क्यों रही हो, मेरे साथ चलो न। कहते हुए कंचन ने भी अपने कदम तेज कर दिए और प्रीतू के साथ हो ली।

बाहर से नर्सरी की खूबसूरती देख अंकित भी अपने कदम नहीं रोक सका और कार से निकल नर्सरी की ओर बढ़ने लगा। उसने भी शायद आज से पहले कभी इतनी सुन्दर नर्सरी नहीं देखी थी। अंकित भी अन्दर की ओर बढ़ता जा रहा था। चलते-चलते उसके कदम रुके, उसने देखा दीवार पर हरियाली से सम्बन्धित कुछ सुन्दर नोट लिखे हुए हैं। अंकित उन्हीं में से एक को पढ़ने लगा-

"सजी हुई बगिया का, है ख्वाव सबका,
अन्दर आने को उकसाता है, ध्यान इनका,
मन लग जाए सवाँरने में इनको अगर,
अन्दर तक रोमाचिंत कर देगा प्यार इनका।।

इसे पढ़कर अंकित का मन खुश हो गया, उसे लगा ही नहीं रहा था कि ये नर्सरी है। अंकित यहाँ का आनन्द लेता हुआ आगे मिट्टी वाले रास्ते पर बढ़ने लग। रास्ता मिट्टी का जरूर था लेकिन बहुत साफ था और फिर कुछ आगे बढ़ते ही हरी घास पर उसके कदम आ गये और वह कंचन और प्रीतू को आवाज लगाने लगा।

इन्द्रधनुष की छटा जैसी चमकती नर्सरी हर कदम पर सभी का मन मोह रही थी। चारों तरफ फूलों की बेल से बने सुन्दर-सुन्दर गेट ने सभी आने वालों का दिल जीत लिया था। प्रीतु कूदती हुई उन्ही गेट से

निकलकर आगे बढती जा रही थी। तभी किसी को देख 'माली भइया! आपकी नर्सरी बहुत सुन्दर है' मुझे फूलों वाले पौधे चाहिए, क्या आप मुझे कई प्रकार के फूलो वाले पौधे दिखायेंगे ? ऐसा सुनकर वो स्मार्ट दिखने वाले 'माली भइया' जो कि मालिक थे अपनी उस सुन्दर नर्सरी के, लेकिन प्रीतू अपनी खुशी को न संभाल पाने के कारण उन्हीं को माली समझ बैठी थी। पास पहुँचकर उसने कुछ ठिठक कर पूछा, अंकल! हम यहाँ फूल वाले पौधे देखने आये हैं। क्या आप हमको बतायेंगे कि हम कहाँ जाकर देखें। प्रीतू के इतना प्यार और खुशी से पूछने पर उस नर्सरी के मालिक ने खुद ही अपनी नर्सरी के माली को बुलाकर हरसिंगार का पौधा लाने को कहा।

देखो बेटा इसको पारिजात भी कहते हैं। अगर आप अपने बगिया में लगाओगें तो इसका फूल रातभर महकता रहेगा। और सुबह होते ही फूल जमीन पर बिखरकर बहुत सुन्दर नजारा कर देगा। जब तुम सुबह-सुबह पहुँचोगी तो इसकी महक से मन प्रभुल्लित हो जायेगा। ये देखो ये है मोगरा, इसे बेला भी कहते हैं। फूलों की अनेक प्रजातियाँ दिखाते हुए उसने फूलों वाली कुछ वेल भी दिखाई। अगर आपकी बगिया में चहारदीवारी है तो ये वेल अपने नारंगी रंग के फूलों से छा जायेगी और बगिया में महक के साथ चार चांद भी लग जायेंगे।

माँ-बेटी बहुत खुश थीं, दोनों को लग रहा था कि क्या-क्या ले लें। तभी वहाँ अंकित पहुँच गया। अरे भाई! और कितना लोगे तुम लोग?, तुम दोनों को तो अगर जंगल में भी ले चलूँ तो वहाँ से भी अपने मतलब के पेड़-पौधे ढूँढकर ले आओगें, कहते हुए अंकित ने कंचन का हाथ पकड़ लिया, सच तो ये है कि इतनी सुन्दर नर्सरी में पहुँचकर आज अंकित इतना प्रसन्न था कि वह भी अपनी पत्नी और बेटी की खुशी में खुश था, अब उसे बाजार न पहुँच पाने का अफसोस भी नहीं था।

'हाँ पापा! आप कुछ नहीं कहेंगें' प्रीतू बोली अरे मोहन! अंकित उस नर्सरी के मालिक को देख खुशी से हाथ मिलाते हुए, बोला 'मोहन! तुम यहाँ! ये सब क्या है। तुम तो चंडीगढ़ में इंजीनियर के पद पर थे। कब कैसे ये सब, बहुत उत्सुक हो रहा था। अंकित सब कुछ जानने के लिए। मोहन भी अपने दोस्त को अचानक अपने सामने देखकर अचम्भित हो गया था। दस साल बाद मिले अपने दोस्त को देख फूला नहीं समा रहा था। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि इतनी देर से जिसके साथ पौधों की बातें हो रही थीं बह उसके दोस्त का परिवार था। कंचन और प्रीतू को तो जैसे अब पूरी नर्सरी ही अपनी लगने लगी थी। ''मम्मी आप बताओ क्या-क्या ले लें'' प्रीतू बोली। दोनों को अब कोई मतलब ही नहीं था अंकित से, दोनों अपनी-अपनी पसन्द के पौधे एक तरफ रखने लगीं।

उधर अंकित और मोहन बातों में व्यस्त थे।

अंकित मोहन से उसकी नर्सरी की तारीफ करते नहीं थक रहा था 'भाई! कब से हो यहाँ भोपाल में' अंकित बोला मोहन ने बताया कि चार साल से भोपाल में हूँ। अपनी पत्नी की खुशी के लिए सबकुछ छोड़कर यहाँ आ गये हम, मेरी पत्नी और मेरी बेटी को पेड़-पौधों का बहुत शौक है। उन्हीं दोनों की इच्छा और प्रयास से यह सब संभव हुआ है।

प्रीतू अपनी पसन्द के सभी पौधे बिल करवा रही थी तभी मोहन ने सभी को अपनी पत्नी और बेटी से परिचय करवाया। जिस कारण से ही आज वह इतनी

सुन्दर नर्सरी का मालिक है कहते हुए उसने अपनी पत्नी की ओर इशारा किया। मोहन ने बताया कि उसकी पत्नी को फूलों की प्रदर्शनी में राज्य स्तर पर बहुत बार सम्मान मिल चुका है। कंचन और प्रीतू बहुत खुश थी कि उनको अपनी बगिया सजाने का तरीका मिल गया है। पापा! अब हम बस इसी नर्सरी पर आया करेंगे। प्रीतू खुशी से बोली उसी समय एक बोर्ड पर ''पौधों की ट्रेनिंग क्लास'' का नोट देख प्रीतू ने कंचन का ध्यान उस ओर आकर्षित किया। माँ देखों हम दोनों भी समय मिलने पर आसानी से यहाँ ट्रेनिंग ले सकते हैं और अपनी बगिया की देखभाल भी खुद ही कर सकते है।

कंचन ने अंकित से कहा ट्रेनिंग के विषय में बात करें, तो मोहन ने खुश होकर कहा ''मेरी पत्नी ही इसकी ट्रेनिंग देती है और इस ट्रेनिंग का प्रमाण पत्र भी मिलता है जो कि सरकारी संस्था से जुडा है''

वाह! यह विचार अंकित को भी अच्छा लगा कि हम सब अपने घर को सुन्दर, स्वच्छ और महकता हुआ रखने के साथ-साथ अपने शहर को भी सुन्दर हरियाली युक्त रखने में अपना योगदान दे सकते हैं।

''नाजुक पत्तों को संभाल रखा है इन शाखाओं ने, गर हम और पेड़ बढाते जायें, तो बात कुछ और होगी''

'हम पेड-पौधों के साथ खुश रहकर प्रकृति को खुश रखकर अपना भविष्य और देश सुन्दर और समृद्ध बना सकते हैं। अंकित ने सोचा

एल-11, भीकमपुर कॉलोनी,
पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ 226006
मो0 8765587850

पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला !
घेर ले छाया अमा बन,
आज कज्जल-अश्रुओं में रिमझिम ले यह घिरा घन,
और होंगे नयन सूखे,
तिल बुझे ओ' पलक रूखे,
आर्द्र चितवन में यहाँ
शत विद्युतों में दीप खेला
-महादेवी वर्मा

भरोसा

ॐ ऋषि कुमार भट्टाचार्य

एक नये उत्साह के साथ बैंक की शाखा का पदभार संभाला, ऊंची-ऊंची पर्वत शृंखलाओं के बीच सीधे-साधे पहाड़ी लोग गिने चुने बैंक के शाखा सदस्य। चारों तरफ आकाश को छूने की प्रतिस्पर्धा करते चीड़, देवदार एवं बाँस के गगनचुम्बी वृक्ष। कल-कल निनाद करते झरने एवं कलरव करते पक्षी। कुछ ही दिनों में मेरे मन का निवास स्थल भी मिल गया। आवास एक बहुत ही रमणीय स्थल पर था, मेरा स्वप्निल बंगला, चारों तरफ आड़ु और सेब के बागों से घिरा हुआ।

मेरे हृदय का कवि, चित्रकार, संगीतकार रह-रह कर प्रस्फुटित होने लगा । कष्ट बस एक ही था, वह था कि खाना कौन बनाये, मेरे बस का था नहीं और शाखा के किसी भी व्यक्ति का आभार प्राप्त करना मेरी सहनशीलता के परे था। मेरी माँ जो शुरू के दिनों में साथ आई थी वापस लौट गई। जाने से पहले बड़ी मुश्किल से एक स्त्री को मेरे यहाँ खाना बनाने के लिए राजी कर गई थी ।

नेपाल के राजघराने की इस स्त्री को समय के थपेड़ों ने सुदूर इस पर्वतीय प्रदेश में उसके एक बच्चे के साथ ला पटका था। पति परित्यक्ता वह स्त्री घर-घर लोगों के बर्तन मांज कर अपना जीवन यापन कर रही थी। नाम था राधा, राधा।

पहले दिन जब वह काम पर आई तो मैंने कहा राधा जी आप सुबह हर हालत में सात बजे तक खाना बना दिया करियेगा । मैं कार्यालय समय से पहले पहुँचने का आदी हूँ जिस दिन आपको न आना हो तो पहले से बता दीजियेगा ऐसा न हो कि आपके भरोसे मुझे उपवास भी करना पड़े और दफतर भी समय से न पहुँच पाऊँ। रही शाम की बात, तो चाबी सुबह मुझसे ले लिया करियेगा और सब्जी वगैरह खरीद कर शाम छः बजे के करीब खाना बनाकर चाबी मुझ को बैंक में देते हुए घर निकल जाइयेगा । इसके बाद, इस निर्धारित शैली में खाना बनाने का कार्यक्रम शुरू हो गया । तूफान, बरसात, ठंड कोई भी बाधा उसे इस शैली से डिगा नहीं पायी ।

मैं उसे आप कहकर ही संबोधित करता था बैंक के लोगों ने कई बार मुझे हिदायत दी कि साहब नौकर-नौकरानी को आप नहीं कहना चाहिये इससे इनके दिमाग खराब हो जाते हैं । लेकिन उसका निश्छल स्वरूप, सुशील हृदय एवं मनमोहक सुंदरता मुझे आप कहकर संबोधित करने को बाध्य करती थी।

अंग्रेजी के नये साल की सुबह थी। पता नहीं

क्यों आज रोज से ज्यादा ठंड लग रही थी, हिम्मत करके दरवाजा खोला, तो देखता ही रह गया । चारों तरफ रुई के समान हिमाच्छादित वातावरण। कारण समझते देर न लगी, एक शांत, श्वेत परिवेश वाला परियों का संसार, जहाँ अंधकार का कोई स्थान नहीं, मेरा कवि हृदय प्रसन्न हो उठा। अचानक घड़ी पर नजर पड़ी, अरे 8-30 बज गये और राधा का कहीं पता नहीं, मन ही मन उसकी इस धृष्टता पर कोध आया खैर किसी तरह तैयार होकर कार्यालय के लिए निकला। सब कुछ सफेद, पेड़, झरने, खाई, चोटियाँ, सब समान भाव से सफेद वस्त्र धारण किये हुए। रूई की तरह धीरे-धीरे बर्फ के रेशे चारों ओर गिरते हुए। एक फुट की दूरी की वस्तु देखना भी असंभव, जल, विद्युत सब स्थगित।

कार्यालय पहुँच कर कैंटीन ब्वाय से कहा आज भई, राधा धोखा दे गई, चाय पिला दो और हो सके तो बिस्कुट मंगवा दो। वह बोला साहब, आपको मालूम रात दस बजे से बर्फ गिर रही है । पूरा बाजार बंद है, आज बैंक जल्दी बंद करवा दीजिये। खैर, चाय उसने पिलवा दी और मैं काम में मशगूल हो गया। दोपहर के दो बजे राधा बैंक आयी खाना साथ लायी थी। बोली कुछ नहीं खाना परोस कर मेरे कक्ष में लगा दिया। मैं कोधित मुद्रा में बोला ले जाओ यहाँ से, कोई जरूरत नहीं । बिना खाये एक दिन में मैं मरने वाला नहीं । शाम का खाना बनाना है तो चाबी ले जाओ वरना रहने दो। तुम लोग 'भरोसे' के मायने क्या जानो। उसने कोई जवाब नहीं दिया और हाथ आगे बढा दिया चाबी के लिए। मैं चाबी देकर अपना काम करने लगा ।

शाम के छः बजे गये थे। हिमपात अभी भी जारी था। घर पहुँचा, तो देखा वह मेरे लिये भोजन परोसे बैठी है । दिन भर की थकान और इस बर्फीली शाम को गरम-गरम खाना, बड़ा ही उपादेय लगा, ऐसा लगा जैसे की युगों की थकान मिट गई। तब ध्यान आया इस ठंड में वह अभी भी बिना खाये पिये बैठी है। मैंने पूछा- 'अरे! आप गई क्यों नहीं, बैठी क्यों हैं वह बोली दोपहर आपने खाना नहीं खाया था इसीलिये सोचा कि आप खाना खा लें तब जाऊं। अब मैं चलती हूँ। अचानक ख्याल आया अरे यह बेचारी अकेली इस घुप अंधेरी बर्फानी रात को घर कैसे जायेगी। मैंने कहा रुकिये, मैं पहुँचा दूँ। बोली, साहब इसकी जरूरत नहीं हम लोगों को तो इन सबकी आदत है। मन नहीं माना टार्च उठाया और उसे पहुँचाने चल पडा। उसका घर तंग पहाडी रास्तों को पार कर ऊपर के बाँस के घने जंगलों के पास था। उस रात को वह घने जंगल और भी भयावह दैत्य की तरह लग रहे थे और मैं मन ही मन इस स्त्री के साहस को नमन कर रहा था।

घर पहुँचा तो देखता क्या हूँ एक छोटी सी सुनसान कुटिया। बच्चे की कोई आहट नहीं। सोचा सो रहा होगा, फिर भी कौतुहलवश पूछ बैठा तुम्हारा बच्चा कहाँ है। वह बोली, इतनी ठंड में चल कर आये हैं थोड़ा बैठ कर सुस्ता लीजिये और वह दिया जलाने अंदर चली गई। दिया जलाकर चुपचाप बैठ गई। मैंने फिर पूछा आपने बताया नहीं बच्चा कहाँ है। बस, वह एकदम फफक-फफक कर रो पड़ी, रुदन ऐसा जैसे नदी को बांध तोड़कर आगे बढ़ने का मौका मिला हो। रोते-रोते बोली आज सुबह वह भगवान के घर चला गया। मेरा हृदय धक से रह गया, यह क्या सुन रहा हूँ, वह आगे बोली-सात दिन से बीमार था कल की बर्फानी रात उसे ले गयी। नितान्त विस्मय भरी आवाज में मैंने कहा कि इतनी बड़ी बात आपको बताना नहीं चाहिए थी। उसने कहा, साहब, उससे बडी बात है भरोसा। यह जरूर है,

आखिरी काम निपटाकर आने में मुझे देर हो गयी। इस जवाब से मेरा रक्त मानों जम सा गया। इतना बड़ा त्याग। बचपन में पढ़ी हुई पन्ना धाय की छवि पटल पर उभर रही थी। मेरे द्वारा दोपहर को उसके साथ किया गया दुर्व्यवहार रह-रह कर मेरे मन को कचोट रहा था और आत्मग्लानि के दलदल में धंसता जा रहा था ! कुछ समझ नहीं पा रहा था, मैं हाथ जोड़ कर, नमन कर, अपने द्वारा किये गये गए दुर्व्यवहार की क्षमायाचना करने लगा । वह बोली आप मेरे को पाप का भागी क्यों बनाते हैं गलती थी तो मेरी ही देर से आने की बिना खबर दिये, पर हाँ भरोसे के मायने जरूर जानती हूँ ।

वास्तव में इस शब्द का शब्दबोध उसी दिन हुआ और इसके मर्म की मेरे मन पर ऐसी अमिट छाप पड़ी कि आज भी इस छवि को अपने व्यक्तित्व में पूर्ण रूपेण उतारने में अक्षम पाता हूँ पर सतत प्रयासरत् अवश्य हूँ ।

यह भरोसा ही तो है जो पारिवारिक बंधन, सामाजिक बंधन, देशकाल के बंधन को अक्षुण्ण बनाये रखता है। चाहे वह गौतम का बुद्ध हो अथवा मानव का अस्तित्व...

एम.एम.बी.आई./191
स्टेट बैंक कॉलोनी
सेक्टर-बी, (निकट राम राम चौराहा)
लखनऊ (उ0प्र0) 226021
मो0 9415167328

समीरान मन्द मन्द चली अनुकूल,
खेलत रसाल संग अति सुखमूल।
उदार चरित तुम तरुवर राज,
तुम्हारे सहाय बली होत ऋतुराज।
मञ्जरी मधुर गन्ध कानन पूरित,
मधु लोभी मधुकर निकर गुञ्जित।
करत मुदित मन नवल सृजन,
तुमसो सुखद और कौन है सृजन,
ग्रीषम निदाध महँ शीतल सुछाया,
भ्रमित पथिक कह देहू मन भाया।
हरित सघन रूप तव निरखत,
पथिक हृदय महँ सुख बरखत।
-जयशंकर प्रसाद

तीन रंग होली के

➲ प्रेमचन्द्र सैनी

तीन रंगों में सराबोर,
होली का त्योहार।
खेतों-खलिहानों में बिखरा
फागों का शृंगार।
दूसरा है अनुराग फाग
उठती रग-रग में उमंग।
नर - नारी बचे न कोई,
ब्रज में होली रंग।
तीसरा जीवन में घुले,
मधुरिम बासन्ती धूप।
घर-घर कोने आँगन में,
उतरता रूप-अनूप।

राग-फाग अनुरागों में
इठलाता मस्त पवन।
हरि संग सब खेलत फाग,
उर झूमें उड़े गगन।
मिले लोग इक दूजे से,
खुशी का जोश अपार।
रंगों की बौछारों में,
है मधुरस व्यवहार।

570/1176, गोपालपुरी,
आलमबाग, लखनऊ-226005
मो0 9305969575

जो विद्या पुस्तक ही में रखी हो, मस्तिष्क में संचित ना की गई हो और जो धन दूसरे के हाथ में चला गया हो, आवश्यकता पड़ने पर न वह विद्या ही काम आ सकती है और न वह धन ही।

परमात्मा को प्राप्त करा देने वाली विद्या ही वास्तव में विद्या है।

-स्वामी विवेकानंद

शांतिनिकेतन के बूढ़े वृक्ष

➲ हेमराज मीणा

शांतिनिकेतन के बूढ़े वृक्ष
गुरुदेव को प्रणाम कर
खाली आकाश की
विशालता को नापते
गंभीर मुद्रा में खड़े
कुछ कह रहे हैं।
इन्हीं वृक्षों ने
सुने थे
गुरुदेव से
गीतांजलि के भाव -गीत
उन्हीं वृक्षों ने देखा था
शांति निकेतन के प्रांगण में
विश्वकवि से मिलने आते हुए
भारत की आत्मा बापू
और माँ कस्तूरबा को ।
इन्हीं वृक्षों की
स्मृतियों में
इतिहास बसा है
बूढ़ी टहनियों में
बसंत का अनुराग पला है।
ये वृक्ष नहीं
ऋषि हैं
ऋचाएँ रचते
मुनि-जन हैं,
ये धरती माँ की शोभा हैं
हर पल देते हैं उपहार
यज्ञ की समिधा हैं।
ये विश्वकवि का
पा चुके स्पर्श
ये तपोभूमि के रक्षक, ज्ञान भूमि के अलंकरण
विश्व मानवता की
पवित्र धरा के आभूषण हैं।

हिन्दी संस्थान नगर, हिन्दी संस्थान मार्ग
आगरा- 282005

सोने जा रहा हूँ

➲ अवधेश कुमार

मैं सोने जा रहा हूँ
जब मेरा वक्त आये
आहिस्ता से मुझे उठा देना।
शोर जिन्दगी का हिस्सा है
कल कारखाने जब चलते थे
तब इनसे निकलती थी
रसोई के बर्तनों की ध्वनि
रोटी को सेक रहे चिमटे की आवाज
बटलोई में चावल दाल पकने की फुदकन
खेल रहे बच्चों की
बतियाते बुजुर्गों की चहल कदमी
अब तो ये पिघलाते हैं
कानों में शीशा
कदापि इस शोर को
मेरे बिस्तर तक
अब दखल न देने देना
मैं सोने जा रहा हूँ
जब मेरा वक्त आये
आहिस्ता से मुझे उठा देना ।

और ये हवा जिसे
प्रदूषित किया है
हमारी सुविधाओं ने
हमारी बेमानी
आकांक्षाओ ने
रोज-रोज बदलने वाले
हममें से ही आगे निकलने वाले
घोषित रहनुमा की
शक्ल वाले आकाओं ने
अब इसे भी मेरे शयन में
कभी भी घुसने न देना
मैं सोने जा रहा हूँ
जब मेरा वक्त आये
आहिस्ता से मुझे उठा देना ।
किसी को नहीं जचां
मुझे ख्वाब में होने का
सपने खुद बुन सकूँ
कभी भी मुझे न मिला
इतना वक्त सोने का,

मुझे ख्वाबों को देखना है
मुझे सपनो को बुनना है
अपने मन को जिंदा
रखने के लिए
इसमें बसाना है
स्थाई न मिटने,
न बिगड़ने वाले ख़्वाब
कितना मीठा होता होगा
मायूस आँखों में
ख्वाबों का बसेरा
शायद माँ की गोद सा,
पिता की उन हथेलियों सा
जो मेरे सिर पर हुआ करती थीं
या मुझे देख कर
गाँव की उस पड़ोसी
लजाती लड़की की
मुस्कान के मानिंद
और कुछ नहीं
इतना तो कर सकोगे
मुझे ख्वाबों को देखने देना
गाफिल होने पर
मुझे मत जगा देना
मैं सोने जा रहा हूँ
जब मेरा वक्त आये
आहिस्ता से मुझे उठा देना।

फ्लैट एस.-9, प्लॉट-118,
सेक्टर-4, वैशाली, गाजियाबाद-201010
मो0 9450213555

अतिथि की भाँति दीन, दुखी, पीड़ित, रोगी इत्यादि की सेवा करना भी समाज-पूजा का एक अंग है। दरिद्रनारायण भी एक महान देवता है। उनका हम पर वह उपकार है, जिसका कभी बदला नहीं चुकाया जा सकता

- आ0 विनोवा भावे

वादों का विहान

➲ प्रदीप बहराइची

दिन का चढ़ना फिर ढल जाना
सूरज की तपिश, फिर मध्यम होना
यह प्रक्रिया अनंतकाल से है
और रहेगी भी
जीवन की प्रवृत्ति भी
चलती रहती है इसी तरह
आज को कल पर
कल को परसों पर थोपते-थोपते
आ ही जाती है जीवन की सांझ।
इस सत्य से परिचित
चलता है अनिश्चित जीवन;
क्षण भंगुरता के बाद भी
वर्षों के वादों का नया विहान
रोज उगता है जीवन में ।

तपती धूप

अब बैसाख की हवा भी
गरम हो रही है दिन-ब-दिन
सिकुड़ रहे हैं
पानी से भरे तालाब
जेठ आते-आते
फटने लगी तालाबों की छातियाँ
और धूल ने पकड़ ली रफ्तार ।
अब तप रहा है सूरज
घट रही हरियाली
बढ़ रही है प्यास
कम हो रहा पानी।
कंक्रीट के जंगलों ने
छीन ली है छाँव
अब तो अनंत छोर तक
फैली है सनसनाती हवा
जिसका ताप थम नहीं रहा।

जीवन का बोध होता है

जीवन का बोध होता है !
गिरता हूँ जब
अपनी ठोकरों से,
शर्मसार होता हूँ जब
अपने कृत्यों से ।
व्यंग्य सहता हूँ जब
आश्रितों से ।
दर्द उभरता है जब
जख्मों से ।
छला जाता हूँ जब
विश्वस्तों से ।
रोक नहीं पाता जब
आती हुई छाया को
जो दबोच लेती है मुझे
और रह जाता हूँ मैं।
निस्तेज, निष्प्राण

ग्रा0-बड़कागाँव, पयागपुर, जि0 बहराइच (उ0प्र0) 271871
मो0 8931015684

बादल का उपकार

➲ डॉ0 रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर'

बंजर थी उर्वर हुई, बदला रूपाकार।
भुला दिया मरूभूमि ने, बादल का उपकार ।।
यक्ष रामगिरि पर खड़ा, ताके घन की राह ।
उसे भेजनी प्रिया को, आँसू डूबी चाह । ।
सारे बादल कर रहे, पक्षपात समवेत ।
सींच रहे हैं वक्त पर, राजा जी का खेत । ।
बादल भैया उड़ त्वरित, जा प्रियतम के देश ।
कहना अब आ जाय हैं, कुछ ही साँसें शेष । ।
सीमा पर भैया डटा, दृढ़ साहस के साथ !
राखी ने शुभ कामना, भेंजी घन के हाथ।।
पावस में झेले सदा, विरही मन संत्रास ।
घन शंपा से लिपटकर करता है उपहास ।.।
सागर का जल विरहियों, के सुख का है चोर ।
गरज - तरज फिर भी रहा, बादल सीनाजोर । ।
आँखें बरसीं रात भर, पावस-घन के साथ ।
बहुत याद आते रहे, विवश समर्पित हाथ ।।
कुछ आकृतियाँ देखकर होता ऐसा भान।
सूखे बादल आँख में, मन में रेगिस्तान ।।
सूखे हरियल खेत क्यों?, उफन रहा क्यों ताल ? ।
बादल से पूछें चलो, हम सबका यही सवाल ।।
मौसम पर चलता नहीं, भ्रष्टाचारी दाँव ।
वरना घन बस कहीं-कहीं ही करते छाँव।।

86 तिलक नगर, बाईपास रोड, फीरोजाबाद-283203
मो0- 09412316779

दृढ़ता बड़ी प्रबल शक्ति है पुरुष के सर्वे गुना की रानी है।
दृढ़ता वीरता का एक प्रधान अंग है।

दृढ़ता प्रेम मंदिर की पहली सीढ़ी है।
-प्रेमचंद

हमारा घर

➲ राधेश्याम शुक्ल

दादी के आँचल भर का विस्तार
हमारा घर,
दादा के आशीषों का उपहार
हमारा घर,
माँ ने कितने कुंभ नहाए
पर्व मनाए हैं,
आर-पार गंगा मइया को
फूल चढ़ाए हैं।
मानी हैं कितनी मनौतियाँ,
कल्पवास करके
घर की खातिर बहुत तपी है माँ
उपवास करके
पेट-पीठ की कटौतियों का,
सार हमारा घर।
बाबू जी के
खून-पसीने से उपजा फल है,
यह अतीत यह वर्तमान
आने वाला कल है।
शादी-ब्याह देशाटन
कजरी फगुवा सोहर है,
घनी धूप में सधन छाँव की
एक धरोहर है।
रिश्तों के संबोधन का
संसार हमारा घर।

सिन्दूरी सुबहें,
संध्यायें, सदा सुहागिन हैं,
ननद भाभियों
चुहलबाजियों के पलायन है।
भरी व्यंजना बोली-बानी,
क्या उपमाएँ हैं,
काव्यशास्त्र के पंडित
सुनकर गच्चा खाये हैं।
छोटी-छोटी जेबों का
त्योहार हमारा घर।
लेकिन ठहरो,
देख रहे हो बिखर रहा है घर;
जाने किसकी नजर लगी
यह उजड़ रहा है घर।
आँगन की तुलसी सूखी
मटमैला गंगाजल
संतति निर्मम हुई
रो रहा अम्माँ का आँचल।
पानी मरा,
बना मछली बाजार हमारा घर।
दादी के आँचल भर का विस्तार
हमारा घर।

392 एम0जी0ए0 हिसार-125001 (हरियाणा)
मो0- 9466640106

पालटा बाघ

➲ मूलः डॉ0 दाशरथि भूयाँ

''वाह-वाह कैसा मजा, भालू नाचता है बजा के बाजा।'' सरकस की बात याद आते ही मैं बेचैन होकर दौड़ी, इन्दु के घर की ओर । काफी साल बाद शहर में सरकस आया था। मैंने कभी सरकस देखा नहीं था। इन्दु ने कहा था कि किसी छुट्टी के दिन आने पर मिल कर सरकस देखने चलेगी। जब मैं इन्दु के घर पहुँची उस समय वह घर में नहीं थी । पिछवाड़े के बरामदे में धूप लेते हुए मौसाजी अखबार पढ़ रहे थे ।

'आप सरकस देखने जा रहे हैं ? इन्दु कहाँ है?'' मैंने मौसाजी से पूछा ।

सरकस देखने जाने के लिए मेरे इस तरह के उतावलेपन और बेचैनी को देखकर मौसाजी तनिक मुस्कराए। अखबार को सोफा पर रख कर कहा ''सरकस देखने जाना है न ! इन्दु के आने तक इंतजार कर ।''

'मैंने पूछा, इन्दु कहाँ गयी है ?''

'वह गणित समझने के लिए सर के पास गयी है ।''

मौसाजी की एकलौती लाड़ली बेटी इन्दु और मैं दसवीं कक्षा के सेक्सन ''ए'' में पढ़ रही थीं। एक ही बेंच में बैठती थीं । हम दोनों की आन्तरिकता को देख कर संस्कृत के सर हमें मजाक में कहते, उलुपि-सुलुपि।

मैं फर्श पर बैठ गयी और अखबार का एक पन्ना लेकर पलटने लगी। उसमें सरकस का जो विज्ञापन निकला था, उसे पढ़ने लगी। कागज का बाघ किस तरह दहाड़ते हुए भयंकर दिख रहा था बाघ की बगल में बिना सूँड़ का हाथी जैसा एक जानवर था। मैंने मौसाजी से पूछा यह क्या है। मौसाजी ने समझा दिया कि वह हिप्पोपोटामस है । अफ्रीका के जाम्बेजा नदी में ये ज्यादा तादात में दिखाई पड़ते हैं। हम उन्हें ओड़िसा में जलहस्ती कहते हैं । अचानक मौसाजी की नजर मुझ पर टिक गयी । तिरछी नजर से मुझे निहारते उन्होंने मुझे कहा कि तू इतनी अपरिष्कार क्यों दिख रही है ? तेरी माँ क्या तेरे कपड़े-लत्ते साफ करती नहीं है ? सिर में तेल क्यों नहीं लगाती है ? क्या होटल के काम से फुरसत नहीं मिलती है?

मौसाजी एक जमींदार हैं। अपने इलाके में राजनीति करते थे । गाँव में ढ़ेर सारी जमीन-जायदाद भी है। सिर्फ इन्दु को पढ़ाने के लिए शहर में बनवाये गये मकान में आकर रह रहे हैं। मौसाजी खुद अपने हाथों से रसोई बनाते हैं। इन्दु के मैले कपड़े-लत्ते भी साफ कर देते हैं । इस शहर में हाईस्कूल में एडमिशन होने के दिन ही इन्दु से मुलाकात हुई थी। इन्दु के पैदा होने के बाद

उसकी माँ बीमार पड़ी और गुजर गयीं । मातृहीन इन्दु के प्रति मुझमें सहानुभूति जगी थी एक दिन मैं उनके घर गयी थी । पहली मुलाकात में ही मौसाजी ने मुझे खूब स्नेह दिया था। उसी दिन से मेरा मौसाजी के घर आना-जाना चलता रहा। मौसाजी को जब हमारे घर की कमजोर आर्थिक स्थिति का पता चला, तब उन्होंने मेरी पढ़ाई में सहायता की। इन्दु और मैं एक ही ट्यूशन सर से कोचिंग लेती हैं। जिस महीने ट्यूशन के पैसे देने में पिताजी असमर्थ होते थे, मौसाजी देते थे । गणेशजी की पूजा या दशहरे के त्योहार में इन्दु के लिए मौसाजी जो ड्रेस खरीदते थे, उसमें से एक जोड़ी मुझे उपहार में देते थे । हमारे घर में मौसाजी की बात जब भी छिड़ती है, सभी उनकी तारीफ करते हैं उनकी तारीफ सुनकर सब से ज्यादा खुशी मुझे होती है ।

मेरा सारा कुर्ता मैला हो गया है कहकर मौसाजी जब मेरे कुर्ते को सूँघने लगे, तब मैं बहुत डर गयी । मेरा बदन पसीने से लथपथ हो गया । मैं सोच रही थी कि मौसाजी मेरे कुर्ते को सूंघ कर करेंगे क्या ? हो सकता है कि जोर से एक चाँटा मार कर साफ-सफाई के साथ रहने की ताकीद करेंगे उसी भय से मैं काँपने लगी।

मौसाजी ने मुझ पर न गुस्सा किया न गाल पर चांटा मारा। उल्टा मेरी पीठ और गाल को सहला दिया। मेरे सिर के बालों पर हाथ फेरा। मुझे लगा कि मेरे तमाम बदन पर कोई बिच्छू घूम-फिर रहा है। मेरे सारे अंग थर-थर काँप रहे थे। मौसाजी मुझे खींच कर ले गये और मुझे गोद में बैठा लिया डर के मारे मेरी आँखें अपने आप बंद हो गयीं ।

मैं मौसाजी के चेहरे को देखने की कोशिश कर रही थी, पर देख नहीं पा रही थी । क्योंकि मेरी आँखें खुल नहीं रही थीं। बन्द आँखों से ही मैंने अनुभव किया कि मैं हमारे गाँव के रमेश की गोद में लेटी हुई हूँ । हमारा गाँव बहुत ही घने जंगल के बीच में है। गाँव की पश्चिम दिशा में एक छोटा-सा झरना बह रहा है। झरने के किनारे शहर की तरफ एक काली माता का मन्दिर है। काली मंदिर की बगल में हमारा स्कूल था, जिसके दरवाजों में बाँस की टट्टियाँ लगी रहती । छुट्टियों के दिन तपती दोपहर में हम लोग दौड़ते हुए जाते थे झरने के किनारे जो जिसे पहले देखता था, उसे स्टैच्यू कह देता था स्टैच्यू सुनते ही तनिक भी हिलने से उसकी पीठ पर मुक्के दस बार मारने का नियम था । हम बच्चों की टोली में रमेश सब से हट्टा-कट्टा था । रमेश की उम्र की तुलना में उसकी शारीरिक अभिवृद्धि ज्यादा थी । उसकी उस चौड़ी छाती और शक्तिशाली दोनों भुजाओं को देखकर सबसे ज्यादा मैं डरती थी। कहीं वह मुझे पहले स्टैच्यू न कह दे, इसलिए मैं उसे देखते ही स्टैच्यू कह देती थी। मेरा निर्देश न मिलने तक वह उसी तरह स्टैच्यू बनकर खड़ा रहता था। इससे छुटकारा पाने के लिए वह मुझे जंगली बेर और इमली लाकर देने का प्रलोभन दिखाता था फिर मैं उसे स्टैच्यू बनने से मुक्त कर देती थी। वह फौरन गायब हो जाता था घने जंगल में । उसे किसी भूतप्रेत या जंगली जानवरों का भय नहीं था । कैथा, बेल, जंगली बेर आदि जो कुछ मिलता था, उसे अपने पतलून और कमीज की जेब में भरकर लाता था । फिर हम सब काली मंदिर के पक्के मकान में जाकर घरौंदा बनाकर खेलते थे। सबकी सहमति से हमारे घरौदे के खेल का पिता बनता था रमेश । उससे बेर खाने की आशा से हम में माँ बनने की प्रतियोगिता प्रारंभ हो जाती थी । लेकिन चूँकि लिली हम सबमें सुन्दर थी और बड़ी थी, रमेश उसे ही माँ बनने का मौका देता था। बाकी हम सब बहन,

बेटी या कोई और भूमिका पाकर संतुष्ट हो जाते थे। फिर हम साल के पत्तों को इकट्ठा करके झूठ-मूठ की दावत के लिए रसोई बनाते थे । रमेश झूठ-मूठ में खेत में हल चलाने तथा लकड़ी इकट्ठा करने के लिए जाता था। लौटते समय वह सूखी टहनियों का एक गट्ठा लेकर आता था । घरौंदे की दावत खाकर हम सब सोने के लिए जाते थे । कुछ मंदिर के बरामदे में तो कुछ आम के पेड़ों की ओट में छिपकर सोने का अभिनय करते थे। मैं छिपने के लिए टट्टी के दरवाजे वाले स्कूल में जाती थी । रमेश सबको धमकाते हुए कहता था कि जब झूठ-मूठ की सुबह होगी, तब वह सभी को जगाएगा । यदि पहले कोई जाग गया तो उसकी पीठ पर घूँसे लगाये जाएँगे । इसलिए मार खाने के डर से रमेश के न बुलाने तक हम छिपे रहते थे ।

हमारा यह झूठ-मूठ का खेल एक दिन सचमुच के खेल में बदल गया था इस कुतूहल को लेकर मैं बाँस की टट्टी की दरार से देख रही थी कि रमेश और लिली क्या कर रहे हैं । मैंने जो कुछ देखा, डर के मारे मेरी आँखें बन्द हो गयीं।

मुझे लगा कि रमेश लिली पर सवार है और उसकी हत्या कर रहा है । मैं फौरन मन्दिर के अन्दर जाकर शिवजी की छाती पर खड़ी काली माता से हाथ जोड़ कर मिन्नत करने लगी- ''हे माँ, लिली को बचा लो।''

जब मैं मन्दिर से बाहर निकली तब झूठ-मूठ का सवेरा हो चुका था जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि लिली मरी नहीं है । बल्कि लिली काफी खुश नजर आ रही है । लौटते समय मैंने लिली से पूछा - तुम दोनों कौन-सा खेल, खेल रहे थे ?

उसने उत्तर दिया- ''पहले माँ और पिताजी का खेल खेला, फिर वे शिव बाबा बने थे और मैं काली माता बनी थी ।''

मैंने उनके शिव बाबा और काली माता के खेल को लिली की माँ को बता दिया था । इसलिए लिली को उसकी माँ ने खूब पीटा था । उसके अगले दिन हम जितने बच्चे थे, सभी झरना के किनारे वाले मन्दिर के पास गये थे, सभी को एक ही बात कहकर डरा दिया गया था कि बगल वाले गाँव के धिड़या माझी की औरत गगरी भर मंत्रित हल्दी लेकर जंगल में घूम रही है । जिस दिन वह पालटा बाघ को देखेगी उस दिन वह उसके ऊपर मंत्रित हल्दी फेंक देगी । उससे फौरन वह बाघ फिर से धिड़या माझी में तबदील हो जाएगा ।

उसके अगले दिन से पालटा बाघ के डर के कारण हम लोगों के घरौदे का खेल बन्द हो गया। सातवीं कक्षा पास होने के बाद आगे की पढ़ाई न करने की अनिश्चितता में रही । गरमी की छुट्टियों में पिताजी घर से शहर को लौटे। पिताजी ठेला छोड़कर नाश्ते का होटल खोलने के कारण हम सपरिवार शहर में आ गये ।
मौसाजी की गोद में मैं आँखे बन्द करके बैठी रही । मौसाजी ने कहा कि इतनी शरमा क्यों रही है? मेरे लिए इन्दु जैसी है, तू भी वैसी है । तू जहाँ चाहेगी मैं तुम्हें ले जाऊँगा । सरकस कौन - सी बड़ी बात है ? मैं तुझे पी. सी. सरकार जूनियर के चमत्कार जादू का खेल दिखाने ले जाऊँगा । वह तुम्हे स्वर्गलोक की ओर उड़ाकर ले जाएगा । तू वहाँ ढ़ेर सारे चमत्कार से भरे हुए खेल देखेगी। जाएगी ? मेरे साथ चलेगी ? च... ले....गी...?

मैं चीखते हुए कह रही थी कि नहीं जाऊँगी.... नहीं जाऊँगी, लेकिन मेरे गले से कोई आवाज बाहर निकल नहीं रही थी । उस पल मैं क्रोध, आतंक, पीड़ा, ग्लानि और घृणा से जल रही थी । अब जीवन को जैसे

भी हो बचाना होगा । मुझे नहीं पता था कि आदमी किस तरह बेहोश हो जाता है। फिर भी मैंने बेहोश होने का नाटक किया और नीचे गिर पड़ी । सँ.... सँ.... की आवाज के साथ मौसाजी के दोनों नथुनों से साँस निकल रही थी । गाँव के धिड़आ माझी के बाघ में तबदील हो जाने की तरह मौसाजी भी पालटा बाघ में तबदील हो गये थे ।

पालटा बाघ शिकारी को दबोच कर दहाड़ मार रहा था। अब पालटा बाघ शिकार पर सवार होकर हमारे गाँव के रमेश द्वारा लिली की हत्या किये जाने की तरह हत्या करने लगेगा। उस भय से मेरे शरीर का सबकुछ ठण्डा पड़ता जा रहा था। अचानक इन्दु के आने की पद चाप को सुनकर मौसाजी मुझे होश में लाने की कोशिश कर रहे थे। इन्दु के पहुँचते ही मैं होश में आकर खड़ी हो गयी बिना मंत्रित जल के पालटा बाघ फिर से पल भर में इंसान में तबदील हो गया था, जिसे देख कर मैं आश्वस्त हो उठी थी ।

भावानुवाद

डॉ0 भगवान त्रिपाठी
सी-33, नन्दीघोष हाउसिंग कॉम्प्लेक्स सरधाबाली लेन-3
खोडसिनी, ब्रह्मपुर- 10 जिला- गंजाम 760007 (ओड़िशा)
मो0- 09437037485

डॉ0 दाशरथि भूयाँ
प्राध्यापक, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
ब्रह्मपुर विश्वविद्यालय, ब्रह्मपुर- 760007 गंजाम, ओड़िशा
मो0- 7008132134

कौन तुम शुभ्र किरण-वसना?
सीखा केवल हँसना-केवल हँसना-
शुभ्र-किरण-वसना!
मन्द मलय भर अंक-गन्ध मृदु
बादल अलकावलि कुंजित-ऋजु
तारक हार, चन्द्र मुख, मधु ऋतु
सुकृत पुंज-अशना।
नहीं लाज भय नृत अनय, दुख
लहराता उर मधुर प्रणय-सुख
अनायास ही ज्योतिर्मय-मुख
स्नेह-पाश कसना।
चंचल कैसे रूप - गर्व - बल
तरल सदा बहती कल-कल-कल
रूप राशि में टलमल-टलमल
कुन्द-धवल दशना।
-सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

नन्हा तारा

मूलः अपर्णा महान्ति

अँधेरे में भटकती
मेरी रुआँसी सूरत को देख
नन्हा-सा एक तारा
उतरने की तैयारी में था
सुदूर आकाश से... ।
धवल उज्ज्वल वह तारा
हू-ब-हू मेरी माँ जैसा चेहरा ।
अचानक दिख गया तो
मैंने उसे रोक लिया
इशारे से ... ।
मैं जानती थी
वह समझ जाएगा
मेरे मन की बातों को।
आँखें मूंद कर मैंने
मिन्नतें कीं, जा-जा लौट जा
क्या यहाँ पल भर भी
जी पाएगा तारा कोई
तेरे जैसा।
इतनी निर्मल शुभ्रता लिए
आत्मा और हृदय में
कैसे यहाँ
चल फिर पाएगा तू?

ये देख
कैसे गरज रहा अहंकार
स्मृतियों की आड़ में
धन और रुतवे के बाजार में
स्वार्थ जहाँ दलाली कर रहा हो
वहाँ तो सत्य और प्रेम का
उपचार ही व्यर्थ है ।
जा-जा लौट जा
दिशा-दिखाने वाले मेरे नन्हें तारे!
मैं सह नहीं पाऊँगी
जब आकार विहीन
शुद्ध उजाले में तुझ पर
कालिख पोत कर
वे बैठा देंगे झिलमिलाते
छलावे के मंच पर
और बखान करेंगे
देखो, देखो
पहचानो हमारे इस महान पूर्वज को
जिसके उजाले से हम
आज इतना
जगमगा रें हैं।

देवी की देह

मिट्टी को आँसुओं से रौंद
उसमें मिला दिये
रूह और आग
फिर बनने लगी देवी की मूर्ति,
अब मुझे जादू दिखाना है
पीड़ा का ।
बिछिया, पायल और
आलते के रंग से
पाँवों को बनाऊँगी ऐसे
जो लाँघ नहीं पाएगी
शास्त्र-नीति-नियमों से
बँधी अपनी देह को ।
कंगनों से रुनझुन
हाथों को ऐसे बनाऊँगी
जो खेल नहीं पाएगी
दासता की सोने की जंजीर से।
झुकी हुई आँखों में
भर दूँगी भरपूर अंधापन
ताकि वह देखती रहे रात भर
आत्ममे के सपने।
सिंदूर से सजे माथे को
बना दूँगी पत्थर-सा
नीचे जिसके दबा कर
वह रखेगी अपने भाग्य को ।
अहा, अब युगों से बंद पड़े
तीसरे नेत्र की
एक कतरा चिंगारी को
कहाँ जोड़ें
इस देवी प्रतिमा में?
आरती की बेला में ही
देवी की निष्प्राण देह
पड़ी है शमशान में।

देखना पल भर में किस तरह

मुँह में नहीं
रखो आत्मा में,
ताकि सुरक्षित रहे नारी।
प्राप्ति में नहीं,
रखो प्रीत में,
ताकि आह्लादित रहे नारी ।
प्रणय में नहीं,
रखो पुण्य में,
ताकि उत्तरित रहे नारी ।
बात बस इतनी सी,
सुरक्षा, आह्लाद और
उत्तरण में ही छुपा है
हिंसा- आतंक से मुक्त
एक स्नेह-प्रेम-करुणा का
विशाल संसार ।
उसी की प्रतीक्षा में हैं
महामानवों को
जन्म देने वाली करोड़ों कोख,
है एक स्वस्थ, सुंदर, विकसित
भविष्य,
हैं ममता से भरे
करोड़ों हृदय की तस्वीरें ।
एक बार तो
नारी की देह को
उपभोग की जंजीर से
खोल कर
उपासना में रखो।
देखना
पल भर में किस तरह
आधे विश्व में

प्रेम के मंदिर
बनने लगे हैं।

धुआँ

कहाँ क्या पकता
पता नहीं,
धुआँ रोज उठता
आकाश की ओर।
धुएँ के साथ तैर रही होतीं
धरती की लंबी आहें,
आँसू, पसीने, रक्त, रज और
पीड़ा की गंध।
अखबार सारे काले पड़ जाते ।
कभी किसी की आँखों से
टपकने लगता पानी
तो किसी की बढ जाती भूख।
सुबह का धुआँ
शाम तक खो जाता शून्य में।
अँधेरा गहराते ही
फिर भूख,
जले हुए मांस की गंध
फिर से फैल जाती
लंबी-लंबी हिंस्र साँसों में।
रात भर नोच-नोच कर खाया हुआ
अवशेष, कोई काँटा,
कोई कंकाल, अधखाई देह कोई
पड़ी होती सड़क के किनारे,
या जंगल में, नदी के पठार पर,
होटल के कमरे या बिस्तर पर
धीरे-धीरे मलीन पड़ रहे
तारों की छाँव में।
पौ फटते ही करोड़ों
मरी, अधमरी देहों में से
धरती निकल आती आहिस्ते से।
प्रेम का चूल्हा जलाती
क्षमा की चाय बनाती
ममता का खाना पकाती ।
दिन भर
सबकी मधुर सुगंध
धुएँ में तैर रही होती।
धुएँ का शगूफा बनकर
चारों ओर चल रही होती
उसकी सुरक्षा की चर्चा ।
एक मासूम भविष्य
सो जाता सुरक्षित
उसकी
आहत ऊष्म गोद में।

स्वप्न देखने वाले

कहाँ हैं वे
स्वप्न देखने वाले?
सारी वसुधा कुटुंब हो जाए
समय पर बरसात हो
धरा हो शस्यशालिनी
बनी रहे शालीनता
सभी की दृष्टि में,
जीवन सरल,
सोच ऊँची हो ।
ऐसे ही स्वप्न देखने वाले
जो किसी लालच से
झूके नहीं किसी के भी आगे
और कटवा ली गरदनें,
आज कहाँ है वे?
धरती पर फिर से उतरने को तैयार
कुछ नन्हें तारे.
खिल रहीं

कुछ अल्हड़ कलियाँ,
तिनकों के घोंसले में
पहली बार चोंच खोल रहे
चिड़ियों के बच्चे,
सारे आज ढूँढ रहे
स्वप्न तलाशती
उन उजली आँखों को,
कल्याण और करुणा से रोशन
जिन आँखों से बहती हो
प्रेम और विश्वास की धारा,
जिन आँखों में
बसी हो मृत्यु को अमृतमय
बनाने की अगन,
जिन आँखों को निहार कर
कोंपल से उग रहे
अबोध कोमल हृदय में
जख्मी, लहूलुहान, दुष्कर्म का
भय न जगता हो,
बल्कि खिंचे चले जाएँ वे
चुंबक-से
पास उनके।
जिस दिन मिलेंगे
वे स्वप्न देखने वाले
शायद उसी दिन रुक जाएगा
धरती के मुँह से
खून का रिसना,
दौड़ जाएगी एक सिहरन
उसके खेतों, खलिहानों में,
नदियों में, वनों में,
जब वह करवट ले रही होगी
स्वप्न देखते हुए।

भावा : राधू मिश्र
303 पर्ल हइट्स पानपोष, राउरकेला-769004
ओड़िशा - मो0- 9178549549

अपर्णा महांति
कपालेश्वर, वाया ठाकुरपाटना,
जि0 केन्द्रापड़ा - 754250
मो0- 9437128316

सम्पत्ति भरम गँवाई के,
हाथ रहत कछु नाहिं।
ज्यों रहीम ससि रहत है,
दिवस अकासहिं माहि।
-रहीम

भोजपुरी के लोकप्रिय लोकगीत

➲ डॉ0 अनिल कुमार विश्वकर्मा

अन्तरमन के सहज उद्‌गार जब भावावेश में कण्ठ से निःसृत होते हैं तो वे गीत बन जाते हैं। किसी भी देश की संस्कृति उन गीतों के द्वारा समझी जाती है जिसकी आधार भूमि लोक साहित्य रहता है। लोकगीतों में देश व समाज के लोगों के उद्‌गार व्यक्त होते हैं। जीवन के सभी पक्षों का चित्रण बड़ी सरलता के साथ लोकगीतों द्वारा होता है । इस दृष्टि से भोजपुरी लोकगीत अपनी एक अनूठी छाप रखते हैं । यहाँ के लोकगीतों में एक कथानक अवश्य रहता है, जिसके द्वारा गीत की गत्यात्मकता व संगीतात्मकता पूर्णरूपेण पाठकों व श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत होती है ।

गीत-संगीत व्यथित एवं थके हुए मन को अपने स्वर माधुर्य द्वारा पुनः आह्लादित, उत्साहित एवं स्फूर्तिजन्य बनाने के साधन हैं। सभ्य-असभ्य, जड़-चेतन सभी गीत-संगीत की मधुरिमा से आप्यायित हैं। मन के सहज उद्‌गार जब भावावेश में कण्ठ से निःसृत होते हैं तो वे गीत बन जाते हैं। भारतवर्ष संस्कार संपृक्त मिश्रित संस्कृतियों का देश है। यहाँ पर प्रत्येक हर्षोल्लास के अवसर पर गीत-संगीत का आयोजन बड़े मनोयोग किया जाता है। भारत मूलतः गाँवों का देश है। यहाँ की 70 प्रतिशत आबादी आज भी गाँवों में निवास करती है। जो 21वीं सदी में भी अपनी सांस्कृतिक विरासत 'लोक साहित्य' को सहेजे हुए है। भोजपुरी लोक साहित्य की दृष्टि से सर्वाधिक चर्चित एवं समृद्ध भाषा है।

मागधी अपभ्रंश से 'बिहारी' भाषा का विकास हुआ है। पूर्वी बिहारी और पश्चिमी बिहारी भाषा इसके दो रूप हैं। पूर्वी बिहारी की दो उप बोलियाँ हैं- मगही और मैथिली तथा पश्चिमी बिहारी की उपबोली- भोजपुरी है। आधुनिक भोजपुरी बिहार के शाहाबाद जिले का एक परगना है। जहाँ भोजपुर के नाम पर 'बड़का भोजपुर' और 'छोटका भोजपुर' नामक दो गाँव स्थित हैं। जनश्रुतियों के आधार पर भोजपुर ('मल्ल' जनपद की राजधानी थी और महाराजा भोज के वंशजों ने बसाया था। पटना गजेटियर्स के अनुसार 'भोजपुरिया' शब्द का प्रयोग भाषा के रूप में सर्वप्रथम सन् 1789 में किया गया। इसके पश्चात 'भोजपुरी' शब्द का प्रयोग सन् 1868 ई0 में जान बीम्स ने रायल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल भाग- 3, पृष्ठ-485-508 में अपने भोजपुरी बोली पर संक्षिप्त टिप्पणी शीर्षक लेख में किया। भोजपुरी की व्याप्ति बिहार, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, मध्य प्रदेश के अलावा नेपाल, मॉरीशस, फिजी, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनीदाद, बर्मा, केन्या आदि देशों तक है।

किसी देश की संस्कृति को समझने के लिए वहाँ के लोक साहित्य से होकर गुजरना होगा तथा वहाँ के लोक साहित्य का अध्ययन अपरिहार्य है। मानव सभ्यता के विकास के साथ ही साथ लोकगीतों का भी क्रमिक विकास हुआ है। लोकगीत उस देश, समाज व स्थान के लोगों के हृदय का उद्‌गार होते हैं। लोक गीतों में लोक- जीवन के सभी पक्षों का चित्रण बड़ी सहजता के साथ हुआ है। भारत विभिन्न धर्मों, भाषाओं एवं संस्कृतियों का देश है। सबके अलग-अलग पर्व व त्योहार हैं। प्रत्येक धर्म व समुदाय के लोगों के अपने - अपने लोकगीत हैं। इन गीतों के रचनाकार का नाम और समय अज्ञात है। ये श्रुति परम्परा से पीढ़ी दर पीढ़ी लोक में अपना स्थान बनाये हुए हैं।

लोक गीतों की परम्परा में भोजपुरी लोकगीत सर्वोपरि हैं। अपनी सहजता, सरलता और बोधगम्यता के कारण ही यह विश्वव्यापी हो सकी है। भोजपुरी लोक गीतों में जीवन के सभी पक्षों का चित्रण बड़ी मार्मिकता के साथ किया गया है। पूर्वांचल में छठीं (बच्चे के छह दिन पूरे होने पर) के दिन गाये जाने वाले एक गीत (सोहर) में सामन्ती व्यवस्था पर चोटे करते हुए गीतकार ने बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। लोकगीतों के पीछे एक कथानक होता है। जिसे गीतों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है । प्रस्तुत लोकगीत में हिरन और हिरनी आपस में संवाद करते हैं, कि हिरनी, आज तू उदास क्यों है? क्या तेरा चारागाह सूख गया है? या पीने का पानी नहीं मिल रहा है। तो वह दुःखी होकर कहती है कि मुझे ऐसा कोई दुःख नहीं है, किन्तु कल राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र की छठी है जिसमें भोज के लिए तुम्हारा वध कर दिया जायेगा । लोकगीतकार ने हिरनी के माध्यम से करुण वेदना का मार्मिक चित्रण किया है -

छापक पेड़ छिउलिया त पतवन धन बन हो,
ताहि तर ठाढ़ हरिनवा त हरिनी से पूछे ले हो,
चरत ही चरत हरिनवा त हरिनी से पूछे ले हो,
हरिनी ! की तो चरहा झुराने कि पानी बिनु मुरझेलू हो,
नाहीं मोर चरहा झुराने ना पानी बिनु मुरझीं ले हो,
हरिना आजु राजा के छठिहार तोहे मारि डरिहैं हो,

छठी-भोज के लिए हिरन मार दिया जाता है । हिरनी सोचती है कि छोटे-छोटे बच्चे बिना पिता के कैसे जीवित रहेंगें तो वह बच्चों को दिलासा देने के लिए एक उपाय सोचती है कि हिरन का माँस तो रसोई के काम आ गया, किन्तु यदि खाल मुझे मिल जाये तो मैं उसमें भूसा भरके दरवाजे पर रख दूँगी ताकि बच्चे अपने पिता की प्रतिमा को देखकर संतुष्ट हो सकें। इसी उद्देश्य से वह रानी कौशल्या के पास खाल माँगने जाती है लेकिन कौशल्या खाल देने से मना कर देती हैं और कहती हैं कि मैं इस खाल से खंझड़ी बनवाउंगी जिससे रामचन्द्र खेलेंगे। हिरनी निराश और दुःखी मन से लौट आती है। राजमहल में जब-जब खंझड़ी बजती है तो हिरनी बेसुध होकर उसे सुनती है और प्रिय हिरन के वियोग में उसके आँखों से आँसू बहने लगते हैं

मचियहीं बइठली कोसिला रानी, हरिनी अरज करे हो, रानी!
मसुआ तो सींझेला रसोइया खलरिया हमें दिहितू न हो,
पेड़वा से टंगबै खलरिया त मनवा समुझासइबि हो, रानी
फिरि-फिरि देखबि खलरिया जनकु हरिना जिअतहिं हो,

कौशल्या हिरनी से कहती हैं-

जाहु-जाहु ! हरिनी घर आपन खलरिया ना देइबि हो,
खलरी के खंझड़ी मढ़ाइबि राम मोरा ले खेलिहैं नू हो,
जब-जब बाजेला खंझड़िया सबद सुन अहँ केली हो,
हरिनी ठाढ़ि ढेकुलिया के नीचे हरिन के बिसूरे ली हो।

लोकगीतों की जन प्रियता पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक है। लोकगीतों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये समूह में ही गाये जाते हैं। जन्म, विवाह एवं

विदाई आदि अवसरों पर स्त्रियाँ एकत्रित होकर गीत का गायन करती हैं। लोकगीत गायन की अपनी एक विशेष शैली है। इसमें एक स्त्री गीत की शुरुआत करती है और शेष पीछे (पुरवाना) गाती हैं।

एक प्रसिद्ध सोहर गीत दृष्टव्य है -

जुग-जुग जियसु ललनवा भवनवा के भाग जागल हो,
ललना लाल होई है कुलवा के
दीपक मनवा में आस लागल हो।
नकिया त हवै जैसे बाबू जी के,
आँखियाँ हवै माइ के हो,
ललन मुहवा हवै चनवा-सुरुजवा
त सगरो अन्जोर भइले हो।।

भोजपुरी लोक गीतों में 'फगुआ' का विशेष महत्व है । यह माघ महीने के शुक्ल पक्ष की पंचमी से शुरू होकर फाल्गुन की पूर्णिमा तक अनवरत गाया जाता है। यह लोक जीवन के उल्लास का पर्व है । प्राचीन साहित्य में इसी पर्व को बसन्तोत्सव या मदनोत्सव कहा गया है। भगवान राम के होली खेलने से सम्बन्धित प्रस्तुत गीत अत्यन्त मनोहारी हैं और प्रायः सभी क्षेत्रों में गाया जाता है।

होरी खेले रघुवीरा अवध में होरी खेलैं रघुबीरा ।
केकरा हाथे कनक पिचकारी केकरा हाथे अबीरा ।
राम के हाथे कनक पिचकारी, सीता के हाथे अबीरा ।
केकरा हाथे ढोलक भल सोहै, केकरा हाथे मंजीरा।
राम के हाथे ढोलक भल सोहै, सीता के हाथे मंजीरा।
अवध में होरी खेलैं रघुवीरा ।

एक अन्य फगुआ गीत में परदेस गये पति से होली में घर आने का मनुहार पत्नी करती है-

पिया होली में जिया न जरईहा, परदेसी घर आ जइहा,
रहिया निहारब पलकिया बिछायी, परदेसी घर आ जइहा ।
रउरा बिना कोउ रंग न लगाई, कइला वादा बलम न भुलैहा,
परदेसी घर आ जइहा ।

भोजपुरी में 'बिदेसिया' लोकगीत का प्रचलन बहुत है। जिसके प्रणेता भिखारी ठाकुर थे। यह एक तरह से विरह गीत है। गृह स्वामी जब रोजी - रोजगार के लिए सुदूर शहर चला जाता है तो पति के वियोग में विरहिणी नायिका अपनी भावनाओं को व्यक्त करती हुई कहती है कि तुम्हारे आगमन की राह देखते-देखते मेरी आँखें दुःखने लगी हैं। ऋतु परिवर्तन भी हो गया । आम और महुआ भी पक कर झड़ गये। हम तुम्हारी और कितनी प्रतीक्षा करें। हमारे लम्बे-लम्बे बाल जमीन पर लोट रहे हैं। गँवना करवा करके मुझे घर बैठा दिया और स्वयं परदेस चले गये हो। चढ़ती जवानी हमारी शत्रु हो गयी है। हे परदेसी ! तुम्हारे बिना मेरे इस दुःख को कौन दूर करेगा । लोकगीत दृष्टव्य है-

रहिया ताकत मोरी भारी भइली आँखियाँ।
अमवा मोजरि गइले, महुआ टपक गइले,
कत दिन बटिया ओहइबे रे बिदेसिया ।। 1।।
मचिया बइठल धनी मने-मने समुझे से ।
भुंइयाँ लोटेला लामी केस रे बिदेसिया ।। 2।।
गवना कराई संइयाँ घर बइठवलेस,
अपना चलेले परदेस रे बिदेसिया ।। 3।।
चढ़ली जवनियाँ बइरिनि भइली हमरी से ।
के मोर हरिहैं कलेस रे बिदेसिया ।। 4।।

भारत नदियों, पहाड़ों तथा जंगलों का देश है । हमारा देश प्राकृतिक सम्पदा से परिपूर्ण है। यहाँ की भौगोलिक संरचना की विभिन्नता के कारण मौसमों में परिवर्तन होता रहता है। जाड़ा, गर्मी और बरसात ये मुख्य तीन ऋतुएं हैं। एक ऋतु की अवधि चार माह होती है। वर्षा ऋतु सभी ऋतुओं की अपेक्षा अधिक ही कामोद्दीपक ऋतु है। इस ऋतु में भोजपुरी क्षेत्र में लोग झूला-झूलते हैं। विशेष कर नवयुवतियाँ झूला-झूलती हैं और झूला झूलते हुए 'कजरी गीत' गाती हैं-

हरे रामा आयल सावन केर महिनवां
कि हरि नहीं अइले ए हारी ।।

नायिका को प्रिय वियोग के कारण सावन जैसा मनोहारी मौसम भी अच्छा नहीं लगता, वह अपनी ननद से कहती है-

हमका भावे ना सवनवां, बिना सजनवा हो ननदी,
जोवना भइल मोर दुस्मनवा बिना सजनवां हो ननदी ।।

भोजपुरी लोकगीत में 'बिरहा' लोकगीत का अधिक महत्व है। यह 'विरह' का तद्भव रूप है। भोजपुरी क्षेत्र में गाये जाने वाले विरह गीतों में विप्रलम्भ शृंगार की प्रधानता थी, किन्तु कालान्तर में अन्य विषयों को आधार बनाकर बिहारी गीतों का सृजन किया गया। लोक कवियों ने विरह गीतों में विषय-वैविध्य का चित्रण किया है-

कलयुग के आ गइले जमाना ऐ गुइया
मेहरी के बस में भतार।
मुसवा भतार बिल्ली भइले खिदमतियां,
बकरी के आगे गइल सेर के इज्जतिया ।
बुढ़िया बिछावले पतोहिया के खटिया,
बपवा के दाबले लरिकवा नरेटिया।
रोवत गइले बूढ़ ओही बुढ़िया के लगिया,
सुन-सुन हमार-ए-परनिया,
छंबड़ा भइल हतियार ।
हमनी के भगिया में अगिया लगल बा,
जिन्दगी भइल बा पहार ।।
(शब्दार्थः नरेटिया - गला, छंबड़ा - छौना, लड़का)

लोकगीतों में लोक के सुख-दुःख के साथ ही साथ समकालीन जीवन की विसंगतियों का भी यथार्थ चित्रण किया गया है। बेरोजगारी और महंगाई समाज की दो सबसे बड़ी समस्याएं हैं। महंगाई की विकरालता पर एक भोजपुरी लोकगीत दृष्टव्य है-

महंगी के मारे बिरहा विसरि गइले,
भूली गइले कजरी - कबीर ।
देखि के गोरिया के उभरल जोबनवा,
उठेला करजेवा में पीर।

अंततः हम कह सकते हैं कि लोकगीत मानस के सहज मनोभावों का संचित कोष है । लोकगीत विशेषकर भोजपुरी लोकगीत अपनी गायन की विशिष्ट शैली और भाव भंगिमा के कारण श्रोताओं और पाठकों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इसके महत्व को प्रतिपादित करते हुए लोक साहित्य मर्मज्ञ विद्वान डा0 कृष्ण देव उपाध्याय ने कहा है- ''लोकगीत धरती के गीत हैं, ये जीवन के गीत हैं, ये विजय के गीत हैं, ये मंगल के गीत हैं और ये हमारी आशा के गीत हैं। जनता के द्वारा रचे गये, जनता के जीवन से सम्बन्ध में रखने वाले ये गीत, जनता की ही सम्पत्ति हैं।'' जर्मन विद्वान ग्रिम ने लोकगीत को परिभाषित करते हुए इसे जनता का, जनता के लिए रचा गया, जन काव्य कहा है।

भोजपुरी लोकगीत अपनी अपरिमित क्षमताओं एवं सम्भावनाओं के कारण लोक साहित्य में अपनी एक अलग पहचान रखता है।

'अस्तित्व विला'
624-एच, के0एच0-28
गोमती नगर, चिनहट, लखनऊ-226028
मो0- 9412881229

नारी उत्थान और गाँधी जी

➲ डॉ0 नन्द किशोर साह

महात्मा गाँधी स्त्रियों के सामाजिक उत्थान के लिए भी बहुत चिंतित थे। महिलाओं के जीवन को प्रभावित करने वाली सामाजिक कुरीतियों के बारे में उनके मन में काफी कड़ुवाहट थी। वे मानते थे कि बाल विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा और विधवा विवाह निषेध जैसी कुरीतियों के कारण महिलाएँ आगे नहीं बढ़ पातीं और शोषण अन्याय अत्याचार को झेलने के लिए विवश होती हैं।

महात्मा गाँधी ने महिलाओं को लेकर आजादी से पहले जो बातें कही थीं, वह आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं। कहना न होगा कि गाँधी के अलावा किसी ने भारत को इतने बेहतर ढंग से नहीं समझा। स्त्री को चाहिए कि वह खुद को पुरुष के भोग की वस्तु मानना बंद कर दें। इसका इलाज पुरुषों के बजाय स्त्रियों के हाथ में ज्यादा है। उसे पुरुष के खातिर जिसमें पति भी शामिल है, सजने से इंकार कर देना चाहिए। तभी वह पुरुष के साथ बराबर साझेदारी बनेगी। गाँधी की नजर में स्त्री की अहमियत का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि उन्होंने तब लिखा था यदि मैंने स्त्री के रूप में जन्म लिया होता तो पुरुषों के इस दावे के खिलाफ विरोध करता है कि उसका मन बहलाने के लिए ही पैदा हुई है। पुरुष ने स्त्री को अपनी कठपुतली समझ लिया है। स्त्री को भी इसकी आदत पड़ गई है। धीरे-धीरे इस पीढ़ी को अपनी इस भूमिका में मजा आने लगा है क्योंकि पतन के गर्त में गिरने वाला व्यक्ति किसी दूसरे को भी खींच लेता है और गिरना सरल होने लगता है।

गाँधीजी के विचार के अनुसार स्त्री व पुरुष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इनमें किसी भी तरह का भेदभाव परिवार व समाज के लिए हानिकारक है। इस संसार को सुंदर और सशक्त बनाने में नारियों की भूमिका अहम है। गाँधी जी कहते थे कि वह स्त्रियों के अधिकारों के सवाल पर कोई समझौता नहीं कर सकते क्योंकि सामाजिक पुनर्जागरण के लिए आवश्यक है कि महिलाओं को भी बराबरी का स्थान दिया जाए तथा प्रत्येक प्रकार की गतिविधियों में उनका भी उचित स्थान हो । गाँधी के अनुसार स्त्री अहिंसा की अवतार है । नारी सृष्टि का प्रमुख उद्‌गम स्रोत है। देव से लेकर मानव तक सारे की जन्मदात्री स्त्री ही रही है। महिलाएँ त्याग और अहिंसा की मूर्ति हैं। उन्होंने बाल-विवाह, बच्चों एवं महिलाओं के कुस्वास्थ्य का प्रमुख कारण मानते हुए इन को खत्म करने का आह्वान किया था।

सन् 1925 में गाँधीजी बिहार आए तो पूर्णिया

कटिहार, भागलपुर, देवघर, खगड़िया तथा मधुपुर में महिलाओं की सभा को संबोधित किया। उनका मानना था कि शिक्षित परिवार में भी पर्दा प्रथा कायम है। गाँधीजी ने पर्दा का विरोध धार्मिक उदाहरणों का हवाला देते हुए किया। द्रोपदी, सीता, दुर्गा और राधा के सामने पर्दा नहीं था। बिहार में पर्दा प्रथा के विरुद्ध मुख्य लहर सन् 1926 से आई। गाँधी जी ने शिक्षिका के रूप में साबरमती आश्रम से राधा बेन तथा दुर्गा बाई को बिहार भेजा। 31 मार्च 1930 को श्रीमती कमला नेहरू ने बिहार की महिलाओं को परदे से बाहर आकर स्वतंत्रता सेनानियों के साथ कार्य करने का आह्वान किया। स्वतंत्रता आंदोलन में भी सरोजनी नायडू, मधुबेन, सुशीला नायर, आभा बेन, सरला देवी ने जमकर हिस्सा भी लिया। गाँधी का आंदोलन फलीभूत होने का कारण महिलाओं को साथ लेकर चलना है। महिलाओं ने घर से निकलकर सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया और स्वर्णिम इतिहास रचा।

गाँधीजी के विचारानुसार स्वावलंबन से आत्मबल बढ़ता है। स्वावलंबन से स्वाभिमान जगता है। बिहार में पर्दा प्रथा की समाप्ति के लिए सामाजिक और स्त्रियों को स्वावलंबी बनाने के लिए खादी आंदोलन को महात्मा गाँधी की अमूल्य देन माना जाता है। उन्होंने कहा कि हमारे सभी कार्यों का सौरमंडल का सूरज चरखा है। निःसंदेह इतिहास में गाँधी जी ने नारी उत्थान के महायज्ञ की आहुति दी और बिहार में नारी मुक्ति की लहरें उठने लगीं। स्वतंत्रोत्तर भारत में निश्चित रूप से नारी की स्थिति में आशातीत बदलाव हुआ है। वे कार्यालयों, होटलों, शिक्षा संस्थाओं एवं संसद में भी एक अच्छी संख्या में दिखाई पड़ रही हैं।

हमारे प्राचीन भारतीय ग्रंथों में नारी को बिल्कुल स्वतंत्र बताया गया है कि देवी शक्तियाँ वहाँ पर निवास करती हैं जहाँ नारी का सम्मान होता है। किसी भी राष्ट्रीय समाज का विकास तभी हो सकता है, जब उस राष्ट्र में नारी और नर में कोई भेद न हो। एक समाज सुधारक के रूप में गाँधी जी ने स्त्री उत्थान के लिए भरसक प्रयत्न किये। उनका मानना था यह दुनिया किसी भी दृष्टि से पुरुषों की ही नहीं है। गाँधीजी दहेज प्रथा को खरीद-बिक्री का कारोबार मानते हैं उनके अनुसार कोई भी युवक, जो दहेज को विवाह की शर्त रखता है, वह अपनी शिक्षा को कलंकित करता है, अपने देश को कलंकित करता है और नारी जाति का अपमान करता है। गाँधीजी दहेज प्रथा के भी विरोधी थे। उनका कहना था कि कोई भी ऐसा विवाह जो धन के लालच में किया जा रहा हो उसे विवाह नहीं माना जा सकता। उनके अनुसार ऐसे लोगों को समाज से बाहर निकाल देना चाहिए जो दहेज देते हैं या लेते हैं। गाँधीजी का मानना था कि केवल कानून से इस प्रथा को समाप्त नहीं किया जा सकता अपितु इसके लिए सामाजिक संगठनों को जागरूकता पैदा करनी चाहिए। इसके अलावा अंतरजातीय विवाह को भी प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि कन्या के विवाह के लिए वाप को मजबूरी में दहेज ना देना पड़े। गाँधीजी ने स्त्रियों की शिक्षा को पुरुषों की शिक्षा से अधिक महत्वपूर्ण माना क्योंकि एक शिक्षित स्त्री पर समाज को समृद्ध बनाने, बच्चों को चारित्रिक गुणों को विकसित करने में अहम भूमिका निभाती है। भारतीय नारी की क्षमता और किसी भी उन्नतशील देश की नारी से कम नहीं है।

गाँधी जी अपने अथक प्रयत्नों के माध्यम से भारत को आजादी दिला कर देश की जनता को अपने मौलिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए प्रेरित

किया। वे कहते थे कि अपनी बेटी को पढ़ने का अवसर दो उसके लिए यही सबसे बड़ा दहेज है। गाँधीजी बाल विवाह के विरोधी थे। उनका विचार था कि जब बच्चे के भौतिक विकास की क्रियाएं आरंभ होती हैं तो उसे शादी के बंधन में बाँध दिया जाता है। जिस बच्ची को गोद में उठाकर प्यार करना चाहिए, उसे पत्नी के रूप में स्वीकार कराया जाता है। गाँधीजी विधवा विवाह के पक्षधर थे। उन्होंने समाज में विद्यमान इन रूढ़िवादी परंपराओं को जड़ से मिटाने का प्रयास किया और शांत प्रिय समाज की कल्पना की। एक ऐसा शोषण मुक्त समाज, जहाँ हर व्यक्ति गर्व से सिर ऊँचा करके चल सके। सामाजिक समानता के पक्षधर गाँधीजी अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण राष्ट्रपिता कहलाए। आज भारत ही नहीं पूरे विश्व के लोग उनके विचारों से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। महात्मा गाँधी का स्त्रियों के प्रति बेहद सकारात्मक और स्पष्ट दृष्टिकोण रहा है।

महात्मा गाँधी ने नारी को नैतिक शक्ति का स्रोत माना है। अपनी शक्ति को न पहचानने के कारण ही नारी शोषित हुई है। भारत के आर्थिक और सामाजिक जीवन में नारी की बराबरी की भागीदारी है। गाँधीजी स्त्रियों को पर्दे में रखने के विरुद्ध थे। उनका कहना था कि पवित्रता पर्दे की आड़ में रखने से नहीं पनपती, बाहर से वह लादी नहीं जा सकती, उसे तो भीतर से ही पैदा करना होगा। वे नारी को पुरुष की दासी नहीं साथी मानते थे। गाँधीजी ने अश्लील विज्ञापनों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया था। स्त्री के बिना परिवार के गाड़ी नहीं चल सकती। स्त्री परिवार के अर्थशास्त्र रूपी रथ की धुरी है। वह घर और बाहर दोनों के कार्यों को बखूबी निभाती है। घर के सारे कार्य धन पर आधारित होते हैं जो स्त्री के द्वारा ही संपन्न किए जाते हैं। यदि स्त्री बाहर भी कार्यशील है तो वह पुरुष से कई गुना आर्थिक और शारीरिक बोझ उठाती है। इसलिए स्त्री पुरुष की अपेक्षा हर तरह से अधिक श्रेष्ठ है।

ग्राम़ व पोस्ट- बनकटवा,
घोड़ासहन, जिला - पूर्वी चम्पारण
बिहार-845303
मो0- 9934797610

सब इन्द्रियों को वश में रखकर, सर्वत्र समत्व का पालन करके जो दृढ़, अचल और अचिन्त्य, सर्वव्यापी, अवर्णनीय, अविनाशी स्वरूप की उपासना करते हैं वे सब प्राणियों के हित में लगे हुए मुझे ही पाते हैं।

'भोले भाव मिले रघुराई'

-गुरु नानक

प्रभु का सतत् स्मरण

➲ डॉ0 चितरंजन बिस्वास

आज विश्व में लोग नानाविध उलझनों से ग्रस्त हैं, तरह-तरह के विकार उन्हें नरकीटक बना रहे हैं। औरों से आगे बढ़ने की होड़ लगी हुई है, भौतिकता की आड़ में सफलता पाने की लालसा में मनुष्य यह भूल जाता है कि उसका उद्‌गम स्थल क्या है और क्या है उसका गंतव्य! सारा जीवन इसी दौड़-धूप में बीत जाता है। यदि हम स्वयं का विश्लेषण करें तो पायेंगे कि कहीं-न-कहीं कोई कमी रह गयी है और वह है- हमारा ईश्वर से तारतम्य न बना पाना।

जब हम अपना मालिक स्वयं बनकर कार्य करते हैं तो वही कर्म हमें जन्म-मृत्यु के भंवर में डाल देता है अर्थात् उस कर्म में कहीं-न-कहीं स्वार्थ छिपा है, कर्मफल की इच्छा छिपी होती है और वांछित फल न पाने पर विभिन्न प्रकारों के विकारों से ग्रस्त हो जाते हैं, फलतः हम पतन की ओर चले जाते हैं। इस प्रकार के कार्यों को प्रारम्भ करने से पूर्व हम चिंताग्रस्त होते हैं तथा समापन भी चिंतादायक होता है। मनचाहा फल पाने पर हम अट्टहास करने लगते हैं अर्थात् ईश्वर से दूर पग-पग पर विकारों से ग्रस्त होते रहते हैं। वहीं दूसरी ओर हम जो भी कर्म करें उसे प्रभु के चरणों में अर्पित करते हुए करें तो निश्चिंत हो सकते हैं। अर्थात् अपने लिए कार्य न करके ईश्वर के लिए करें तो अनायास निष्काम भाव मन में आ जाता है- तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मेरा। प्रभु! मेरा कुछ भी नहीं है, ये हाथ भी तुम्हारे हैं, कर्म भी तुम्हारा है, बुद्धि भी तुमने दी है... तो मैं कहाँ से आया? वास्तव में 'मैं' शब्द का कोई अस्तित्व ही नहीं है। इस संदर्भ में श्रीमद्‌भागवत महापुराण 1/5/33-34 में नारदजी ने श्री व्यासजी को समझाकर कहा है-

आमयो यश्च भूतानां जायते येन सुव्रत।
तदेव ह्यामयं द्रव्यं न पुनाति चिकित्सितम्।।
एवं नृणां क्रियायोगाः सर्वे संसृतिहेतवः ।
त एवात्मविनाशाय कल्पन्ते कल्पिताः परे ।।

अर्थात् प्राणियों को जिस पदार्थ के सेवन से जो रोग हो जाता है। वही पदार्थ चिकित्सा विधि से प्रयोग करने पर क्या उस रोग को दूर नहीं करता ? इसी प्रकार यद्यपि सभी कर्म मनुष्यों को जन्म-मृत्यु-रूपी संसार के चक्र में डालने वाले हैं, तथापि जब वे भगवान को समर्पित कर दिये जाते हैं तब उनका कर्मभाव ही नष्ट हो जाता है।

हमें किसी कर्म या उसके फल के बारे में चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता (9/22) में श्रीकृष्ण भगवान ने हमें निडर बनाने के

उद्देश्य से यह बात कही है कि मैं स्वयं तुम्हारा योगक्षेम (अप्राप्त की प्राप्ति एवं प्राप्ति की रक्षा) प्राप्त कर देता हूँ

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।

''जो अनन्यप्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर का निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं, उन नित्य - निरन्तर मेरा चिंतन करने वाले पुरुषों का योगक्षेम मैं स्वयं प्राप्त कर देता हूँ। इसी तरह एक अन्य श्लोक (18/66) में प्रभु ने हमारी हिम्मत बढ़ाई है तथा मात्र उनकी शरण में आने को कहा है-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

''सम्पूर्ण धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान, सर्वाधार परमेश्वर की शरण में आ। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा, तू शोक मत कर।''

अब थोड़ा वैज्ञानिक तर्क देकर इसे समझते हैं- भौतिक शास्त्री न्यूटन ने गति के तीसरे नियम में प्रतिपादित किया है कि किसी भी क्रिया के सापेक्ष बराबर की (विपरीत दिशा में) एक प्रतिक्रिया होती है, उदाहरणार्थ- जब हम किसी दीवार में जितना जोर लगायेंगे, दीवार भी हम पर उतनी ही तीव्रता से जोर लगाएगी, जबकि दीवार स्थिर है, परन्तु हम उस विपरीत शक्ति को अनुभव कर सकते हैं। जब हम किसी को अपनी शुभकामनाऐं व्यक्त करते हैं तो अनायास ही अपने मंगल का रास्ता प्रशस्त करते हैं। इसी प्रकार जब हम प्रगाढ़ता से ईश्वर को मनन करते हैं, उन्हें बुलाते हैं, तत्क्षण वही ईश्वरीय शक्ति उतनी ही प्रगाढ़ता से आवरण बनकर हमारी रक्षा करती है। गीता में यह बात सिद्ध हो चुकी है कि अर्जुन ने जिस आवेग से श्रीकृष्ण को स्मरण किया, उनके निर्देशों का अनुगमन किया, श्रीकृष्ण भगवान ने अर्जुन की पग-पग पर उतनी आवेग से रक्षा की, यहाँ तक कि सारथी बनकर विशिष्ट मित्र होने का परिचय दिया। अब ईश्वर अर्जुन के माध्यम से हम सबको उनके मित्र बन जाने को कहते हैं-

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ।।
(श्रीमद्भगवद्गीता 18/65)

अर्थात्- ''तू मुझमें मनवाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला हो और मुझको प्रणाम कर। ऐसा करने से तू मुझे ही प्राप्त होगा, यह मैं तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ, क्योंकि तू मेरा अत्यन्त प्रिय है।

एक तरह से देखा जाय तो प्रभु ने हमारे लिए हमारे जीवन पटल के 'फेसबुक' में 'फ्रेन्ड रिक्वेस्ट' भेजी है, बस हमें एक्सेप्ट करना है, मात्र एक क्लिक की दूरी पर है हमारा परममित्र। आज हमें देख रहे हैं कि बच्चे से वृद्ध तक सभी मित्रता एवं चौटिंग में लगे हैं। यह एक ज्वलन्त समस्या बनती जा रही है और प्रायः इनके घातक परिणाम भी सामने आ रहे हैं। आओ, हम अपने 'माई-बाप' श्रीकृष्ण भगवान से मित्रता एवं चौटिंग करें। प्रभु से मित्रता करने के लिए हमें उनका प्रिय बनना होगा। श्रीमद्भगवद्गीता के तीन श्लोकों (12/15,16,17) में प्रभु ने हमें यह बताया कि उन्हें कौन प्रिय है, हमें तदनुसार वे गुण अर्जित करने होंगे -

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयो द्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।

''जिससे कोई भी जीव उद्वेग (दुःख, संताप, भय और क्षोभ) को प्राप्त नहीं होता और जो स्वयं भी किसी जीव से उद्वेग को प्राप्त नहीं होता, तथा जो हर्ष, अमर्ष (असहिष्णुता), भय और उद्वेगादि से रहित है,

वह भक्त मुझको प्रिय है।''

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भ परित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।

''जो पुरुष आकांक्षा से रहित, बाहर-भीतर से शुद्ध, चतुर, पक्षपात से रहित और दुःखों से छूटा हुआ है अर्थात् दुःख जिनका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता, वह सब आरम्भ का त्यागी (कर्त्रापन के अभिमान से रहित) मेरा भक्त मुझको प्रिय है।''

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ।।

''जो न कभी हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है तथा जो शुभ और अशुभ सम्पूर्ण कर्मों का त्यागी है, (भगवान को समर्पित कर देने पर कोई कर्म शुभ-अशुभ नहीं रह जाता है) वह भक्तियुक्त पुरुष मुझको प्रिय है''

ईश्वर को मनन करने के लिए भक्तों ने जाने कौन-कौन सी विधि अपनाई हैं। सम्पूर्ण जीवन कष्टों में गुजारने वाली कुन्ती ने तो श्रीकृष्ण जी से मात्र दुःख ही मांगा और तर्क दिया कि दुःखों में लोग इतनी तीव्र आवेग से ईश्वर को याद करते हैं कि उनकी प्रार्थना अनायास ईश्वर तक पहुँचती है-

विपदः सन्तु नः शश्वत्तत्र जगद्गुरो।
भवतो दर्शनम् यत्स्यादपुनर्भवदर्शनम् ।।
(श्रीमद भागवत महापुराण 1/8/25)

अर्थात् कुन्तीजी श्रीकृष्ण भगवान से प्रार्थना करती हैं- हे जगतगुरु! हमारे जीवन में पग-पग पर विपत्तियाँ आती रहें, क्योंकि विपत्तियों में ही निश्चित रूप से ही आपके दर्शन हुआ करते हैं और आपके दर्शन हो जाने पर फिर जन्म-मृत्यु के चक्कर में नहीं आना पड़ता।

प्रभु प्रेम में असीम आनन्द है, उनसे मित्रता हमें जन्म-मृत्यु के बंधनों से मुक्त करती है। हमारा लौकिक जीवन भी एक आदर्श जीवन हो जाता है। वे तो सदा ही हमारे मित्र रहे हैं। हम उन्हें भूलते जा रहे हैं, परिणामस्वरूप उनकी कृपा से कोसों दूर हैं। यदि हम अर्जुन की भाँति श्रीकृष्ण भगवान से मित्रता करें तो, हम हजारों मुश्किलें झेलते हुए भी अंत में अर्जुन की तरह विजयश्री से साक्षात्कार करेंगे अर्थात् जहाँ पर भगवान और भक्त का ऐक्य हो जाता सफलता कदम चूमने लगती है ।

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।

''जहाँ योगेश्वर भगवान कृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीवधारी अर्जुन हैं वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति हैं।''

हमारा हृदय ही हमारे प्रभु का मंदिर है, इसे शुद्ध रखने की आवश्यकता है ताकि हमारा प्रभु सदैव इसमें विराजमान हो सके। हमें कहीं और जाने की आवश्यकता नहीं है। आँखें खुली हों तो उन्हें हर चीज में, हर जीव में देख लो और यदि और गहराई में जाना हो तो बस हौले से अपनी आँखें बन्द कर लो और एकान्त में अपने प्रिय के दर्शन कर लो। कार्यों के बीच समय-समय पर उनसे प्रार्थना करते रहो-

''हे प्रभु, मैं तुम्हें न भूलूँ'' अर्थात् उनका सतत् स्मरण ही हमारा प्रमुख ध्येय है।

पता- बी-36. कल्याणपुर पश्चिम,
श्रीकालीमाता मंदिर के सम्मुख,
रिंग रोड, लखनऊ - 226022.
सम्पर्कः 8299851339

संस्थान समाचार

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं ज्ञानतीर्थ माधवराव सप्रे स्मृति समाचारपत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 11 व 12 मई 2023 को राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन, भोपाल

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं ज्ञानतीर्थ माधवराव सप्रे स्मृति समाचारपत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 11 से 12 मई, 2023 को 'द्विवेदी- सप्रे युगीन प्रवृत्तियाँ और सरोकार' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय सभागार में

पूर्वाह्न 10.00 बजे से दीप प्रज्वलन कर किया गया। संगोष्ठी में मुख्य अतिथि के रूप में श्री मंगुभाई पटेल, महामहिम राज्यपाल, म0प्र0 उपस्थित हुये। संगाष्ठी की अध्यक्षता प्रो0 के0जी0 सुरेश, कुलपति माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल द्वारा की गयी।

इस अवसर पर **मुख्य अतिथि महामहिम राज्यपाल मंगुभाई पटेल ने कहा है-** 'राजभवन लोक कल्याण की जिम्मेदारी है। इसी भाव के साथ उन्होंने प्रदेश के सभी 52 जिलों का भ्रमण कर आमजन, वंचित वर्ग के दुःख-दर्द की जानकारी प्राप्त की है। उनके समाधान और विकास के कार्य किए हैं।' इस अवसर पर डॉ0 हरिकृष्ण दत्त शिक्षा सम्मान डॉ0 कृपाशंकर चौबे और महेश गुप्ता सृजन सम्मान गौरव अवस्थी को प्रदान किए गये।

माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल के कुलपति प्रोफेसर के. जी. सुरेश ने कहा- 'आचार्य द्विवेदी और माधव राव सप्रे समकालीन और बहुआयामी व्यक्ति थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति पर गहरी छाप छोड़ी है। युगीन साहित्य की धारा का नेतृत्व किया है। उनकी विशिष्टता थी कि

रचनात्मक क्षमता में उनसे बेहतर प्रतिभाओं की रचनाधर्मिता का वे आदर्श थे। उन्होंने कहा कि ऐसा ही बौद्धिक नेतृत्व वर्तमान समय की आवश्यकता है।' उन्होंने युवा शक्ति को इतिहास के साथ जोड़ने और साहित्य पत्रकारिता की पारस्परिकता की परंपरा को जीवित रखने के लिए सप्रे संग्रहालय के प्रयासों की सराहना की। आचार्य स्मृति रजत जयंती महोत्सव के संयोजक गौरव अवस्थी ने आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी स्मृति संरक्षण अभियान के प्रारंभ और विकास के विभिन्न पड़ावों और यादगार पलों का उल्लेख किया।

इस अवसर पर **डॉ0 अमिता दुबे प्रधान सम्पादक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान** ने संस्थान की योजनाओं पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम का संचालन डॉ0

मंगला अनुजा ने किया। अभ्यागतों के प्रति आभार श्री विजय श्रीधर द्वारा व्यक्त किया गया।

पत्रकारिता दिवस समारोह, दो दिवसीय संगोष्ठी, 30 व 31 मई 2023

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पत्रकारिता दिवस के शुभ अवसर पर 30 व 31 मई, 2023 को दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन हिन्दी भवन के

निराला सभागार लखनऊ में पूर्वाह्न 10.30 बजे से किया गया। दीप प्रज्वलन, माँ सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण, पुष्पार्पण के उपरान्त प्रारम्भ हुए कार्यक्रम में वाणी वन्दना डॉ0 सरोज खुल्बे द्वारा प्रस्तुत की गयी ।

सम्माननीय अतिथि डॉ0 जितेन्द्रनाथ मिश्र, डॉ0 जवाहर कर्नावट, श्री पद्मकान्त शर्मा 'प्रभात', डॉ0 संजय श्रीवास्तव, डॉ0 अमित द्विवेदी, डॉ0 विजय कर्ण, श्री कृष्ण बिहारी त्रिपाठी, श्री ओम प्रकाश तिवारी, डॉ0 मुकुल श्रीवास्तव का उत्तरीय द्वारा स्वागत डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान संपादक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया।

'स्वतंत्रता पूर्व साहित्यिक पत्रकारिता' विषय पर केंद्रित प्रथम दिवस के प्रथम सत्र में डॉ0 अमित द्विवेदी ने कहा– 'आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से साहित्यिक पत्रकारिता को नई दिशा प्रदान की। स्वतंत्रता आन्दोलन में साहित्यिक पत्रकारिता ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रेस तथा पत्रकारिता के द्वारा राष्ट्रवाद को नया स्वरूप मिला। सामान्यतः पत्रकारिता लोकमत का निर्माण करती है। सामाजिक चेतना को जगाने में साहित्यिक पत्रकारिता

का स्थान प्रमुख हैं। 'माधुरी' व 'मतवाला' पत्रिका ने समाज को नई दिशा प्रदान की। साहित्यिक पत्रकारिता ने भारत भूमि की भरपूर सेवा की।

जयपुर से पधारे डॉ0 संजय श्रीवास्तव ने कहा- 'साहित्यिक पत्रकारिता हिन्दी गद्य का श्रेष्ठ रूप है। हिन्दी पत्रकारिता सामाजिक दशा और दिशा बदलने के लिए प्रतिबद्ध थी। अंग्रेजी के विरोध के लिए हिन्दी

पत्रकारिता का उदय हुआ। जुगल किशोर शुक्ल ने खड़ी बोली को हिन्दी साहित्य के लिए व्यवस्थित किया। 1857 के बाद पूरे भारत में हिन्दी पत्रकारिता एक ज्योति के रूप में प्रज्वलित हुई। भारतेन्दु हरिचन्द्र ने सम्पादन 'कवि वचन सुधा' से प्रराम्भ किया। उन्होंने हिन्दी भाषा को आमजन के बीच लाने का काम किया। इसके बाद 'हरिश्चन्द्र' पत्रिका निकाली। उन्होंने राष्ट्रचेतना को विकसित किया। 'बालाबोधिनी' के माध्यम से प्रगतिशील रचनाओं का प्रकाशन किया।

सीतापुर से पधारे श्री पद्मकान्त शर्मा 'प्रभात' ने कहा- 'आजादी के पूर्व की पत्रकारिता आजादी के ध्येय के लिए समर्पित थी। उस समय के समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं साहित्य और सूचनाओं को सामान्य रूप प्रकाशित करती थीं। उन्होंने समाज में आजादी की पृष्ठ भूमि तैयार की। साहित्य और पत्रकारिता एक दूसरे पर आधारित हैं। पत्रकारिता ने स्वतंत्रता आन्दोलन की अलख जगायी। भारतेन्दु जी की 'कवि वचन सुधा' ने क्रांति की चेतना जागृत की। स्वतंत्रता सेनानियों ने अभिव्यक्ति की आजादी के लिए अपने प्राण न्योछावर कर दिये। पत्रकारिता का उद्देश्य लोक कल्याण की भावना थी। पत्रकारिता लोक कल्याण की सकारात्मक भावना से परिपूर्ण होनी चाहिए।

भोपाल से पधारे डॉ0 जवाहर कर्नावट ने कहा- 'हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास स्वर्णिम रहा है। विश्व के अधिकांश देशों में साहित्यिक पत्रकारिता को महत्व दिया जाता रहा है। स्वतंत्रता पूर्व पत्रकारिता ने आजादी की अलख जगायी। बाल कृष्ण भट्ट, बाल मुकुन्द गुप्त, प्रताप नारायण मिश्र, श्याम सुन्दर दास, जुगुल किशोर ने साहित्यिक पत्रकारिता को नया आयाम दिया। साहित्य केवल कहानी, कविता नहीं होता वह

सभी विषयों से जुड़ा रहता है वह चाहे विज्ञान के रूप में हो या अन्य।

वाराणसी से पधारे डॉ0 जितेन्द्रनाथ मिश्र ने कहा- 'यह बहुत सुखद है कि हम गंगा दशहरा दिवस के

अवसर पर पत्रकारिता दिवस मना रहे हैं। यह महत्वपूर्ण नहीं है कि कौन सा शब्द किसने दिया महत्वपूर्ण यह है जब से पत्रकारिता का विकास हुआ तब से साहित्य का स्वरूप बदल गया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपनी लेखनी से स्वतंत्रता की वह अलख जगायी जो भारतीयों के हृदय में बैठ गयी।

'स्वातंत्र्योत्तर साहित्यिक पत्रकारिता' विषय पर केन्द्रित द्वितीय सत्र में डॉ0 मुकुल श्रीवास्तव ने कहा- 'भारत में पाठकों में हिन्दी भाषा का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। सूचना क्रांति बढ़ने से हिन्दी बढ़ती जा रही है। इन्टरनेट के हर कोने में हिन्दी अपना स्थान बनाती जा रही है। सोशल मीडिया में हिन्दी भाषा का प्रभुत्व है। हिन्दी अपनी सहजता, सरलता के कारण सर्वग्राह्य हो रही हैं पुस्तकों के बाहर भी साहित्य का दायरा बढ़ रहा है। तकनीकी ने साहित्य के क्षेत्र में मूलभूत परिवर्तन किया है। सोशल मीडिया नये लेखक, दर्शक बनाने में सफल भूमिका निभा रहा है।

मुम्बई से पधारे श्री ओम प्रकाश तिवारी ने कहा- 'स्वतंत्रता के समय की पत्रकारिता तलवार की धार पर चलने के समान की पत्रकारिता थी। बाबूराव विष्णु पराड़कर ने अपनी सम्पादकीय के माध्यम से अपनी बात को जनसामान्य तक पहुँचाया। आजादी के बाद भी साहित्यिक पत्रकारिता ने समाज को नई दिशा प्रदान करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। बाल पत्रिकाओं ने साहित्य को समृद्ध किया। दिनमान, रविवार व धर्मयुग साहित्यिक पत्रिकाओं ने हिन्दी पाठकों को साहित्य व समाज को दिशा प्रदान की। इन्टरनेट पर भी अब साहित्यिक पत्रिकाएं निकल रही हैं।

कानपुर से पधारे श्री कृष्ण बिहारी त्रिपाठी ने

कहा- 'पत्रकारिता समाज की समस्याओं को उजागर करती है। पत्रकार भी एक कहानीकार होता है। समाचार की रोचकता पत्रकार ही बनाता है। साहित्य, कथा, उपन्यास, आत्मकथा, जीवनी के माध्यम से लेखक समाज की दशा को दर्शाता है। साहित्यिक पत्रकारिता श्रम साध्य है। वर्तमान में हिन्दी पाठकों की संख्या कम होती जा रही है। यह एक विचारणीय विषय है। परन्तु आशा है कि भविष्य में एक बार फिर पत्रिकाओं का युग पुनः आयेगा, पाठक पढ़ेगा।

नालन्दा से पधारे डॉ0 विजय कर्ण ने कहा - 'साहित्यिक पत्रिकाएं आर्थिक समस्याओं से संघर्ष करती रही हैं। साहित्यिक पत्रकारिता देश की भाषा व साहित्य

को समृद्ध बनाती है। परिवार में पत्र-पत्रिकाओं के संचयन से पढ़ने की परम्परा बनाये रखने में सहायता मिलती है। पत्रिकाओं में संस्कार पर आधारित सामग्री होनी चाहिए। पत्रकारिता को मिशन के रूप में अपनाना होगा। विचारधारा परक पत्रिका अपने देशकाल के अनुरूप होनी चाहिए। सामाचार पत्रकारिता जन सामान्य के लोक मत का निर्माण करती है। लेखन संस्कार परक होना चाहिए। पत्रिका को अपने मूल तत्व से भटकना नहीं चाहिए।'

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

संगोष्ठी के द्वितीय दिवस 31 मई, 2023 को सम्माननीय अतिथि डॉ0 राममोहन पाठक, श्री योगीन्द्र

द्विवेदी, डॉ0 रामबहादुर मिश्र, श्री अशोक बनर्जी, श्री शिवदयाल, डॉ0 दिनेश पाठक 'शशि', श्री समीर गांगुली का उत्तरीय द्वारा स्वागत डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया।

'आधुनिक संदर्भ में साहित्यिक पत्रिकाओं का महत्व' विषय पर केन्द्रित तृतीय सत्र में श्री अशोक बनर्जी ने कहा- 'साहित्य और संस्कृति एक दूसरे के पूरक हैं। सांस्कृतिक क्षेत्र की पत्रिकाएं सामाजिक चेतना को जागृति करती हैं। पत्रिकाएं सामाजिक गतिविधियों को जनसामान्य के मध्य प्रचारित-प्रसारित करती हैं। यह विचारणीय विन्दु है कि अधिकांश साहित्यिक पत्रिकाएं बंद हो गयीं। पत्रिका की कलात्मकता उसको शिखर पर पहुंचाती है। प्रकाशित होने वाली सांस्कृतिक पत्रिकाओं का संग्रह एवं सूचीवद्ध किये जाने की आवश्यकता है।

किसी देश-प्रदेश की पहचान सांस्कृतिक पत्रिकाओं के माध्यम से होती है। 'कल्याण' तथा 'अखण्ड ज्योति' जैसी पत्रिकाएं समाज में आध्यात्मिक संदेश देने में तत्पर हैं।

बाराबंकी से पधारे डॉ0 रामबहादुर मिश्र ने कहा- 'हिन्दी पत्रकारिता में 'सरस्वती' पत्रिका का स्थान सर्वोपरि रहा है। पत्रिकारिता व साहित्य के क्षेत्र में लोकभाषाओं में प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं को प्रमुख स्थान मिलना चाहिए। अवधी जैसी लोक भाषा के व्यापक प्रचार-प्रसार की आज आवश्यकता है। अवधी भाषा अपने संघर्षकाल में चल रही है। पत्रिकाओं का

प्रकाशन श्रम साध्य है।'

श्री योगीन्द्र द्विवेदी ने कहा- 'साहित्य समाज के आगे चलने वाली मशाल होता है साहित्य और पत्रकारिता की एक दूसरे को पूर्ण करने में सदैव महत्वपूर्ण भूमिका रही है। पत्रकारिता एक मिशन है। लोकभाषा के मंगल में ही हमारी भारतीयता को पहचान मिलती है। एक भाषा समृद्ध तभी बन पाती है जब वह अन्य भाषाओं को अपने में समाहित कर सके। जनभाषा को भी वर्तमान में पूरा समादर मिलना चाहिए। पत्रकारिता के बिना साहित्य का मूल्यांकन कर पाना संभव नहीं हो सकता है। साहित्यिक पत्रिकाओं में सामाजिक बदलाव लाने की क्षमता है। समाज को आगे बढ़ाने व समाज की चुनौतियों का समाधान करने में साहित्यिक पत्रकारिता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

वाराणसी से पधारे डा0 राममोहन पाठक ने कहा- 'उदन्त मार्तण्ड' की पत्रकारिता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। साहित्य और पत्रकारिता एक सिक्के के दो पहलू हैं। एक मूल्य है तो दूसरा प्रतीक है। हिन्दी को अंग्रेजी भाषा से काफी संघर्ष करना पड़ा है। धीरे-धीरे हिन्दी अब संपर्क भाषा बनती जा रही है। हिन्दी भाषा में एक आन्तरिकशक्ति हैं। आज मीडिया ने समाचारों को विस्तार दिया है। साहित्यिक पत्रकारिता के समक्ष उसको आज विश्वस्तर पर स्थापित किए जाने में 'धर्मयुग' 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' जैसी पत्रिकाएं पाठकों के मध्य चर्चित रही हैं-

छोटी-छोटी पत्रिकाओं का भी साहित्यिक क्षेत्रों में प्रमुख स्थान रहा है। फिल्मों में भी साहित्य व भाषा भरपूर है। साहित्यिक पत्रिकाओं को एकजुट किये जाने की आवश्यकता है। पत्रिकाओं के लिए संघर्ष काल चल रहा है।'

'आधुनिक संदर्भ में बाल पत्रिकाओं का महत्व' विषय पर केन्द्रित चतुर्थ सत्र में मुम्बई से पधारे श्री समीर गांगुली ने कहा- 'बाल पाठक, बाल पत्रिकाओं को जिज्ञासा को पूर्ण करने का माध्यम मानते रहे हैं। बाल पत्रिकाओं ने बालमन को प्रभावित किया है। बाल साहित्य का भविष्य सुखद है। बाल साहित्य लेखक यदि अच्छा पाठक है तो वह बढ़िया लेखन कर सकता है। बाल साहित्य को आज युवा लेखकों की आवश्यकता है। बाल साहित्यकारों को समाज के विभिन्न क्षेत्रों से आना

चाहिए। बाल साहित्यकारों को हमेशा देश दुनिया की जानकारियों से स्वयं को परिमार्जित करते रहना चाहिए। वर्तमान में अच्छा बाल लेखन बहुत उपेक्षित दिखायी देता है। लेखक के पास लिखने का दृष्टिकोण होना चाहिए। फिर भी बाल साहित्य का भविष्य उज्ज्वल है ।

मथुरा से पधारे डॉ0 दिनेश पाठक 'शशि' ने कहा- 'आज तकनीकीकरण से मानव जीवन काफी व्यस्त हो गया है। आधुनिक संदर्भ में बाल पत्रिकाओं की काफी महत्वपूर्ण भूमिका है। बाल कहानियों में पुराण, वेद, पंचतंत्र से उद्धरणों को लिया गया है। बालकों का मन कोरा कागज सरीखा होता है। बचपन की बच्चों के

जीवन में नींव की ईंट की भूमिका होती है। बाल कहानियों से बालक देश प्रेम, नैतिकता का पाठ पढ़ता है। बाल पत्रिकाओं ने बच्चों के लिए मनोरंजनात्मक एवं नैतिक निर्माण में अपना स्थान बनाया। आज बाल साहित्य पत्रिकाओं की आवश्यकता समाज में अपरिहार्य होती जा रही है ।

पटना से पधारे श्री शिवदयाल ने कहा- 'भारत कथाओं, महाकाव्यों का देश रहा है। बाल लेखन में द्वन्द्व की स्थिति बनी हुई है। बाल साहित्य में परिमार्जन प्रक्रिया सतत चलती रहती है। हमारा विविधवर्णी समाज है। लेखक को आने वाली पीढ़ी पर सदैव अपनी छाप छोड़नी चाहिए। वर्तमान में बच्चों के लिए लिखने वाले साहित्यकारों की पीढ़ी सीमित होती जा रही है। एक स्थापित लेखक बाल साहित्य लेखन में संकोच करने लगा है। बाल लेखन करना बहुत बड़ा काम होता है।

सुश्री सौम्या मिश्रा ने डॉ0 क्षमा शर्मा द्वारा भेजे गये आलेख को पढ़ा।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद के संयुक्त तत्वावधान में त्रिदिवसीय संगोष्ठी, 9, 10 व 11 जून, 2023, वाराणसी

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद के संयुक्त तत्वावधान में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,

वाराणसी के मालवीय मूल्य अनुशीलन केन्द्र के सभागार में त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन 9, 10 व 11 जून, 2023, को किया गया। 'संत कविता में मानव धर्मः कबीर से कीनाराम तक' विषय पर केन्द्रित इस संगोष्ठी में डॉ0 संध्या सिंह, सिंगापुर, डॉ0 संजय कुमार अलंग, रायपुर, डॉ0 चन्द्रभान सिंह यादव, मुरादाबाद, डॉ0 कृष्ण कुमार सिंह, वर्धा, डॉ0 सत्यकाम, नई दिल्ली, डॉ0 शंभुनाथ सिंह, कोलकाता, डॉ0 अरुणाभ सौरभ, भोपाल, डॉ0 अम्बरीश त्रिपाठी, छत्तीसगढ़, श्री गोपेश्वर सिंह, गाजियाबाद, श्री बृजराज सिंह, आगरा, डॉ0 पुनीत कुमार राय, छत्तीसगढ़, डॉ0 रवीन्द्र कुमार यादव, छत्तीसगढ़, डॉ0 अवधेश प्रधान, डॉ0 उदय प्रताप सिंह,

डॉ0 चौथीराम यादव, डॉ0 सदानन्द शाही सहित अनेक साहित्यकारों विद्वानों ने प्रतिभाग किया।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की प्रधान सम्पादक डॉ0 अमिता दुबे ने संस्थान का परिचय एवं संस्थान द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं पर प्रकाश डाला। संस्थान के प्रधान सहायक श्री रामजनम दिवाकर ने भी प्रतिभाग किया।

कार्यक्रम में शोधार्थियों, विद्यार्थियों द्वारा भी बड़ी संख्या में उपस्थित होकर समारोह को सफल बनाने में सहयोग दिया गया।

इस अवसर पर डॉ0 विधि नागर के निर्देशन में कबीर के जीवन पर केन्द्रित नृत्य प्रस्तुति भी की गयी।

बालकृष्ण भट्ट, हजारी प्रसाद द्विवेदी, शिव सिंह सरोज, नागार्जुन, विष्णु प्रभाकर, आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री स्मृति समारोह, 14 व 15 जून, 2023

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा बालकृष्ण भट्ट, हजारी प्रसाद द्विवेदी, शिव सिंह सरोज, नागार्जुन, विष्णु प्रभाकर, आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री की स्मृति में 14 व 15 जून, 2023 को दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का

आयोजन हिन्दी भवन के निराला सभागार लखनऊ में पूर्वाह्न 10.30 बजे से किया गया।

सम्माननीय अतिथि डॉ0 विद्याविन्दु सिंह, डॉ0 अवधेश शुक्ल, डॉ0 गायत्री सिंह का उत्तरीय द्वारा स्वागत **डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक** उत्तर प्रदेश

हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया।

प्रथम दिवस जो बालकृष्ण भट्ट, हजारी प्रसाद द्विवेदी, शिव सिंह सरोज को समर्पित था, में कानपुर से पधारीं डॉ0 गायत्री सिंह ने कहा- 'बालकृष्ण भट्ट साहित्य सेवी के साथ-साथ वे एक समाज सेवी थे। उन्होंने 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका का काफी समय तक संपादन किया। उन्होंने हिन्दी गद्य को विकसित करने का कार्य किया। भट्ट जी ने छोटे-छोटे लेखों, निबंधों की रचना की। वे वैज्ञानिक प्रगति के समर्थक थे। उन्होंने जागरुक समाज की परिकल्पना की थी। वे आडम्बर के खिलाफ थे। वे साहित्य में क्रांतिकारी विचारधारा के पक्षधर थे। जहाँ शस्त्र कमजोर पड़ जाते हैं वहाँ शास्त्र काम आता है। वे कलम के सिपाही थे। उन्होंने भूगर्भ विज्ञान, पदार्थ विज्ञान पर भी अपनी लेखनी चलायी।

उन्होंने मनोविश्लेषणात्मक निबंधों में 'सुख क्या है' को लिखा। 'सच्ची कविता' उनके प्रमुख लेखों में से एक है। भट्ट जी के राजनीतिक प्रेरक श्री बाल गंगाधर तिलक थे।

वर्धा से पधारे डॉ0 अवधेश शुक्ल ने कहा - आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के प्रिय कवियों में कालिदास प्रमुख थे। द्विवेदी जी का व्यक्तित्व विराट था।

निर्भीकता उनकी प्रमुख विशेषता रही। मनसा, वाचा, कर्मणा से प्रबुद्ध साहित्यकार थे। हिन्दी साहित्य की भूमिका उनकी प्रमुख रचनाओं में से है। द्विवेदी जी मानवतावादी आलोचक थे। उनके भाषा एवं साहित्य में उनका पूरा व्यक्तित्व परिलक्षित होता है। वे एक ललित निबंधकार थे। 'अशोक के फूल' 'कुटज' निबंधों में लालित्य शैली का गुण दिखायी पड़ता है। द्विवेदी जी की रचनाओं में जीवन के प्रति आशा प्रवाहित होती है। जीवन का लक्ष्य उत्तम होना चाहिए। कर्म मनुष्य को उच्चतर लक्ष्य की ओर ले जाता है। जीवन पलायनवादी नहीं होना चाहिए। उनकी भाषा प्रवाहमान है। द्विवेदी जी की 'सूर साहित्य व कबीर' रचना उनकी प्रमुख रचनाओं में से एक है।

सम्माननीय अतिथि डॉ0 विद्याविन्दु सिंह ने कहा- 'श्री शिव सिंह सरोज को सभी रचनात्मक विधाओं में महारथ थी। उनकी रचनाओं के अध्ययन से यह पता चलता है कि वे कितना संघर्षशील रहे। केवल लिखना ही काफी नहीं होता है बल्कि जो लिखा जाये वो समाज को दिशा प्रदान करे। विश्वामित्र सनातन, वीरवर लक्ष्मण, लक्ष्मणपुरी उनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में से हैं। शिव सिंह सरोज की विश्वामित्र सनातन, रचना में ऋषि के बारे में एक सुन्दर चित्रण मिलता है। शिव सिंह सरोज की रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना के तत्व मिलते हैं। उनका पत्रकारिता व सम्पादन का क्षेत्र लोक भावना व सांस्कृतिक चेतना से ओत-प्रोत है। शिव सिंह सरोज अखबारों के सम्पादक भी रहे।

शोधार्थियों/विद्यार्थियों में सुश्री निकता कुशवाहा ने- नार्गजुन, नेहा निषाद ने-शिव सिंह सरोज, शिवानी गुप्ता ने- बालकृष्ण भट्ट, प्रतिमा यादव ने- हजारी प्रसाद द्विवेदी, खुशी सखूजा ने- विष्णु प्रभाकर व

शिवम द्विवेदी ने- आचार्य विष्णुकांत शास्त्री की रचनाओं के अंशों का पाठ किया।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0

हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

द्वितीय दिवस जो नागार्जन, विष्णु प्रभाकर एवं विष्णुकान्त शास्त्री की स्मृति को समर्पित था में

सम्माननीय अतिथि डॉ0 प्रेमशंकर त्रिपाठी, डॉ0 सुधीर प्रताप सिंह, डॉ0 ओंकारनाथ द्विवेदी का उत्तरीय द्वारा स्वागत डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया ।

सुल्तानपुर से पधारे डॉ0 ओंकारनाथ द्विवेदी ने कहा – 'विष्णु प्रभाकर का जीवन आर्थिक विषमताओं से भरा हुआ था। प्रभाकर जी ने अपनी साहित्यिक यात्रा काव्य से की थी। उनका व्यक्तित्व काफी प्रेरक था। 'आवारा मसीहा' ने विष्णु प्रभाकर जी की विश्वस्तर पर पहचान दिलाई। वे महान नाटककार, उपन्यासकार, कहानीकार, बालरचनाकार, जीवनीकार, निबंधकार थे। उनकी प्रत्येक रचना अपनी पूर्णता को प्राप्त करती है। वे अपने को मूलतः कहानीकार मानते थे। 'अर्द्धनारीश्वर' उपन्यास में नारी के सम्पूर्ण चरित्र का चित्रण मिलता है। विष्णु प्रभाकर का पूरा कृतित्व नारी जीवन के उज्ज्वल पक्ष को परिभाषित करता है।

दिल्ली से पधारे डॉ0 सुधीर प्रताप सिंह ने कहा– 'नागार्जुन जी ने प्रकृति प्रेम को आधार बनाकर अपनी काव्य रचनाएं कीं। वे एक राजनीतिक व्यंग्यकार के रूप में अधिक चर्चित रहे। उनकी रचनाओं में लोक संस्कृति के तत्व विद्यमान हैं। रामविलास शर्मा के शब्दों में 'नागार्जुन जितने सचेत रूप से क्रांतिकारी थे उतने ही अचेत रूप से भी क्रांतिकारी थे।'' वे अपनी कृतियों में जनगीतों का प्रयोग करते हुए भावों को प्रकट करते हैं। वे पूंजीवादी व्यवस्था पर अपने काव्यों में करारा प्रहार करते हैं।

कोलकाता से पधारे डॉ0 प्रेमशंकर त्रिपाठी ने कहा– 'आचार्य विष्णुकांत शास्त्री जी का व्यक्तित्व काफी सहज था। शास्त्री जी ने बाबा नागार्जुन के अनेक रोचक

संस्मरणों को लिखा है। शास्त्री जी विद्वता के विरल व्यक्ति थे। उनकी आंखों से शुभाशीष की निर्झरणी सदैव बहती रहती थी। नागार्जुन की कविताओं का शास्त्री जी बड़े भाव के साथ पाठ करते थे। शास्त्री जी पत्र लेखन के माध्यम से एक महान साहित्यकार बने रहे। वे अपने

जीवन के अंतिम क्षणों तक डायरी लेखन करते रहे। वे विनम्रता की सार्थक प्रतिमूर्ति थे। रिपोतार्ज लेखन में उन्होंने अपनी एक नयी पहचान बनायी।

श्री ओमप्रकाश मिश्र, कोलकाता द्वारा नागार्जुन की 'उन्हे प्रमाण', 'कालिदास सच-सच बतलाना', 'अकाल और उसके बाद' कविताओं का सस्वर गायन किया गया साथ ही आचार्य विष्णुकांत शास्त्री की चतुष्पदियों' से प्रारम्भ करते हुए' 'तुमको क्या जादू आता है' 'आ गया है कौन सहसा', 'इस तरह चुपचाप' की मनमोहक प्रस्तुति हुई। श्री मिश्र द्वारा त्रिलोचन शास्त्री की ग़ज़ल 'बिस्तरा है न चारपाई का भी गायन किया गया। तबले पर श्री सुरंजीत राय व गिटार पर अप्रतिम मिश्र ने सहयोग किया।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया । इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

इस अवसर पर संस्थान द्वारा प्रकाशित एवं सुश्री मिथिलेश तिवारी द्वारा तैयार की गयी पुस्तक 'स्वर से स्वराज' का लोकार्पण भी हुआ ।

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, बाल साहित्य संस्थान अल्मोड़ा के संयुक्त तत्वावधान में कौसानी में दो दिवसीय संगोष्ठी 29, 30 जून, 2023

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, बाल साहित्य संस्थान अल्मोड़ा के संयुक्त तत्वावधान में 29, 30 जून, 2023 को अनासक्ति आश्रम कौसानी में दो दिवसीय बाल साहित्य संगोष्ठी का आयोजन किया गया संगोष्ठी में आमंत्रित वक्ताओं ने कहा 'बालसाहित्य लिखा तो बहुत जा रहा है परंतु इसे बच्चों तक पहुंचाना चुनौतीपूर्ण कार्य है। बच्चों के लिए लिखते समय बाल मनोविज्ञान को समझा जाना जरूरी है। आज के बच्चे कोरी कल्पना के बजाय यथार्थ में जीना चाहते हैं। इसलिए बच्चों को कल्पना व यथार्थ दोनों पक्षों से जोड़ा जाए। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक श्री आर0पी0 सिंह ने कार्यक्रम को सम्बोधित किया।

समापन समारोह की अध्यक्षता वरिष्ठ बालसाहित्यकार रमेश चंद्र पंत ने की । दून साइंस फोरम देहरादून के विजय भट्ट, वरिष्ठ पत्रकार लक्ष्मी

प्रसाद बडौनी, भारत ज्ञान विज्ञान समिति के प्रांतीय महासचिव एस एस रावत, वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ0 डी एस रावत, के पी एस अधिकारी, देवेंद्र ओली, मोहनलाल टम्टा आदि ने बालसाहित्य के विभिन्न पक्षों पर अपनी बात रखी। संचालन डॉ0 मंजू पांडे 'उदिता' व विमला जोशी 'विभा' ने किया। एडवोकेट कृष्ण सिंह बिष्ट ने कौसानी में संगोष्ठी रखने के लिए उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का आभार व्यक्त किया। प्रारंभ में बालप्रहरी के संपादक एवं बाल साहित्य संस्थान अल्मोड़ा के सचिव उदय किरौला ने सभी का स्वागत किया। समारोह के अंत में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान की प्रधान संपादक डॉ0 अमिता दुबे ने सभी का आभार व्यक्त किया ।

दो दिवसीय संगोष्ठी में अल्मोड़ा बागेश्वर, नैनीताल पिथौरागढ़, चंपावत, ऊधमसिंहनगर, उत्तरकाशी, पौड़ी, चमोली, हरिद्वार, रुद्रप्रयाग, देहरादून के अनेक साहित्यकारों ने प्रतिभाग किया। संस्थान के वरिष्ठ सहायक की श्याम कृष्ण सक्सेना ने भी प्रतिभाग किया।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक के संयुक्त तत्तवाधान में तीन दिवसीय संगोष्ठी दिनांक - 18, 19 व 20 जुलाई, 2023,

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक के संयुक्त तत्तवाधान में तीन दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन दिनांक - 18, 19 व 20 जुलाई 2023 को किया गया। 'साहित्य समाज और संस्कृति' विषय पर केन्द्रित इस संगोष्ठी में डॉ0 मिथिला प्रसाद त्रिपाठी, इन्दौर, डॉ0

विकास दवे, इन्दौर, श्रीमती कुसुमलता सिंह, दिल्ली, डॉ0 मीनू पाण्डेय, भोपाल, डॉ0 नीलमणि दुबे, शहडोल, प्रो0 केशरी लाल वर्मा, मुम्बई, श्री युगांक सिंह, लालपुर, प्रो0 दिलीप सिंह, लालपुर, डॉ0 अर्चना श्रीवास्तव, प्रो0 कृष्णा सिंह, प्रो0 मनीषा शर्मा, प्रो0 रेनू सिंह, डॉ0 गोविन्द प्रसाद मिश्रा, प्रो0 विष्णुनारायण मिश्रा, डॉ0 पूनम पाण्डे, डॉ0 प्रवीण कुमार, डॉ0 वीरेन्द्र प्रताप, डॉ0 ब्योमकेश त्रिपाठी, अमरकंटक सहित अनेक साहित्यकारों, विद्वानों ने प्रतिभाग किया।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की प्रधान सम्पादक डॉ0 अमिता दुबे ने संस्थान का परिचय एवं संस्थान

द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं पर प्रकाश डाला। संस्थान के वरिष्ठ सहायक श्री श्याम कृष्ण सक्सेना ने भी प्रतिभाग किया।

इस अवसर पर शोधार्थियों, विद्यार्थियों द्वारा भी बड़ी संख्या में उपस्थित होकर समारोह को सफल बनाने में सहयोग दिया गया।

'हिन्दी साहित्य में संत परम्परा विषय पर संगोष्ठी 25 व 26 जुलाई 2023

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा आचार्य परशुराम चतुर्वेदी स्मृति समारोह का अयोजन 25 व 26 जुलाई, 2023 को हिन्दी भवन के निराला सभागार लखनऊ में पूर्वाहन 10.30 बजे से किया गया।

सम्माननीय अतिथि डॉ0 सूर्यप्रसाद दीक्षित, डॉ0 हरिशंकर मिश्र, डॉ0 सुधाकर अदीब, डॉ0 उमापति दीक्षित, श्री असित चतुर्वेदी का उत्तरीय द्वारा स्वागत श्री आर0पी0सिंह, निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया।

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी जी के पौत्र श्री असित चतुर्वेदी ने कहा- 'मैंने 1994 में आचार्य परशुराम चतुर्वेदी स्मारक समिति का गठन किया, जिसके अन्तर्गत लखनऊ व बलिया में वर्ष में एक कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। साहित्य अकादमी, दिल्ली ने आचार्य परशुराम चतुर्वेदी पर पुस्तक का प्रकाशन किया है। मेरा प्रयास है कि आचार्य जी के छूटे साहित्य का प्रकाशन ई-बुक के माध्यम से किया जाय। साथ ही एक ई-लाइब्रेरी तैयार की जाए, जिसके आचार्य जी के साहित्य का प्रदर्शित किया जाए।

आगरा से पधारें डॉ0 उमापति दीक्षित ने कहा- 'मैं तुलसी का उपासक हूँ। बार-बार हम लोग संत साहित्य को याद करते हैं लेकिन उसके किसी भी वाक्य को जीवन में निवर्हन नहीं करते। रीढ़ की हड्डी की तरह

अगर कोई व्यक्ति है तो उसकी कथनी और करनी में फर्क नहीं होता। संतों में जो बेबाकीपन होता है वह एक नारियल की तरह होता है, जो ऊपर कठोर और अंदर से कोमल होता है। इस तरह के भाव कबीर की रचनाओं में दिखायी देते हैं। रैदास ने जीव को परमात्मा का अंश माना है। रैदास का मानना है कि बिना अच्छे लोगों का साथ किए उनके आचरण को आत्मसात नहीं किया जा सकता। बिना भाव के भक्ति नहीं होती। हम किसी भी परीक्षा का त्वरित परिणाम चाहते हैं। कबीर व रैदास दोनों संत अनपढ़ थे लेकिन सतसंग का प्रभाव उन पर पड़ा। कबीर ने गुरु को गोविन्द से भी ऊपर

माना है। रैदास और कबीर की तुलना की जाय तो वह कमल की तरह हैं जो कीचड़ में खिलता है और देवता के सर पर विराजता है। वे दोनों ऐसा समाज चाहते हैं, जिसमें भेदभाव न हो और सभी एक समान हों ।

डॉ0 सुधाकर अदीब ने कहा- 'आचार्य परशुराम चतुर्वेदी जी जैसे संत सदियों में कहीं दो-चार हुआ करते हैं। संत साहित्य पर जिस तरह उन्होंने कार्य

किया उस प्रकार वह स्वयं संतों की श्रेणी में आ जाते हैं। मीरा जी काफी आत्मस्वाभिमानी थीं। मीरा जी पहला पति कृष्ण को मानती थीं। विवाह के उपरान्त कुल देवी के दर्शन के लिए कहा गया, जहां पर बकरे की बलि होती थी, मीरा ने मंदिर जाने को मना कर दिया। सात वर्ष के दाम्पत्य जीवन के बाद मीरा के पति का स्वर्गवास हो गया। इसके उपरान्त उन्हें सती होने के लिए कहा गया, जिसका उन्होंने विरोध किया।

डॉ0 हरिशंकर मिश्र ने कहा- 'यह सत्य है कि अपने पूर्वजों के प्रति जिन लोगों का स्नेह हैं उन्हें यश कीर्ति की प्राप्ति होती है। आयु, विद्या, यश व बल चार चीजें मनुष्य को पितरों की वजह से प्राप्त होती हैं। हमें अपने पितरों के अवदान को रेखांकित करने के लिए हमेशा तत्पर रहना चाहिए। पुस्तक लेखन में डॉ0 अमिता दुबे जी ने मुझे बहुत सहयोग किया, उन्हीं के प्रयासों से यह पुस्तक लिखना सफल हो सका। आचार्य जी के जीवन को जानने-समझने वाले बहुत लोग हैं, जो उन्हें पढ़ना चाहते हैं। मैंने आचार्य जी के जीवन चरित्र से लेकर उनके अवदान तक को इस पुस्तक में समेटा है। आचार्य जी का व्यक्तित्व बहुत व्यापक है। वे किसी विसंगति को स्वीकार नहीं करते थे। वे न तो भ्रमित होते थे और न ही किसी को भ्रमित करते थे। इस अवसर पर संस्थान द्वारा संचालित स्मृति संरक्षण योजना के अन्तर्गत डॉ0 हरिशंकर मिश्र द्वारा तैयार की गयी पुस्तक आचार्य परशुराम चतुर्वेदी' का लोकार्पण भी हुआ।

डॉ0 सूर्यप्रसाद दीक्षित ने कहा- 'आचार्य जी की 130वीं जयन्ती के अवसर पर सभी को शुभकामनाएं। आचार्य जी तुलसीदास जी को संत माना। जिसको अपने अस्तित्व का बोध हो जाता है वह संत हो जाता है। संत शब्द का पहला प्रयोग सर जार्ज ग्रियर्सन ने किया। रैदास सगुण व निर्गुण उपासक थे। कबीर कहते हैं कि ईश्वर सूक्ष्म रूप में घट-घट में विद्यमान है। संत निरंजन ग्रंथ में आधे में सगुण और आधे में निर्गुण उपासक की बात कही गयी है। हर सम्प्रदाय में उपसम्प्रदाय बने हुए हैं।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया। इस अवसर पर आचार्य परशुराम चतुर्वेदी की पुत्रियाँ श्रीमती आशा पांडे व श्रीमती शांति तिवारी, पौत्रवधू डॉ0 कणिका चतुर्वेदी व श्रीमती चारू चतुर्वेदी, पौत्र डॉ0

अजित कुमार चतुर्वेदी, श्री सुधीर चतुर्वेदी, श्री राजीव चतुर्वेदी, पौत्री डॉ0 साधना पांडे, श्रीमती अर्चना दुबे, श्रीमती मालती पांडे व श्रीमती कांति ओझा विशेष रूप से उपस्थित थीं।

द्वितीय दिवस को सम्माननीय अतिथि डॉ0 अहिल्या मिश्र, डॉ0 सुमनलता रुद्रावझला, डॉ0 जशभाई पटेल, डॉ0 सोमा बन्द्योपाध्याय, डॉ0 मनोज कुमार पाण्डेय का उत्तरीय द्वारा स्वागत श्री आर0पी0सिंह, निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया।

नागपुर से पधारे डॉ0 मनोज कुमार पाण्डेय ने कहा- 'भारत संतों की धरती है। संत साहित्य की व्यापकता उसकी सहज मानवता है। संत साहित्य की शुरुआत तनाव व संघर्ष से होती है। संत साहित्य की शुरुआत ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी से मानी जाती है। नाथ सम्प्रदायों ने संत साहित्य को आगे बढ़ाने में बड़ी भूमिका निभायी। संत नामदेव उसे संत मानते हैं- जो सभी प्राणियों में परमात्मा को देखता है, जिसकी वाणी सदा भगवान का नाम लेती रहती है। संत समाज को संकट से उबारने का कार्य करता है। संत सत्य का आराधक हुआ करते हैं ।

कोलकाता से पधारी डॉ0 सोमा बन्द्योपाध्याय ने कहा- 'मनुष्य होने के लिए उसमें मनुष्यता का गुण होना चाहिए। मानवता को जो राह दिखाये। वही संत होता है। बांग्ला संत साहित्य का उद्देश्य मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने का कार्य करता है। बंगाल में चौतन्य महाप्रभु का स्थान संतों में प्रमुखता से लिया जाता है। वैष्णव धर्म में राधाकृष्ण के अलौकिक प्रेम की व्याख्या की गयी है। चंडीदास ने अपने साहित्य में राधा के चरित्र का व उनका श्रीकृष्ण के प्रति प्रेमाभाव का सुन्दर चित्रण किया है। चंडीदास की कृतियों में राधा एक नायिका के रूप में उपस्थित हैं। रामकृष्ण परमहंस सर्व-धर्म समन्वय में विश्वास करते थे। वे एक ऐसे गुरु थे, जिनको ख्याति उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द से मिली।

गांधीनगर से पधारे डॉ0 जशभाई पटेल ने- गुजराती साहित्य में संत परम्परा पर बोलते हुए कहा- 'संत किसी की निन्दा नहीं करता है। नरसी मेहता कृष्ण भक्ति में हमेशा लीन रहते थे। कृष्ण भक्ति काव्य में नरसी मेहता का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जशभाई पटेल ने नरसी मेहता की रचित संतवाणी का भी पाठ किया।

हैदराबाद से पधारी डॉ0 सुमनलता रुद्रावझला ने तेलगु साहित्य में संत साहित्य परम्परा पर बोलते हुए कहा- 'संत वह होता है जो अपनी वाणी को अनहद

नाद तक ले जाता है। एकोअहम से अहम ब्रहास्मि तक स्वयं को ले जाता है। हर कवि संत नहीं होता है। लेकिन हर संत हमेशा कवि होता है। रामानुचार्य जी का नाम संतों में प्रमुखता से लिया जाता है। भारतीय संस्कृति मानवतावादी दृष्टिकोणों से भरी है। संत कवि अपने नाद को बहुत अच्छी से समझता है।

हैदराबाद से पधारीं डॉ0 अहिल्या मिश्र ने कहा- 'मिथिला में ज्ञान संवाद - विवाद की परम्परा बड़ी प्राचीन रही है। ज्ञान व भक्ति की विचार धारा का जन्म

मिथिला प्रदेश से होते हुए आगे बढ़ी है। मिथिला संत परम्परा में सूफी परम्परा भी सम्मिलित होती गयी। संत साहित्य में साधना प्रधान रही है। विद्यापति की रचनाएं प्रेम से ओत-प्रोत हैं। उनकी रचनाएं प्रेम की पराकाष्ठा को प्राप्त करती हैं। विद्यापति का काव्य स्वरूप भक्तमय है। संत साहित्य में ज्ञान व भक्ति का सम्मिश्रण है।

इस अवसर पर श्री प्रदीप अली एवं सुश्री आकांक्षा सिंह द्वारा तुलसीदास, कबीरदास, रैदास, मीराबाई व नरसी मेहता की कविताओं की संगीतमय प्रस्तुति की गयी साथ में तबलावादक श्री नितीश भारती, गिटार वादक, श्री मनीष कुमार द्वारा सहयोग दिया गया।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्तवाधान में द्विदिवसीय संगोष्ठी दिनांक - 23, 24 अगस्त 2023, चित्रकूट

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं जगद्गुरु

रामभद्राचार्य दिव्यांग विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्तवाधान में अष्टावक सभागार, चित्रकूट में द्विदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन दिनांक- 23, 24 अगस्त 2023 को किया गया। 'हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता एवं मतवाला के सौ वर्ष' विषय पर केन्द्रित इस संगोष्ठी में प्रो. कपिल देव मिश्रा, जबलपुर, प्रो. भरत मिश्र, सतना, श्री विक्रम मणि त्रिपाठी, नेपाल, डॉ0 रत्नेश कुमार, कानपुर देहात, डॉ0 आदर्श मिश्र, आजमगढ़, श्री अम्बिकेश त्रिपाठी, प्रतापगढ़, डॉ0 रमाशंकर शुक्ल, मीरजापुर, डॉ0 मिथिलेश कुमार त्रिपाठी, प्रतापगढ़, श्री सुरेन्द्र पाठक, लखनऊ, प्रो. सभापति मिश्र, प्रयागराज, श्री विनय

कुमार, बोधगया, डॉ0 राजकुमार आचार्य, रीवां, श्री रवि कुमार कुँवर, वाराणसी, श्री नितेश उपाध्याय, नई दिल्ली, श्री देवेन्द्र द्विवेदी, कौशाम्बी, डॉ0 प्रमिला मिश्र, डॉ0 विनोद कुमार मिश्र, श्री महेन्द्र कुमार उपाध्याय, डॉ0 किरन त्रिपाठी, चित्रकूट सहित अनेक साहित्यकारों, विद्वानों ने प्रतिभाग किया ।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की प्रधान सम्पादक डॉ0 अमिता दुबे ने संस्थान का परिचय एवं संस्थान द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं पर प्रकाश डाला। संस्थान के प्रधान सहायक श्री रामजनम दिवाकर ने भी

प्रतिभाग किया। इस अवसर पर शोधार्थियों, विद्यार्थियों द्वारा भी बड़ी संख्या में उपस्थित होकर समारोह को सफल बनाने में सहयोग दिया गया।

'हिन्दी दिवस समारोह', 13 व 14 सितम्बर, 2023

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा हिन्दी दिवस के शुभ अवसर पर 13 व 14 सितम्बर, 2023 को दो दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन हिन्दी भवन के निराला सभागार लखनऊ में पूर्वाहन 10.30 बजे से किया गया।

सम्माननीय अतिथि श्री विजयदत्त श्रीधर, डॉ0 मंगला अनुजा, डॉ0 योगेन्द्र प्रताप सिंह का उत्तरीय द्वारा स्वागत श्री आर0पी0सिंह, निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया। दीप प्रज्वलन, माँ सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण के उपरान्त कार्यक्रम में वाणी

वंदना श्री सर्वजीत सिंह मारवा द्वारा प्रस्तुत की गयी ।

डॉ0 योगेन्द्र प्रताप सिंह ने कहा- 'हिन्दी के विविध आयाम हैं। हिन्दी गद्य के विस्तार के साथ हिन्दी

भाषा की व्यापकता बढ़ती गयी। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी बिन्दु से परिधि की ओर अग्रसर हो रही है। हिन्दी की बढ़ती लोकप्रियता लोगों को अपनी ओर आकृष्ट कर रही है ।

भोपाल से पधारीं डॉ0 मंगला अनुजा ने कहा- 'साहित्य के क्षेत्र में भक्तिकालीन कवयित्रियों की महती भूमिका रही है भक्ति कालीन महिला रचनाकारों ने कृष्णभक्ति को केन्द्र बिन्दु में रखा। सुभद्रा कुमारी चौहान स्वाधीनता आन्दोलन में अपनी कलम से ज्वाला जगाने वाली रही हैं। महादेवी वर्मा नारी जागरण की पक्षधर रहीं हैं ।

भोपाल से पधारे श्री विजयदत्त श्रीधर ने कहा- 'पत्रकारिता को आम भाषा के माध्यम से जनसमुदाय के मध्य में जाना चाहिए। पत्रकारिता में जो लिखा जाये वह जनसामान्य के समझ में आनी चाहिए। हिन्दी गद्य के विकास में साहित्यिक पत्रकारिता की महान भूमिका रही है। आजादी के पहले व बाद की पत्रकारिता में काफी

अन्तर रहा है। नवजागरण व समाज सुधार की बात पत्रकारिता के केन्द्र बिन्दु में रही है।

शोधार्थियों/विद्यार्थियों में सुश्री खुशी सखूजा ने महाकवि सुब्रह्मण्य भारती के विचारो को पढ़ा। श्री शोभित द्विवेदी ने राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन के

विचारों को पढ़ा।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0

हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

द्वितीय दिवस के **सम्माननीय अतिथि** डॉ0 रामबहादुर मिश्र, डॉ सदानन्द शाही, डॉ0 उषा सिन्हा का स्मृति चिह्न भेंट कर स्वागत श्री आर0पी0 सिंह, निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा किया गया।

डॉ0 रामबहादुर मिश्र ने कहा- 'भारतीय बोलियों व भाषा को समृद्ध करने में विदेशी लेखकों, भाषाविदों का भी बहुत योगदान रहा है। भारत में अनेक बोलियाँ व उपबोलियों का समुच्य है। लोक साहित्य लोक

भावना से ओत-प्रोत है। बोलियाँ लोकसंस्कृति को बचाने में सहायक होती हैं ।

वाराणसी से पधारे डॉ0 सदानन्द शाही ने कहा- 'हमारे संतों ने कथनी और करनी में करनी को अधिक महत्व दिया। विश्वविद्यालयों से भी हिन्दी का विकास हुआ है। फिल्में भी हिन्दी का विश्व में प्रचार-प्रसार कर रही हैं। आज एक अखिल भारतीय छाप के साथ हिन्दी धीरे-धीरे बनती चली जा रही है। श्रमिक वर्ग पूरे विश्व में हिन्दी भाषा के संवाहक रहे हैं। हिन्दी के सम्मुख कोई खतरा नहीं है।

डॉ0 उषा सिन्हा ने कहा- 'आज की 14 सितम्बर की तिथि भारतीय साहित्य की ऐतिहासिक तिथि है। हिन्दी भारत के शुभ भाल की बिन्दी है। हिन्दी दिवस शपथ लेने का दिवस है। हिन्दी को रोजगार से जोड़ने की आवश्यकता है । हिन्दी भाषा विश्व जननी भाषा है। आज के दिन हमें बड़े उत्साह के साथ आगे बढ़ने की आवश्यकता है। भारत बहुभाषिकता का देश है। भारत की सभी भाषाएं एक कडी के रूप में जुड़ी हुई है। प्रत्येक भाषा अपनी शब्द-विचार सम्पदा है।

शोधार्थियों/विद्यार्थियों में श्री अर्पित जायसवाल ने महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा सुश्री शालिनी ने आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के लिखे विचारों के अंशों का पाठ किया।

डॉ0 अमिता दुबे, प्रधान सम्पादक, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस संगोष्ठी में उपस्थित समस्त साहित्यकारों, विद्वत्तजनों एवं मीडिया कर्मियों का आभार व्यक्त किया।

प्रगति के स्वर

-डॉ0 रामकुमार वर्मा

किसे पुराना तुम कहते हो, किसे कह सकोगे यह नव है,
जो नव है, वह भी तो गति के गत हो जाने का अवयव है।
लघु अंकुर की करुण कथा को
कब इन फूलों ने जाना है ?
अंधकार के अंतिम क्षण को
कब प्रकाश ने पहिचाना है ?
दोनों ही मिट गये कि जिससे
सुंदरता आगे बढ़ जाये,
वर्णहीन हो गये कि जिससे
स्वर्ण रंग कल पर चढ़ जाये ।
यह विनाश की नयी सृष्टि है, किंतु किसे इसका अनुभव है,
क्षण क्षण की है यही कहानी, क्षण क्षण का ही यह उत्सव है।
कैसी ऊँच-नीच की बातें ?
क्या है मानदंड इस जग का ?
यह तो वैसा ही कल्पित है
जैसे भयाक्रान्त पथ खग का ।
इसे समय भूलेगा हँस कर,
किंतु आज भी उसे याद है
वह क्षण, जबकि उसे राम ने
कंठ लगाया जो निषाद है।
कैसा कुल है, कौन जाति है, मानव की मुस्कान एक है,
चाहे स्वर धैवत-निषाद हो, किंतु प्रेम का गान एक है।

साहित्य भारती
वर्ष:27, अंक-1, जनवरी-मार्च, 2024 पंजीयन संख्या- 65194/96

साहित्य भारती

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं प्रबन्ध सम्पादक, निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा मौर्या इण्टरप्राइजेज, लखनऊ से मुद्रित तथा राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन, 6, महात्मा गांधी मार्ग, हजरतगंज, लखनऊ से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. अमिता दुबे
वेबसाइट : www.uphindisansthan.in **ई-मेल :** sahityabharti1976@gmail.com **दूरभाष : 0522-2614470**